जॉन फिलिप्स टीका श्रृंखला

रोमियों की पत्री की व्याख्या

जॉन फिलिप्स

के द्वारा

एक विवरणात्मक टीका

भूमिका

जब मुझसे इस पुस्तक के लिए भूमिका लिखने को कहा गया तो मेरी अकस्मात प्रतिक्रिया थी कि ''क्या रोमियों की पुस्तक पर कहने के लिए कुछ और नया हो सकता है?'' मुझे वे टिप्पणी करने वाले याद आने लगे जिनके विचारों को मैंने व्यक्त किया और जो मेरे लिए बड़ी आशीष का कारण रहे। मैं उनमें से कुछ नामों को याद कर पाता हूँ, जैसे गोडेट, मौली, वेस्टकोट, इरोनसाइड, तथा इत्यादि कई और।

जब मैंने इस पुस्तक को पढ़ना आरम्भ किया, तो मेरा ध्यान न केवल इसकी ठोस व नितान्त प्रचारकीय व्याख्या ने, बल्कि लेखक के द्वारा इस्तेमाल किये गये ऐसे उपयोगी उदाहरणों और दृष्टान्तों ने भी आकर्षित किया, जो कि वास्तव में सुसंगत हैं, जिससे ईश्वरीय ज्ञान व उसके प्रति किये जाने वाले आवश्यक कार्यों के अभ्यास को करने का जज़्बा आश्चर्यजनक तरीके से सजीव हो जाता है।

यह पुस्तक हर एक सेवक के लिए उसके पुस्तकालय की एक अति मूल्यवान व उल्लेखनीय, और ईश्वरीय ज्ञान की शिक्षा पाने वाले विद्यार्थियों के लिए अध्ययन के क्षेत्र में बहुत महत्वपूर्ण पुस्तक साबित होगी। रोमियों की पत्री को अधिकतर बाईबल में प्रस्तुत सम्पूर्ण सुसमाचार के विभिन्न पहलुओं को प्रगट

करने वाले संग्रह के रूप दर्शाया जाता है, और यह पुस्तक अनेकों व्यवहारिक और विचारात्मक खुलासों से भरपूर पुस्तक है। इस पुस्तक के भीतर हम सम्पूर्ण सुसमाचार के सन्देश के पूर्ण विषय के ह्रदय को बड़ी खूबसूरती के साथ प्रगट होते हुए पाते हैं। रोमियों 6–8 मात्र एक ईश्वरीय ज्ञान सम्बन्धी रणभूमि नहीं है, बल्कि यह पुस्तक जयवन्त जीवन के आधार को व्यक्त करती है, विशेष करके यीशु मसीह की मृत्यु और पुनरूत्थान में हमारी सहभागिता को लेकर।

इन दिनों में मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि हम में से कई लोग मसीही रूप में अधूरे उद्धार को पाकर ही सन्तुष्ट हो जाते हैं! हमें मसीह के द्वारा हमारे लिए क्रूस पर मृत्यु की सच्चाई को और हमारे सारे पापों की क्षमा के लिए उसके खून बहाने को स्वीकार करना तुलनात्मक तौर पर सहज जान पड़ता है, और हम इस तथ्य को जानकर और भी आनन्दित होते हैं कि जो कोई मसीह में है, उन पर कोई दण्ड की आज्ञा नहीं है (रोमियों 8:1)। फिर भी हमें यह विश्वास करने में कठिनाई होती है कि क्रूस न केवल हमारे भूतकाल की प्रार्थनाओं का जवाब नहीं देती और भविष्य के लिए आशा प्रदान नहीं करती, बल्कि बिना किसी अनिश्चितता से हमसे वर्तमान अर्थात् आज के दिन में छुटकारे के अनुभव करने की अपेक्षा करती है।

इसके बावजूद, यदि हम लगातार उन्हीं पापों में अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं तो हमारे पापों की क्षमा से हमें क्या लाभ है? कलवरी क्रूस पर मसीह की मृत्यु केवल आधी सच्चाई है; उसका दूसरा हिस्सा मसीह का उद्धार देने वाला जीवन, उसकी पवित्र आत्मा के द्वारा, हमारे भीतर उसके चरित्र का पुनर्उत्पादन करना तथा हमें पापों के सिद्धान्तों से छुटकारा देना है। क्रूस पर हमारे पापों को इसलिए क्षमा किया गया है ताकि हम भविष्य में उन पापों को करना बन्द कर दें! परमेश्वर की आत्मा के द्वारा, उसका अर्थात् मसीह का पुनरूत्थित जीवन हम में वास करता है, जिससे हमें वर्तमान पापों से छुटकारा प्राप्त होता है, ताकि हम भी उसके समान बन सकें – जिसका अर्थ, निश्चय ही, छुटकारे की असली व सम्पूर्ण योजना है।

पाठक इस पुस्तक में सन्देश को स्पष्ट रूप से व्यक्त होते हुए पाएगा। इसके अलावा वह यह भी महसूस करेगा कि इस प्रकार के अनुभवों में प्रवेश करने के लक्षण सुसमाचार के व्यवहारिक कार्यों में भी प्रदर्शित होना जरूरी हैं, और लेखक इन विषयों को इस पत्री के आगामी अध्यायों में बहुत ही सहायक रूप से प्रस्तुत करता है।

मसीही जीवनयापन करने हेतु दैनिक पुस्तक के रूप में, मेरे हिसाब से इस पुस्तक को मात देना मुश्किल है और मुझे निश्चय है कि जितने लोग इसे पढ़ेंगे, वे भी मेरी ही तरह आशीषित होंगे। यह पुस्तक वास्तव में इस योग्य है कि जिन अनिश्चित परिस्थितियों में आज बुनियादी मसीहीयत विद्यमान है, उसमें इसका बहुतायत से प्रचलन किया जाए।

एलन रेडपाथ

रोमियों की रूपरेखा

प्रस्तावना (1:1–18)

1. सुसमाचार का अभिप्राय (1:1–4)
2. सुसमाचार का सेवक (1:5–16)
3. सुसमाचार का सारांश (1:17–18)

I. सुसमाचार के सिद्धान्त (1:19–8:39)

क. पाप का प्रश्न (1:19–3:20)

1. अन्यजातियों का दोष (1:19–32)
2. कपटियों का दोष (2:1–16)
3. इब्रानियों का दोष (2:17–3:8)
4. मानवजाति का दोष (3:9–20)

ख. उद्धार का प्रश्न (3:21–5:21)

1. उद्धार मुफ्त है (3:21–31)
2. उद्धार विश्वास के द्वारा है (4:1–25)
3. उद्धार सदैव है (5:1–21)

ग. पवित्रिकरण का प्रश्न (6:1–8:39)

1. अर्जित की गई विजय का मार्ग (6:1–7:25)
    1. मृत्यु के अधिकार से छुटकारा (6:1–11)
    2. पाप की हुकुमत से छुटकारा (6:12–23)
    3. व्यवस्था की माँगों से छुटकारा (7:1–25)
2. अनुभव की गयी विजय का मार्ग (8:1–39)
    1. नई व्यवस्था (8:1–4)
    2. नया परमेश्वर (8:5–13)
    3. नया जीवन (8:14–39)

II. सुसमाचार की समस्या (9:1–11:36)

क. भूतकाल में परमेश्वर द्वारा इस्राएल से किया गया व्यवहार (9:1–33)

1. यहूदियों के प्रति पौलुस की वेदना (9:1–3)
2. यहूदियों की समस्याओं में पौलुस का विश्लेषण (9:4–33)

ख. वर्तमान में परमेश्वर द्वारा इस्राएल से व्यवहार (10:1–21)

1. उद्धारक के रूप में मसीह का प्रगट होना (10:1–4)
2. उद्धारक के रूप में मसीह का स्वीकार किया जाना (10:5–15)
3. उद्धारक के रूप में मसीह का अस्वीकार किया जाना (10:16–21)

ग. इस्राएल के साथ व्यवहार करने हेतु परमेश्वर की प्रतिज्ञा (11:1–36)

1. परमेश्वर के व्यवहार की शुद्धता (11:1–10)
2. परमेश्वर के व्यवहार की दूरदर्शिता (11:11–29)
3. परमेश्वर के व्यवहार की विश्वासयोग्यता (11:30–36)

III. सुसमाचार का अभ्यास (12:1–16:24)

क. मसीही जीवन के नियम (12:1–13:7)

I. मसीही की आत्मिक जीवन(12:1–13)

I. विश्वासी के रूप में एक मसीही (12:1–2)

II. एक भाई के रूप में एक मसीही (12:3–13)

I. मसीही का सामाजिक जीवन (12:14–21)

II. मसीही का व्यवहारिक जीवन (13:1–7)

ख. मसीही प्रेम के नियम (13:8–16:24)

1. प्रेम के नैतिक परिणाम (13:8–14)
2. प्रेम का दयापूर्ण आचरण (14:1–15:7)
3. प्रेम की परिपक्व निरूत्तरता (15:8–13)
4. प्रेम की मिशनरी चिन्ता (15:14–33)
5. प्रेम के अनेकों सम्पर्क (16:1–16)
6. प्रेम की शक्तिशाली विजय (16:17–20)
7. प्रेम की अद्‌भुत सहभागिता (16:21–24)

उपसंहार (16:25–27)

प्रस्तावना

''सारे रास्ते रोम में जाकर मिलते हैं।'' यह कहावत पौलुस के जमाने में काफी मशहूर थी। रोम के स्वर्णीय मील के पत्थर से महान राजमार्ग के स्पर्शक सारे संसार भर तक पहुँच गए। पौलुस रोम से सारे संसार तक पहुँच सका; यदि सारे मार्ग रोम की ओर अगुवाई करते हैं, तो निश्चय ही सारे मार्ग भी वहाँ से प्रारम्भ हुए। अतः समय और मसीही मिशन के इस महारथी ने पुनः ''रोम'' का नाम बड़े हियाव के साथ अपनी यात्रा योजना में सबसे ऊपर रखा। यद्यपि कुछ न कुछ रूकावट जरूर आयी, परन्तु वह मजबूती से अपने उद्देश्य में अग्रसर रहा। ''मुझे रोम देखना ही है,'' उसने कहा। ''मुझे रोम जाना ही है।''

और तब जब वह कुरिन्थ में था, पौलुस ने सुना कि फिबे, जो किंख्रिया की कलीसिया की एक सक्रिय विश्वासी थी, कैसरिया के शहर में दौरा करने की तैयारी कर रही थी। उसने उससे कहा कि ''फिबे, मैं रोम के सन्तों के लिए तेरी सिफारिश में एक पत्र लिखूँगा।''

और ठीक वैसा ही उसने किया भी। इससे पहले की वह लिखना बन्द कर देता, पौलुस अपने सर्वाधिक महत्वपूर्ण व ईश्वरीय ज्ञान सम्बन्धी उत्कृष्ट कृति अर्थात् रोमियों की पत्री को लिख चुका था। टिप्पणीकर्ता रेनन ने कुछ इस प्रकार से कहा कि जब फिबे कुरिन्थ से समुद्री यात्रा कर रही थी तो वह ''अपने कपड़ों के तहों के नीचे मसीही ईश्वरीय ज्ञान के सम्पूर्ण भविष्य अर्थात् थियोलोजी को अपने साथ लेकर चली थी।'' {1} वह बिल्कुल सही था।

रोमियों की पुस्तक पौलुस की अनुसार सुसमाचार है। बाईबल के चरित्रों पर लिखी गयी महान पुस्तक में, प्रचारकों का राजकुमार, ऐलिक्जैन्डर व्हाइट, पौलुस को बपतिस्मा लेने के पश्चात यरूशलेम जाने के बजाय अरब जाने की तस्वीर को बयान करता है। वह दमिश्क में एक राजकुमार के समान आया था, परन्तु वहाँ से अरब एक तीर्थयात्री के समान केवल अपनी छड़ी, अपने चम्रपत्र और रोजमर्रा की जिन्दगी के लिए आवश्यक सामग्री को लेकर गया।

अपनी सेवकाई के प्रारम्भ में पौलुस अरब के एकान्त व शान्त इलाकों की ओर आकर्षित हुआ, और अपनी सेवकाई के अन्त के दिनों में वह समृद्ध रोम की अधिकतर हलचल व भीड़–भाड़ वाली जगहों पर गया। तीन वर्ष उसने होरेब की छाया के नीचे बिताए, जहाँ पर फलदायक वर्षों की आवश्यकता थी। जिस तरह व्हाइट बहुत ही उम्दा तरीके से कहते हैं, ''वह अपने साथ अपने झोले में मूसा की लिखी पुस्तकें,

भविष्यद्वक्ताओं की पुस्तकें और भजनों को ले गया और वहाँ से जब दमिश्क को लौटते समय रोमियों, इफिसियों और कुलुस्सियों को अपने मुँह में और अपने हृदय में लेकर आया। {2}

यहाँ पर इसमें थोड़ा सा सन्देह हो सकता है कि वह पौलुस ही था जिसने मसीहीयत के थियोलोजिकल अर्थात ईश्वरीय ज्ञान के आशय में होकर विचार किया। वह पौलुस ही था जिसने पुराने नियम के गहरे अर्थ को कलवरी के प्रकाश व उस महान अनुभव के प्रकाश में होकर देखा, जो उसने स्वयं किया, जब वह दमिश्क के मार्ग पर था, उसका आमना–सामना यीशु नासरी के साथ हुआ, जहाँ पर उसने यीशु को मृत्यु में से जी उठे, स्वर्ग पर उठा लिये गये और महीमित परमेश्वर के रूप में पहिचाना। वह पौलुस ही था जिसने नये नियम में नई शब्दावली को जोड़ा। वह पौलुस ही था जिसने क्रूस के साथ न्याय किया। वह पौलुस ही था जिसने मसीह के पुनर्आगमन और वर्तमान में परमेश्वर के दाहिने हाथ पर उसकी महिमामय स्थिति के सच्चे अर्थ को समझाया। यह पौलुस द्वारा रचित रोमियों की पुस्तक में ही है जिसमें सुसमाचार की अद्‌भुत पकड़ सम्पूर्ण रूप में प्रगट होती हैं। जितने भी लोग पासबान, प्रचारक या शिक्षक की सेवकाई को निभाते हैं, या व्यक्तिगत् कार्यों से जुड़े हैं या उनमें मनुष्यों के बीच परमेश्वर के कार्यों की अच्छी समझ हो, उनमें अवश्य ही रोमियों की पुस्तक – पौलुस रचित सुसमाचार की ही अच्छी पकड़ होनी चाहिये।

रूपरेखा

1:1–18

I. सुसमाचार का अभिप्राय (1:1–4)

क. सुसमाचार का आदेश (1:1)

ख. सुसमाचार का सन्देश (1:2–4)

1. यीशु – प्रगट किया हुआ (1:2)
2. यीशु – राज्य करने वाला (1:3)
3. यीशु – पुनरूत्थित जन (1:4)

II. सुसमाचार का दास (1:5–16)

क. रोम के मसीहियों के लिए पौलुस के निर्देश (1:5–7)

1. उसकी आज्ञा (1:5)
2. उनकी बुलाहट (1:6–7)

ख. रोम के मसीहियों के लिए पौलुस की मध्यस्थता (1:8–9)

1. उनके लिए उसकी प्रशंसा (1:8)
2. उनके लिए उसकी प्रार्थना (1:9)

ग. रोम के मसीहियों में पौलुस की रूचि (1:10–12)

1. वह उन्हें देखने के लिए बेताब था (1:10–11क)
2. वह उनकी सेवा करने के लिए बेताब था (1:11ख)
3. वह उन्हें सामर्थी बनाने के लिए बेताब था (1:11ग–12)

घ. रोम के मसीहियों में पौलुस के उद्देश्य (1:13–16)

1. किस प्रकार यह उद्देश्य निरर्थक हुए (1:13)
2. किस प्रकार यह उद्देश्य (1:14–16)
    1. उसका बोझ – मैं कर्जदार हूँ (1:14)
    2. उसका साहस – मैं तैयार हूँ (1:15)
    3. उसका विश्वास – मैं लज्जित नहीं हूँ (1:16)
        1. सुसमाचार की सर्वश्रेष्ठता
        2. सुसमाचार की पर्याप्तता
        3. सुसमाचार की सरलता

III. सुसमाचार का सारांश (1:17–18)

क. यह परमेश्वर की धार्मिकता को प्रगट करता है (1:17)

1. हमारे लिए उसका प्रकाशन
2. हमारे भीतर उसकी क्रान्ति

ख. यह परमेश्वर के क्रोध को प्रगट करता है (1:18)

1. ईश्वरीयता के प्रति
2. अधार्मिक के प्रति
3. अविश्वासी के प्रति

जब पौलुस ने इस पत्र को लिखा तो वह उस समय तक कभी भी रोम में नहीं गया था; अतः स्वाभाविक रूप से वह अपने और कलीसिया में अपने स्थान के बारे में वर्णन करता है। सही है कि रोम में उसके कुछ

मित्र व शिष्य थे, परन्तु ज्यादातर लोगों के लिए वह अन्जान था। उसकी प्रस्तावना हमें उसकी परमेश्वर के साथ उसके सम्बन्धों की और उसके मित्रों के साथ सम्बन्ध की तस्वीर को दर्शाती, और इस पत्री के मुख्य विषय अर्थात् सुसमाचार की झलक को दिखाती है।

I. सुसमाचार का अभिप्राय (1:1–4)

पौलुस पहले ही वचन में अपने विषय "सुसमाचार" की घोषणा करता है और अपने प्रारम्भिक कथन में ज्यादातर उसका इस्तेमाल करता है (पद 1, 9, 15, 16)।

क. सुसमाचार का आदेश (1:1)

''पौलुस की ओर से जो यीशु मसीह का दास है, और प्रेरित होने के लिए बुलाया गया है, और परमेश्वर के सुसमाचार के लिए अलग किया गया है'' (पद 1)। सुसमाचार मनुष्य को परमेश्वर के लिए नियन्त्रित करता है। और इस बात के लिए पौलुस खुद ही एक उत्कृष्ट उदाहरण है क्योंकि वह अपने आपको यीशु का दास (बन्धुआ दास) कहता है। इसमें कोई अचम्भे की बात नहीं कि पौलुस के दिमाग में पुराने नियम का वह दास था जो स्वतन्त्र होने को इच्छा के बजाय आजीवन अपने स्वामी की सेवा करना चाहता था। उसी के समान पौलुस कह सकता था, ''मैं अपने स्वामी से प्रेम करता हूँ.... मैं यहाँ से आज़ाद होकर नहीं जाना चाहता'' (निर्गमन 21:5)। जिस प्रकार से उस दास का कान में उसके कभी न बदलने वाले समर्पण को प्रगट करने हेतु एक चिन्ह के रूप में छेद दिया जाता था। इसी प्रकार पौलुस कह सकता था ''मैं अपने शरीर में मसीह यीशु के निशानों (स्टिगमाटा, गुलामी का चिन्ह) को लेकर चलता हूँ'' (गलातियों 6:17)।

पौलुस से बढ़कर कोई भी जन उसकी आज़ादी के विषय में विचार करने वाला न था। उन दिनों में जब ज्यादातर पुरूष गुलाम थे, पौलुस ने रोमी परिवार में पैदा होने और वहाँ की नागरिकता के सौभाग्य का आनन्द उठाया था। फिर भी वह प्रभु यीशु का सेवक होने को बड़े आदर की बात समझता है। उसके पाठक गुलामों की मण्डी के बारे में पर्याप्त मात्रा में परिचित थे और जिन लोगों ने अपने आपको गुलामी में दे दिया था, वे पौलुस की इस प्रस्तावना की प्रशंसा करेंगे।

सुसमाचार के आदेश ने न केवल पौलुस को मसीह का स्वैच्छिक दास नहीं बनाया, बल्कि उसे एक विशेष इज्जत भी प्रदान की। उसने उसे प्रेरित बना दिया। इस शब्द का अर्थ है ''भेजा हुआ'' और इस शब्द के पीछे छुपा हुआ मतलब वहीं है जिसे हम अपने शब्दों में मिशनरी कहते हैं। प्रेरित के रूप में पौलुस की बुलाहट? उसे और भी अधिक सौभाग्य प्रदान करके पतरस याकूब और युहन्ना की बराबरी में लाकर खड़ा कर देती है। (2 कुरिन्थियों 11:5)। उसकी प्रेरिताई के आखिरी दिनों में पौलुस एक महान प्रवर्तक और कलीसिया का एक महान वक्ता बना गया। कलवरी की घटना के करीब 30 वर्षों के बाद जब उसकी मृत्यु

हुई, उस समय तक पाश्चात्य रोमी साम्राज्य में लगभग हर बड़े शहर में मसीही आराधना के लिए कलीसिया था। उसने अपनी प्रेरिताई का पूर्ण प्रमाण प्रस्तुत किया (रोमियों 15:19)।

सुसमाचार के आदेश ने पौलुस के जीवन में कुछ और भी किया। उसने उसे अगल किया (पद 1)। जो व्यक्ति परमेश्वर की सेवा में प्रभावशाली होना चाहता है। उसे सभी रूकावटों को मैक्सिको के किनारे कोर्टेज लैण्डेड के स्पैनिश एडवैन्चर होने के तुरन्त बाद उनके कड़क कप्तान ने आदेश दिया कि उनकी नावें समुद्र के किनारे ही जला दी जायें। उसके बाद से या तो जीत या मृत्यु थी। जहाँ तक सुसमाचार और मसीह का सवाल था, पौलुस ने अपने समर्पण में कोई समझौता नहीं किया।

''अलग किया जाना'' के लिए ग्रीक शब्द इस अनुच्छेद में ''क्षितिज को'' प्रगट करता है। पौलुस का सम्पूर्ण क्षितिज मसीह के द्वारा ढका हुआ था। उसके जीवन की सारी सीमाएँ उसके द्वारा खींची गयी थीं। पौलुस अपने मन परिवर्तन से पहले ही प्रभु के द्वारा अलग किया गया था (गला:1:15), मसीह के द्वारा उसके मन परिवर्तन में (प्रेरितों के काम 9:15), और पवित्र आत्मा के द्वारा उसके मन परिवर्तन के बाद (प्रेरितों के काम 13:2) वह परमेश्वर के सुसमाचार के लिए अलग किया गया था।

ख. सुसमाचार का सन्देश (1:2–4)

मसीह सुसमाचार के सन्देश का हृदय है। अगली तीन आयतों में पौलुस हमारे सम्मुख उसे तीन विभिन्न तरीकों से दर्शाता है। वह (1) प्रगट किया गया है, जिसके लिए ''पहले से ही प्रतिज्ञा'' की गयी थी (पद 2), तथा ''परमेश्वर के सुसमाचार'' के लिए इसकी जड़ें पुराने नियम में समायी हुई हैं।

परमेश्वर का प्रकाशन सम्पूर्ण कहानी है और वह सुसमाचार के अन्दर अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँचती है। पुराने नियम में पायी जाने वाली मसीह सम्बन्धी गुप्त बातों का लेकर कलवरी के प्रकाश में उनका विस्तारपूर्वक वर्णन करना, पौलुस की मुख्य बुलाहट थी। तीन महान सत्य या ''रहस्य'' पौलुस को प्रदान किये गये थे, और उसके द्वारा कलीसियाओं को लिखी हुई पत्रियाँ इन्हीं सच्चाईयों से जुड़ी हुई हैं। 2 तीमुथियुस 3:16 पर आधारित इस नमूने पर गौर करें।

I. रोमियो: मसीह के क्रूस का रहस्य

   क. कुरिन्थियों 1 व 2 – पुनर्प्रमाण (नैतिक असफलता)

   ख. गलातियों– संशोधन (सैद्धान्तिक गलती)

II. इफिसियों: मसीह की कलीसिया का रहस्य

   क. फिलिपियों– पुनर्प्रमाण (प्रयोगात्मक असफलता)

   ख. कुलुस्सियों– संशोधन (सैद्धान्तिक गलती)

III. थिस्सलुनिकियों 1 व 2: मसीह के आगमन का रहस्य

ये सारे ''रहस्य'' नये प्रकाशन थे, परन्तु इनमें से कोई भी चीज उन बातों से अलग या जुदा नहीं है जो हम पर पुराने नियम के दौरान प्रगट की गयी हैं। क्रूस, कलीसिया और परमेश्वर का पुनर्आगमन पुराने नियम में छाया के समान विभिन्न तरीकों से छिपे हैं।

सुसमाचार का सन्देश यीशु को न केवल प्रगट किये गये जन के रूप में प्रदर्शित करता है, बल्कि (2) उसे एक राजा के रूप में भी दर्शाता है। वह ''हमारा प्रभु यीशु मसीह है, जो शरीर के भाव से तो दाऊद के वंश से उत्पन्न हुआ'' (पद 3)।

नया नियम यीशु को दाऊद की सन्तान के रूप में सम्बोधित करते हुए प्रारम्भ और समाप्त होता है (मत्ती 1:1; प्रकाशितवाक्य 22:16)। मसीह सम्बन्धी वंशावली यीशु पर आकर समाप्त हो गयी। पुराने नियम की अनेको वंशावलियों को इस्तेमाल करने के पश्चात, मत्ती और लूका दोनों ने दाऊद के सिंहासन के असली उत्तराधिकारी को खोज निकाला। यह बहुत ही महत्वपूर्ण है कि कलवरी पर किसी ने भी यशायाह की चुनौती को स्वीकार करने तथा ''उसे पीढ़ी के सामने धोषणा करने'' पर किसी ने भी ध्यान नहीं दिया (यशायाह 53:8)। ऐसा करने का मतलब होता कि वह अपने आप को दाऊद का उत्तराधिकारी बता रहा है। वह वास्तव में ''यहूदियों का राजा'' था।

पौलुस, यीशु के राज्य करने के अधिकार का दो तरीकों से बखान करता है। आधिकारिक तौर पर वह ''दाऊद के वंश का बीज है।'' व्यक्तिगत् तौर पर वह ''यीशु मसीह हमारा प्रभु है''। हो सकता है कि संसार का एक बहुत बड़ा हिस्सा इस युग में उसके दाऊद के उत्तराधिकारी होने के पद को अस्वीकार कर दे, परन्तु प्रत्येक विश्वासी का कर्तव्य उसे अर्थात् मसीह को अपना प्रभु और मसीहा स्वीकार करने के लिए बाध्य करता है।

सुसमाचार के सन्देश का सम्बन्ध मसीह के आगमन के तीसरे पहलू से है। वह (3) पुनरूत्थित हुआ है, वह ''जो पवित्रता की आत्मा के भाव से मरे हुओं में से जी उठने के कारण सामर्थ्य के साथ परमेश्वर का पुत्र ठहरा'' (पद 4)।

यह भाव ''पवित्रता की आत्मा'' सुझाव देता है कि यीशु ने पाप की सामर्थ्य के ऊपर विजयी जीवन को व्यतीत किया था, और निश्चय ही, उसका जीवन सम्पूर्ण रूप से पवित्र था। उसने कभी किसी को बुरी या व्यभिचार भरी निगाहों से नहीं देखा, उसने कभी जल्दबाजी में, कठोर, झूठे या ओछे शब्दों को नहीं बोला; और उसने कभी अपने दिमाग में अश्लील विचारों को नहीं आने दिया। उसके विवेक ने कभी उस पर दोष नहीं लगाया, वह कभी बुरे विचारों की अभिलाषा के नशे में नहीं डूबा, वह कभी परमेश्वर की इच्छा से बाहर नहीं गया। उसका समय कभी खराब नहीं हुआ, उसकी योग्यताओं का इस्तेमाल कभी उसके अपने

स्वार्थ के लिए नहीं हुआ, उसकी कभी बुरी बातों को नहीं फैलाया, उसका न्याय कभी गलत नहीं हुआ। उसको कभी अपने किये पर शर्मिन्दा नहीं होना पड़ा और न ही कभी अपनी कही हुई बात को वापस लिया। वह कभी अधिक देरी या अधिक शीध्र नहीं पहुँचा; कभी झुंझलाया नहीं; कभी बेकार, फीका नहीं हुआ या घबराया नहीं। वह इस धरती पर करीब बारह हजार दिनों तक जीवित रहा और हर एक दिन पवित्रता के सन्दर्भ में आश्चर्यजनक दिन था। वह ''पवित्र, और निष्कपट, और निर्मल और पापियों से अलग था'' (इब्रानियों 7:26)। रूपान्तरण के पर्वत पर मिलन के पश्चात वह सीधे महिमा में प्रवेश कर सकता था। बैतलेहम में उसके एक गौशाला में जन्म लेकर पहली साँस लेने से लेकर कलवरी पर अपने प्राण त्यागते हुए अपनी आँखें बन्द करने तक, वह हर क्षण में विजयी था। वह ''पवित्रता की आत्मा के भाव से, सामर्थ्य के साथ परमेश्वर का पुत्र करके घोषित किया गया था।''

यह भाव ''मरे हुओं में से जी उठने के कारण'' पाप के दण्ड के ऊपर उसकी विजय को दर्शाता है। वह मृतकों में से जी उठा। फ्राँस की क्रान्ति के दौरान, एक एम. लेपियू ने टैलिरेण्ड से शिकायत की कि उसका एक नया धर्म, जिसके बारे में उसका विचार था कि वह मसीहियों पर काफी अच्छा प्रभाव डालेगा, वैसा करने में असफल हो रहा था। उसने टैलिरेण्ड के सुझाव को माँगा। टैलिरेण्ड ने उससे बड़े रूखे अन्दाज में कहा, ''श्रीमान लेपियू, अपने नये धर्म की सफलता को सुरक्षित करने के लिए, आपको केवल क्रूस पर मरने और तीसरे दिन मुर्दों में से जिन्दा हो जाने की जरूरत है।''

मसीह की इसी खासियत ने पौलुस को अपनी ओर आकर्षित किया – उसका पुनरूत्थान! पौलुस की यीशु से पहली मुलाकात दमिश्क के मार्ग पर मुर्दों में से जीवित हो चुके प्रभु यीशु मसीह के रूप में हुई थी (प्रेरितों के काम 9:1–6)। निर्विवादित रूप में यीशु मसीह के जीवित और महीमित होने की सच्चाई ने पौलुस को कायल कर दिया कि वह ही परमेश्वर का पुत्र है।

जिन लोगों ने उसे क्रूस पर अथाह पीड़ा के पश्चात अपने सिर को झुकाकर मरते हुए देखा था। वे आज तीन दिन के पश्चात सुबह सुबह एक खुली हुई कब्र के द्वार खड़े हुए थे। ''अरे चौकीदारों, उसे पकड़ो! देखो किस तरह से उन्होंने कब्र पर से पत्थर को लुड़काकर कैसर की मुहर को तोड़ दिया है। रोम के साम्राज्य के नाम पर, उस व्यक्ति के हथियारों को जब्त कर लो, देखो वह कब्र पर से जा रहा है। लोगों, जाओ उसे पकड़ो।'' परन्तु कोई नहीं गया, वो सारे चौकीदार उस जगह पर मृतकों के समान हो गए थे। मसीह अपनी सारी बातों का इस वाक्य में निचोड़ देता है – ''मुझे अपना जीवन देने और उसे फिर से वापस लेने का अधिकार है'' (यूहन्ना 10:18); और उसने उसे पुनः वापस ले लिया। उसने मृत्यु को जीत लिया! और अब वह अनन्त जीवन की सामर्थ्य में होकर जीवित है। शरीर के अनुसार, वह दाऊद का बीज है; परन्तु पवित्रता की आत्मा के अनुसार, वह परमेश्वर का पुत्र है।

II. सुसमाचार का दास (1:5–16)

इस खण्ड में ज्यादातर बोले गये शब्द पौलुस के अपने व्यक्तित्व को दर्शाते हैं जैसे कि ''मैं'', ''मुझे'', और ''मेरा।'' वह यहाँ पर रोमियों को लिखी गयी पत्री को लिखने के मुख्य कारणों को प्रगट करता है।

क. रोम के मसीहियों के लिए पौलुस के निर्देश (1:5–7)

वह अपने आदेश (1) के साथ प्रारम्भ करता है। ''उसके द्वारा हमें अनुग्रह और प्रेरिताई मिली, कि उसके नाम के कारण सब जातियों के लोग विश्वास करके उसकी मानें''(पद 5)। प्रेरिताई से पहले अनुग्रह, और सेवा से पहले उद्धार आता है। यीशु यह कहने से पहले कि ''तुम सारी जातियों के पास जाओ,'' ''मेरे पास आओ'' कहते हैं। किसी लक्ष्य के प्रति समर्पण से पहले सत्य के प्रति समर्पण आता है। बहुत से महारथी इन बातों को समझने में असफल हो गये हैं। जॉन वेस्ली बिना यह पहचाते हुए कि वह खुद एक अपरिवर्तित व्यक्ति है जिसे एक उद्धारक की आवश्यकता है, अपने मिशन के कार्य हेतु निकल चुका था।

पौलुस का सम्पूर्ण जीवन इस वचनों के इर्द गिर्द धूमता रहता है, ''उसके नाम के निमित्त, सारी जातियों में विश्वास से आज्ञा मानने वाले'' और वह इन शब्दों को हूबहू पत्री के अन्त (16:26) में दोहराता है। हमारा स्वभाव ''विश्वास के प्रति आज्ञाकारी''; हमारा लक्ष्य ''समस्त जातियाँ''; और हमारा अधिकार ''उसका नाम'' होना चाहिये। पौलुस हमारे सम्मुख समस्त संसार में सुसमाचार प्रचार की जरूरत को लाकर रखता है।

अपने आदेशों को देने के पश्चात, वह उनकी बुलाहट (2) पर चर्चा करता है। ''जिसमें तुम भी यीशु मसीह के होने के लिए बुलाये गये हो'' (पद 6)। बाद में इसी पत्री के अन्दर पौलुस विस्तृत रूप में वर्णन करता है कि इस बुलाहट में क्या क्या शामिल है (8:28–30), परन्तु इस स्थान पर वह केवल तीन बातों का ही जिक्र करता है।

परमेश्वर की बुलाहट उसी के द्वारा निर्धारित की जाती है। पौलुस के पाठकों के सन्दर्भ में, वे ''रोम के निवासी'' थे (पद 7)। परन्तु चाहे वह पौराणिक रोम हो या आधुनिक शिकागोया न्यूयार्क हो, परमेश्वर की बुलाहट उसी के द्वारा ही निर्धारित की जाती है। वह जानता है कि कौन कहाँ पर रहता है। ''प्रभु अपनों को पहिचानता है'' (2 तीमुथियुस 2:19)।

परमेश्वर जिन्हें बुलाता हैं, उन्हें प्रेम भी करता है; वे ''परमश्वेर के प्रिय'' होते हैं (पद 7)। वे परमेश्वर के द्वारा विशेष दर्जा प्राप्त करते हैं; उन्हें ''सन्त के रूप में बुलाया जाता है''(पद 7)। इस युग के दौरान (प्रेरितों के काम 15:14) परमेश्वर इस संसार में से कुछ चुने हुए लोगों को अलग कर रहा है जिन्हें

''कलीसिया'' के नाम से जाना जाता है। (''कलीसिया'' के लिए नये नियम में मूल शब्द *'इकलिसिया'* है – बाहर बुलाए गए लोगों का समूह।'') ये अलग किये गये लोगों को ''सन्त'' की उपाधि दी जाती है, यह बहुत नामों में से एक नाम है जिसके द्वारा नये नियम में परमेश्वर के लोग जाने जाते हैं। यह शब्द ''सन्त'' लोगों को कलीसिया में किसी अलग श्रेणी में विभाजित नहीं करता, बल्कि उन लोगों को दर्शाता है जिन्होंने प्रभु पर भरोसा किया होता है। यह शब्द अपने भीतर ''कलीसिया'' शब्द हेतु एक सामूहिक भावना को रखता है और जिसका अर्थ होता है ''ऐसा जन जो प्रभु के लिए अलग किया गया हो।''

ख. रोम के मसीहियों के लिए पौलुस की मध्यस्थता (1:8–9)

पौलुस की मध्यस्थता (1) स्तुति के साथ प्रारम्भ होती है। ''पहले मै तुम सब के लिए यीशु मसीह के द्वारा अपने परमश्वेर का धन्यवाद करता हूँ, क्योंकि तुम्हारे विश्वास की चर्चा सारे जगत में हो रही है'' (8)।

पौलुस यहाँ अपनी जलन को प्रगट नहीं करता है! रोमियों की कलीसिया उसके लिए घमण्ड और आनन्द का कारण रहा होगा। अन्यजातियों के प्रति प्रेरित होने की अपनी क्षमता में उसने रोमियों की कलीसिया को प्रारम्भ करने का सौभाग्य प्राप्त करने की अपेक्षा जरूर की होगी। दूसरों को यह सौभाग्य प्राप्त हो गया, इस वजह से दुःखी होने की तुलना में उसके विचार और उसकी योजनाएँ काफी बड़ी थीं। इस विषय में सभी लोग पौलुस के समान नहीं हैं। रोम में ही बहुत से ऐसे लोग थे, जो पौलुस के रोम में आने की खबर को सुनकर ही क्रोधित हो जाते थे। क्योंकि जब पौलुस अन्ततः नीरो का कैदी बनकर रोम में पहुँचा, तो वहाँ के प्रचारकों ने डाह व झगड़े के तहत् मसीह का प्रचार किया, जिससे कि पौलुस को और भी अधिक कष्ट और बन्धुवाई का सामना करना पड़े (फिलिप्पियों 1:15–16)। पौलुस में इस प्रकार की आत्मा नहीं थी।

पौलुस की मध्यस्थता लगातार प्रार्थना (2) के साथ में आगे बढ़ती रही। ''परमेश्वर जिसकी सेवा मैं अपनी आत्मा से उसके पुत्र के सुसमाचार के विषय में करता हूँ, वही मेरा गवाह है कि मैं तुम्हें किस प्रकार लगातार स्मरण करता रहता हूँ'' (पद 9)। जिस प्रकार से इस्राएलियों की वेदी की आग कभी नहीं बुझती थी, ठीक उसी प्रकार पौलुस का महान हृदय भी मनुष्यों की आत्माओं को बचाने की चाह में जलता रहता था। उसकी प्रार्थनाओं का धुआँ दिन रात लगातार परमेश्वर के सामने उठता रहा। हम में से अधिकतर लोग विश्वासयोग्यता के साथ पर्याप्त मात्रा में अपने परिवार व मित्रों के लिए प्रार्थना करने में चूक जाते हैं, तो हम उन लोगों के लिए कितना कम प्रार्थना कर पाते होंगे, जो दूसरे शहरों या दूसरे देशों में रहते हैं, जिनके चेहरों को कभी हमने देखा ही नहीं है। परन्तु, जब पौलूस थिस्सलुनिकियों की कलीसिया को ''बिना रूके हुए'' प्रार्थना करने की सलाह दे रहा था (1 थिस्सलुनिकियों 5:17), वह साधारणतः उनसे उसके पदचिन्हों का अनुसरण करने की गुजारिश कर रहा था।

ग. रोम के मसीहियों में पौलुस की रूचि (1:10–12)

वह उनसे मिलने के लिए, उनकी सेवा करने के लिए और उनको मजबूत करने के लिए बेताब था। उसकी स्पष्ट बेताबी को हम निम्न कथन में देख सकते हैं, ''किसी रीति से'' (पद 10)। वह एक खुले चेक के समान, हस्ताक्षर किया हुआ और परमेश्वर के लिए भेंट चढ़ाया हुआ था। इस सन्दर्भ में वह परमेश्वर से कहता है, ''हे प्रभु, मैं रोम में जाना चाहता हूँ, परन्तु इस मामले में मैं अपने आपको तेरी इच्छा पर छोड़ता हूँ। मैं तेरे चुने हुए किसी भी मार्ग पर जाऊँगा।'' परमेश्वर ने उसके चेहरे को देखकर, उस चैक पर अधिकतम मूल्य लिख दिया और जंजीरों से जकड़ा हुआ पौलुस रोम में पहुँचा। पौलुस कभी भी उन जंजीरों की वजह से शर्मिन्दा नहीं था, उसने कभी भी अपने आप को नीरो सम्राट का कैदी नहीं कहा, बल्कि उसने सदैव खुद को यीशु का कैदी करके सम्बोधित किया।

रोम के लिए पौलुस के दिमाग में कुछ विशेष लक्ष्य थे। वह अपनी बेताबी को बयान करते हुए कहता है, ''जिससे कि आखिर में'', ''तुम स्थिर हो जाओ'' (पद 11)। वह इस बात को लेकर निश्चित था कि उसका उनसे मिलना, उनके लिए आशीष का कारण होगा और उनकी संगति खुद उसके लिए प्रेरणा प्राप्त करने का जरिया होगी (पद 12)। वह बिल्कुल ठीक था! रोम में अपनी पहली कैद के दौरान, अपने मित्रों को जो फिलिप्पुस में थे, पत्र लिखते समय पौलुस यह कह सकाः ''हे भाइयो, मैं चाहता हूँ कि तुम यह जान लो, कि मुझ पर जो बीता है उससे सुसमाचार की बढ़ती हुई है। यहाँ तक कि कैसर के राजभवन की सारी पलटन और शेष सब लोगों में यह प्रगट हो गया है कि मैं मसीह के लिए कैद हूँ; और प्रभु में जो भाई हैं, उनमें से अधिकांश मेरे कैद होने के कारण, हियाव बाँधकर परमेश्वर का वचन निधड़क सुनाने का और भी साहस करते हैं'' (फिलिप्पियों 1:12–14)।

घ. रोम के मसीहियों में पौलुस के उद्देश्य (1:13–16)

ध्यान दें कि किस प्रकार से पौलुस के रोम जाने की योजना को (1) रोका गया या अस्वीकार किया गया। ''हे भाइयो, मैं नहीं चाहता कि तुम इससे अन्जान रहो कि मैं ने बार–बार तुम्हारे पास आना चाहा, (परन्तु रोका गया)'' (पद 13)। कई बार शैतान ने पौलुस की योजनाओं को रोकने की कोशिश की (1 थिस्सलुनिकियों 2:18)। परन्तु इस मामले में ऐसा लगता है कि दूसरे प्रान्तों में सुसमाचार सुनवाने की इच्छा के चलते पवित्र आत्मा ने पौलुस को रोम में जाने से रोक रखा।

इसके पश्चात ध्यान दें कि रोम के लिए पौलुस की योजना (2) किस प्रकार से सूत्रबद्ध थी। यह तीन बातों पर आधारित थी – उसका बोझ (''मैं कर्जदार हूँ''), उसका साहस (''मैं तैयार हूँ''), और उसका विश्वास (''मैं सुसमाचार से नहीं लजाता'')।

''मैं यूनानियों और अन्यजातियों दोनों का और बुद्धिमानों और निर्बुद्धियों दोनों का कर्जदार हूँ'' (पद 14)। यहाँ पर पौलुस का बोझ छिपा हुआ है। पौलुस को इन बातों से कोई फरक नहीं पड़ता था कि सुसमाचार सुनने वाला व्यक्ति सभ्य आचरण वाला है या क्रूर, कोई बुद्धिमान है या फिर अज्ञानी। वह किसी ओनिसिमुस जैसे भागे हुए गुलाम और राजा अग्रिप्पा जैसे घमण्डी राजा को समान जुनून के साथ में प्रचार करता था। जो लोग मसीह की सच्चाई को जानते हैं वे सम्पूर्ण मानवजाति के कर्जदार हैं। वे पुराने नियम के उन कोढ़ियों के समान हैं, जिन्हें प्रभु की योजना के द्वारा बहुतायत से प्राप्त संसाधनों के स्थान पर उस समय पहुँचकर जब उनके साथी भूखे मर रहे थे, यह कहना अवश्य है कि ''जो हम कर रहे हैं वह अच्छा काम नहीं हैः यह आनन्द के समाचार का दिन है, परन्तु हम किसी को नहीं बताते''(2 राजा 7:9)। यही सच्ची और अच्छी आत्मा है। जिन्होंने सुसमाचार के खजाने को प्राप्त कर लिया है, उन्हें इसे सारी मानवजाति को बताना चाहिये, यह हम पर एक कर्ज है।

''अतः मैं तुम्हें भी जो रोम में रहते हो, सुसमाचार सुनाने को भरसक तैयार हूँ'' (पद 15)। यह पौलुस का साहस था। रोम के विषय में! श्रीमान हैनरी राइडर हैगार्ड कहते हैं कि, ''रोम की बराबरी कहीं नहीं, यहाँ तक कि मैक्सिको में भी इस प्रकार का सांस्कृतिक माहौल नहीं था जो पूरी तरह से घटिया स्तर की अशुद्धता से भरा हो। बुद्धिमत्ता के क्षेत्र में, रोम प्रसिद्ध था; उसके प्रतिभाशाली लोगों के प्रयासों को शायद ही भुलाया जा सकता है; उसके नियम हमारे न्यायशास्त्र की संहिता की बुनियाद हैं; कला के क्षेत्र में उसने दूसरों की नकल की, परन्तु उसे सराहा गया; उसकी सैन्य–प्रणाली आज भी सारे संसार के लिए आश्चर्य का कारण बनी हुई है; उसकी महान शख्सियत आज भी बहुत से प्रतिद्वन्दियों के सामने आने के बावजूद महान बने हुए हैं। और फिर भी वह कितनी कठोर, कितनी बलवन्त थी! उसके शहरों की उजाड़ स्थिति के बावजूद वहाँ कोई अस्पताल नहीं था, उस युग में जिसमें उसने अनेकों को अनाथ बना दिया था, उसमें कोई अनाथालय नहीं था। वहाँ के लोगों की धर्मनिष्ठ आकांक्षाओं ने कभी भी लोगों के दिलों को नहीं छूआ। रोम के अवतार विवेकहीन थे; वह अभिलाषाओं से भरी हुई, एक निगल जाने वाली पशु थी, जिसने अपने ज्ञान और वैभव से और भी ज्यादा पशुता को अन्जाम दिया।'' {1}

पौलुस रोम में सुसमाचार प्रचार करने के लिए तैयार था। जब उसने यरूशलेम में प्रचार किया, जो उस समय संसारभर के धर्मों का गढ़ था, तो उस पर अराजक तत्वों ने आक्रमण किया। जब उसने ऐथेंस में प्रचार किया, जो उस समय बुद्धिजीवियों का गढ़ था, तो उसका मजाक बनाया गया। जब उसने रोम में प्रचार किया, जो उस समय की कानून व्यवस्था का गढ़ माना जाता था, तो उसे मौत के घाट उतार दिया गया। वह उसके लिए तैयार था। वह रोम में सुसमाचार प्रचार करने के लिए तैयार था।

''क्योंकि मैं मसीह के सुसमाचार से नहीं लजाता, इसलिए कि वह हर एक विश्वास करने वाले के लिए, पहले तो यहूदी और फिर यूनानी के लिए, उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ्य है'' (1:16)। यह पौलुस का विश्वास था।

पौलुस का सुसमाचार पर इतना पक्का विश्वास उसकी आलौकिकता पर आधारित था। वह जानता था कि सुसमाचारक होना इस संसार में किसी भी धर्म या दर्शनशास्त्र को जानने से बढ़कर है। पौलुस के समय का संसार तीन प्रकार की विचारधाराओं के अधिकार में था – यूनानी, रोमी, और इब्रानी; परन्तु यूनानी तर्कवाद, रोम की व्यवस्था और इब्रानियों का प्रकाश सब सुसमाचार के सामने फीके पड़ गये। इन तीनों विचारधाराओं के सामने पौलुस कह सका कि ''मैं मसीह के सुसमाचार से लज्जित नहीं हूँ।'' यह किसी प्रान्तीय अन्जान व्यक्ति का धमण्ड नहीं था। पौलुस कोई अनपढ़–गँवार नहीं, बल्कि एक भव्य दर्शन से पूर्ण विश्वस्तरीय व्यक्ति, एक विद्वान, विश्वव्यापी रूचि रखने वाला और एक बुद्धिजीवी व्यक्ति था। वह सांसारिकता के नजरिये से संसारभर में मशहूर और सुसमाचार प्रचार करने के नजरिये से क्रूस के समाचार को प्रचार करने वाला अतिसफल प्रचारक था। पौलुस सुमाचार की आलौकिकता को जानता था।

पौलुस का सुसमाचार पर इतना पक्का विश्वास उसकी पर्याप्तता पर था। वह लिखता है कि ''वह उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ्य है।'' संसार को इससे बेहतर शिक्षा–प्रणाली, सामाजिक सुधार, धर्मजगत में नये विचारों की आवश्यकता नहीं है। उसे सिर्फ सुसमाचार की जरूरत है। सुसमाचार का सन्देश दिमाग को पकड़ लेता, विवेक को भेदता, ह्रदय को गर्म करता, प्राण को बचाता और जीवन को शुद्ध करता है। यह एक पियक्कड़ व्यक्ति को सभ्य, चालबाज व्यक्ति को सीधा और एक वैश्या को शुद्ध कर सकता है। यह एक ऐसा सन्देश है जो किसी भी सुनने वाले व्यक्ति को परिवर्तित करने में सक्षम है।

पौलुस का सुसमाचार पर इतना पक्का विश्वास उसकी सरलता पर था। यह उद्धार के निमित्त परमेश्वर की सामर्थ्य ''हर एक विश्वास करने वाले व्यक्ति के लिए है।'' क्या इससे भी सरल और कुछ और हो सकता है? सुसमाचार की पुकार या बुलाहट परमेश्वर के पुत्र, हमारे प्रभु यीशु मसीह को, पापों के निमित्त अपने व्यक्तिगत् उद्धारकर्ता के रूप में विश्वास करने के लिए है।

III. सुसमाचार का सारांश (1:17–18)

पौलुस का पहुँच से बाहर परिचय सुसमाचार के संक्षिप्त सारांश के साथ समाप्त कर दिया जाता है।

क. यह परमेश्वर की धार्मिकता को प्रगट करता है (1:17)

कुँजी शब्द ''धार्मिकता'' और उससे सम्बन्धित वचन रोमियों की किताब में करीब पचास बार प्रगट होते हैं। सर्वप्रथम, पौलुस धार्मिकता के इस प्रकाशन को इस वाक्य के साथ सामने रखता है, ''क्योंकि उसमें परमेश्वर की धार्मिकता विश्वास से और विश्वास के लिए प्रगट होती है'' (पद 17)। धार्मिकता का अर्थ होता है ''सच्चाई की पुष्टि,'' जो कि मानव की आलौकिक धोषणा है। धार्मिकता का अर्थ है कि ''जो कुछ परमेश्वर है और उसके पास है, वह हमें देता है'' जो धार्मिकता परमेश्वर में पायी जाती है वह उस धार्मिकता को मसीह में होकर हमें प्रदान करता है। हमें इसे विश्वास के साथ में स्वीकार करना चाहिये, क्योंकि साधारण और सच्चे भरोसे की बुनियाद पर ही, परमेश्वर मनुष्य की धार्मिकता को बहाल करेंगे। {2}

व्यूइस्ट कहते हैं, ''एक लम्बे समय तक मार्टिन लूथर ने केवल परमेश्वर की दोष लगाने वाली धार्मिकता को देखा और उससे नफरत की। जब उसने देखा कि जो धार्मिकता अस्वीकार होने पर दोष लगाती है, वही धार्मिकता स्वीकार किये जाने पर उद्धार प्रदान करती है, तब सुसमाचार के प्रकाश ने उसके अन्धकारमय प्राण को प्रकाशित कर दिया। पौलुस कहते है कि यह धार्मिकता उद्धार के सुसमाचार में प्रगट की गयी है।'' {3}

परमेश्वर धर्मी है; परन्तु मनुष्य अधर्मी है। सुसमाचार हमें दर्शाता है कि किस प्रकार से परमेश्वर की धार्मिकता पापमय मनुष्य को ढाँप सकती है। यह विश्वास से विश्वास के लिए है। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो परमेश्वर की धार्मिकता विश्वास के द्वारा प्राप्त की जाती है और विश्वास के द्वारा ही पुनर्उत्पादित की जाती है। डब्ल्यू. ई. वाइन इसे इस प्रकार से कहते हैं: '''विश्वास से' अर्थात् प्रारम्भ करने के स्थान से; 'विश्वास तक' अर्थात् विश्वास के जीवन तक जो उसमें से होकर बाहर निकलता है।'' {4}

पौलुस भी हमारे भीतर (2) धार्मिकता की उस क्रान्ति का वर्णन करता है। वह कहता है कि ''धर्मी जन विश्वास के द्वारा जीवित रहेगा।'' (ध्यान दें कि परमेश्वर के स्वरूप में होने के कारण; हम ''धर्मी'' बन जाते हैं। और यह भी ध्यान दें कि हमारा जीवन परमेश्वर की ओर से है; जो ''जीवन'' हम व्यतीत करते हैं।)

यह महान वाक्य हबक्कूक 2:4 से पौलुस द्वारा यह दिखाने के लिए उद्धत् किया गया है कि ''विश्वास द्वारा धार्मिकता'' उसके द्वारा खोजा गया कोई नया प्रकाशन नहीं था, बल्कि वह पुराने नियम में मजबूत प्रकाशन के तौर पर विद्यमान है। यही वाक्य नये नियम में और भी दो अलग–अलग स्थानों में पाया जाता है (गलातियों 3:11; इब्रानियों 10:38) और यह धर्मशास्त्र का अतिमहान वाक्य है। यह वाक्य मार्टिन लूथर के पास कब पहुँचा यह कहना तो मुश्किल है, परन्तु बहुत से लोगों के विचार से जब वह रोम में स्थित सेन्ट पीटर की सीढ़ियों पर अपने घुटनों के बल, धार्मिकता को प्राप्त करने के लिए प्रायश्चित के व्यर्थ कार्य को कर रहा था, तब यह प्रकाशन उसको मिला। जिसकी वजह से वह जल्द ही उन सीढ़ियों से

नीचे उतर आया, और यह वचन तब तक उसके मन में ज्वाला के समान भडकता रहा, जब तक कि सम्पूर्ण यूरोप ने यह न सुन लिया कि ''धर्मी जन विश्वास के द्वारा जीवित रहेगा।'' {5}

बिशप लाईटफुट इस विषय पर कहते हैं कि मूसा को सम्पूर्ण व्यवस्था छः सौ तेरह निर्देशों के द्वारा प्रदान की गयी थी। दाऊद भजन संहिता 15 अध्याय में सभी बातों को मात्र ग्यारह आयतों में हमारे सामने पेश करता है। यशायाह उन्हें घटाकर छः, मीका तीन और फिर बाद में यशायाह उस दो आयतों में समावेशित कर देता है। परन्तु हबक्कूब सम्पूर्ण व्यवस्था को केवल एक ही वाक्य में संघनित कर देता हैः ''धर्मी जन विश्वास के द्वारा जीवित रहेगा।'' {6}

ख. यह परमेश्वर के क्रोध को प्रगट करता है (1:18)

यह मसीह की शिक्षा के गम्भीर पहलू को नजरअन्दाज करने की गलती है। उसने गम्भीर रूप से स्वर्ग के बारे में बोलने की तुलना में नरक के बारे में काफी चर्चा की। {7} पौलुस के सुसमाचार प्रस्तुत करते समय, मनुष्य के पाप और परमेश्वर के क्रोध की बुरी खबर मसीह के द्वारा उद्धार की खुशखबरी से पहले आती है। ''परमेश्वर का क्रोध तो उन लोगों की सब अभक्ति और अधर्म पर स्वर्ग से प्रगट होता है, जो सत्य को अधर्म से दबाए रहते हैं''(पद 18)। पौलुस बताता है कि स्वर्ग से परमेश्वर का क्रोध तीन वजहों से प्रगट होता है।

यह मनुष्य की अभक्ति (1) के कारण प्रगट होता है। अभक्ति का पूरा सवाल और यह तथ्य कि अभक्ति के लिए कोई बहाना नहीं है, इस पत्री में पौलुस का सर्वप्रथम विषय बन जाता है। {8}

अगला, मनुष्य की अधार्मिकता के खिलाफ परमेश्वर का क्रोध (2) स्वर्ग से प्रगट होता है। जबकि अभक्ति परमेश्वर के खिलाफ सर्वोच्च पाप है, तो अधार्मिकता मनुष्यों के खिलाफ सर्वोच्च पाप है। इस अर्थ है कि वह व्यक्ति परमेश्वर और मनुष्य दोनों की नजर में खरा नहीं है। अदन की बाटिका में मनुष्य के प्रथम पाप ने उसे परमेश्वर से अलग कर दिया; उसके दूसरे पाप (केन के द्वारा हाबिल की हत्या) ने मनुष्य को मनुष्य से अलग कर दिया (उत्पत्ति 3 और 4)। परमेश्वर मनुष्य के अपने पड़ोसी से गलत व्यवहार से भी उतना क्रुद्ध होता है, जितना वह उसके सृष्टिकर्ता के साथ गलत व्यवहार करने पर।

अन्त में, परमेश्वर का क्रोध स्वर्ग से (3) मनुष्य के अविश्वास के कारण प्रगट होता है। पौलुस ऐसे लोगों के बारे में बोलता है जो ''सत्य को अधर्म से दबाए रखते हैं'' (पद 18) या, जैसे किसी दूसरे अनुवाद में लिखा गया है, कि सच्चाई को ''कुचल डालते'' या ''गला घोंट'' देते हैं। परमेश्वर ने सम्पूर्ण मानवजाति के लिए कुछ बुनियादी सच्चाईयों को बनाया है और जानबूझ कर उन बातों को अविश्वास में अस्वीकार करने के कारण उनका न्याय किया जाएगा।

अब पौलुस अपना और अपने सन्देश का परिचय देता है। बाकी की रोमियों की पत्री इस परिचय का विस्तारपूर्वक वर्णन है।

भाग 1.

सुसमाचार के सिद्धान्त

1:19—8:39

अन्यजातियों का दोष

1:19—32

I. अन्यजातियों का स्वैच्छिक अन्धापन (1:19—20)

क. परमेश्वर की साक्षी निर्दोष है (1:19)

ख. परमेश्वर की साक्षी सार्वभौमिक है (1:20)

1. सारे मनुष्य इसके सामने बेपरदा हैं
2. सारे मनुष्य इसके द्वारा बेपरदा किये गये हैं

II. अन्यजातियों का दुष्ट विश्वास (1:21—25)

क. परमेश्वर रहित कल्पनाओं के कारण मनुष्य के मन का फूलना (1:21)

1. मनुष्य सविवेक अधार्मिक बन गया (1:21क)
2. जिसके कारण मनुष्य विवेकहीन बन गया(1:21ख)

ख. मनुष्य द्वारा स्वरचित मूरतों का प्रभाव (1:22—25)

1. मूर्ति मनुष्य के द्वारा रची गयी (1:22—23)
2. मनुष्य ने मूर्तियों के द्वारा धोखा खाया (1:24—25)
    1. उसकी इन्द्रीय गुलामी (1:24)
    2. उसकी आत्मिक गुलामी (1:25)

III. अन्यजातियों का मनमौजी व्यवहार (1:26—32)

क. वे नैतिक रूप में भष्ट हो गए (1:26—27)

1. पुरूष के अस्वभाविक पाप (1:26)
2. स्त्री के अस्वभाविक पाप (1:27)

ख. वे मानसिक रूप से भ्रष्ट हो गए (1:28–32)

1. भ्रष्ट विचारों की वजह (1:28)
2. भ्रष्ट विचारों का परिणाम (1:29–32)
    1. भ्रष्ट मानवीय चरित्र
    2. भ्रष्ट मानवीय आचरण
    3. भ्रष्ट मानवीय वार्तालाप
    4. भ्रष्ट मानवीय धारणाएँ
    5. भ्रष्ट मानवीय संगति

रोमियों की पत्री का पहला बड़ा हिस्सा सुसमाचार के सिद्धान्तों के बारे में चर्चा करता है (अध्याय 1–8)। इन अध्यायों में तीन विषयों ने पौलुस के मन और हृदय को पूरी तरह से पकड़ रखा है – पाप, उद्धार, और शुद्धिकरण।

जिस प्रकार से रोमियों की पुस्तक का प्रारम्भिक अध्याय पाप के विषय में चर्चा करता है, उसी प्रकार बाईबल के बहुत से अध्याय पाप के विषय में विस्तारपूर्वक वर्णन करते हैं। यह दृश्य एक न्यायकक्ष को दर्शाता है जहाँ पर अन्यजातियों, कपटियों और इब्रानियों को लाया जाता है – जिनमें से प्रत्येक परमेश्वर के सम्मुख भयंकर दोषी पाया गया है। अन्ततः मानवजाति परमेश्वर के मापदण्ड के आधार पर बड़े स्तर पर अपराधी साबित हुई है। परमेश्वर द्वारा अन्यजातियों को दोषी ठहराने से यह अभियोग प्रारम्भ हो जाता है।

रोमियों 1:19–32 परमेश्वर से दूर होने के कारण और नतीजों का विस्तारपूर्वक सर्वेक्षण करता है। यह खण्ड हमें बताता है कि यहाँ न केवल गैरमसीही तत्वों की शुरूआत है, बल्कि ढिठाई से मनुष्यों द्वारा उनकी रची गयी मूर्तो की पूजा भी पायी जाती है; लेकिन इसके अलावा सांस्कृतिक मूर्तिपूजा भी है, जिसके अन्तर्गत् मनुष्य अपनी ही काल्पनिक ईश्वररहित कृतियों की उपासना करता है। कई लोग मूर्तियों के पैरों पर ही औंधे मुँह गिरकर के दण्डवत् करते हैं, जबकि कुछ लोग उनको मठों में जाकर तपस्या या उपासना करते हैं। कुरिन्थिस में, जहाँ पर पौलुस इस पत्री को लिखते समय रह रहा था, पौलुस का सामना दोनों ही

प्रकार के गैर मसीहियों अर्थात् मूर्तिपूजकों से हुआ और वहाँ उसने उनके उच्च स्तरीय पापमय व्यवहारों को देखा, जिसे उसने इस अध्याय के अन्त में अंकित किया है।

वास्तव में, ''मूर्तिपूजकों'' को हम उन लोगों के दायरे में लाकर सीमित नहीं कर सकते जो काठ या पत्थरों की मूर्तियों की उपासना करते हैं। जितने भी लोग, जिन्हें प्रभु यीशु मसीह का ज्ञान नहीं है, वे किसी न किसी प्रकार से मूर्तिपूजक हैं। पाश्चात्य देशों में रहने वाले बहुत से लोग, जिन्हें परमेश्वर के बारे में काफी हद तक ज्ञान है, परन्तु उन्होंने परमेश्वर को अपने व्यक्तिगत् जीवन से दूर रख रखा है, वे भी मूर्तिपूजा करनेवाले हैं।

पौलुस मूर्तिपूजा की ओर धकेलने वाले निम्नलिखित तीन कदमों को चित्रित करता है। सर्वप्रथम, यहाँ स्वैच्छिक अन्धापन, जानबूझ कर परमेश्वर की सच्चाई को अस्वीकार करना है। जिसके पश्चात उनके रूढ़िवादी या बुद्धिजीवी स्वभाव का भ्रष्ट विश्वास या मत अनुसरण करता है। जो परिणामस्वरूप गैर जिम्मेदाराना व्यवहार की ओर अगुवाई करता है।

I. मूर्तिपूजकों का स्वैच्छिक अन्धापन (1:19–20)

लेथ सैमुएल कहते हैं कि ''बहुत से मिशनरियों ने इस बात का संकेत दिया है कि मूर्तिपूजकों को हमारी सोच से बढ़कर जानकारी होती है। वे जानते हैं कि एक परमेश्वर है। मूर्तिपूजकों के गोत्रों के बीच कोई नास्तिक नहीं होता। सम्पूर्ण धरती पर कोई भी ऐसे लोगों का गोत्र नहीं पाया गया है, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, जिसने किसी न किसी देवी देवता पर विश्वास न किया हो या किसी न किसी रीति से उपासना न करता हो.... मूर्तिपूजकों ने आदिकाल कहे जाने वाले समय में ही यह जान लिया था कि उन्होंने पाप किया था। जब कोई मसीही जन जाकर उनसे पाप के बारे में बात करता है, तो ज्यादातर पता चलता है कि वे उन तथ्यों स्वीकार करते हैं। ऐसा अन्दाजा लगाया जाता है कि उन्हें यह भी जानकारी थी कि उनके पापों को दण्डित किया जायेगा। वे दण्ड से भयभीत, और मृत्यु से डरे हुए लगते हैं (जैसा कि सभी जगह, सभी लोगों के साथ होता है)। वे जानते हैं कि पापों का प्रायश्चित होना जरूरी है, अतः वे अपने देवी देवताओं को सन्तुष्ट करने को प्रयास करते हैं।'' {1}

क. परमेश्वर की साक्षी निर्दोष है (1:19)

पौलुस का सबसे पहला बिन्दू यह है कि अन्यजातियाँ सच्चे परमेश्वर की साक्षी से अन्जान नहीं हैं। वह कहता है, ''इसलिए कि परमेश्वर के विषय का ज्ञान उनके मनों में प्रगट है, क्योंकि परमेश्वर ने उन पर प्रगट किया है'' (पद 19)। क्योंकि संसार की सारी जातियाँ एक ही मूल परिवार से विद्यमान हुई हैं (उत्पत्ति 10; प्रेरितों के काम 17:26), यह इस तथ्य को प्रगट करता है कि सभी जातियों को उस सच्चाई की थोड़ी

बहुत जानकारी रही होगी, जो मानवजाति को मूलरूप से प्रदान की गयी थी। पुरातत्व विज्ञान और इतिहास दोनों ही आदि काल से मानवीय धर्मो में बलिदान की व्यापकता को दर्शाते हैं। अनगर कहते हैं कि ''मनुष्य के पतन के पश्चात्, मानवजाति को परमेश्वर द्वारा दिये गये प्रकाशनों में सामान्यतः मूलतत्व को प्रगट करने के लिए अनेकों समानताएँ पायी जाती हैं। जैसे–जैसे मनुष्य मूर्तिपूजा की ओर गिरता गया, उतना ही उसका मूल स्रोत भ्रष्ट और भद्दा होता चला गया, और जिसका असर इस्राएल के पड़ोसियों द्वारा अनेकों देवी देवताओं को बलि चढ़ाने की रीति में प्रगट होने लगा।'' {2}

ओसिरिस मान्यता बतलाती है कि कितना अधिक प्रकाश इस मूर्तिपूजकों पर प्रगट किया गया था। इस ओसिरिस मान्यता के अनुसार, अच्छाई की उज्जवल आत्मा ने मानवजाति के उन पापों के बदले अपने आपको बलिदान कर दिया, जिसकी वजह से वे अपने अधिकार से वंचित हो गये थे। उससे और ''ईश्वरीय माता'' जिसमें सारे स्वभाव समाये हुए हैं, उन विश्वास करने वालों को बचाने के लिए कि ओसिरिस उन्हें दुर्बलता से बचाने के लिए धर्मी है, एक और आत्मा का प्रकटीकरण हुआ। अतः इस प्रकार ओसिरिस मत आगे बढ़ा। सच्चाई का धुँधला और बिगड़ा हुआ रूप वहाँ पर था, परन्तु सत्य मौजूद था।

ख. परमेश्वर की साक्षी सार्वभौमिक है (1:20)

परमेश्वर के पास अपने लिए इन आदि प्रकाशनों के अलावा एक ऐसा साक्षी है जो मनुष्य के द्वारा भ्रष्ट नहीं किया जा सकता – सृष्टि की साक्षी। पौलुस घोषणा करता है कि ''उसके अनदेखे गुण, अर्थात् उसकी सनातन सामर्थ्य और परमेश्वरत्व, जगत की सृष्टि के समय से उसके कामों के द्वारा देखने में आते हैं, यहाँ तक कि वे निरूत्तर है'' (पद 20)।

सारे लोग (1) इस सृष्टि के साक्षी के सामने बेपरदा हो गये (जिसे हम अधिकतर ''प्रकृति'' कहते हैं)। कवि लोंगफेलो बड़ी खूबसूरती से बयान किया है प्रकृति, ''परमेश्वर का सर्वाधिक पुराना नियम'' किस प्रकार से परमेश्वर के बारे में बात करता है।

और प्रकृति अर्थात् उस पुरानी धाय ने,
बच्चे को अपनी गोद में लिया,
और कहाः ''यह रही वह कहानी की किताब
जो तेरे पिता ने तेरे लिए लिखी है!''

उसने कहा, ''आ मेरे संग उन इलाकों में घूमने चल,

जहाँ अभी तक कोई नहीं गया;
और परमेश्वर के हाथों के द्वारा लिखी
उन बातों को पढ़, जिन्हें अभी तक किसी ने नहीं पढ़ा!''

और वह उस पुरानी धाई के साथ,
दूर दूर तक घूमा,
जो उसके लिए दिन और रात
विश्वव्यापी गीत गाती रही। {3}

परमेश्वर चाहते हैं कि हम प्रकृति से परमेश्वर की अनन्त सामर्थ्य और ईश्वरीयता के सत्य को सीखें। इन दो सच्चाईयों को उचित ढंग से सीखने का परिणाम, परमेश्वर की स्तुति और उसे प्रसन्न करने की व्यापक इच्छा होता है। आकाश में चमकते हुए तारागण और आसमानी शक्तियाँ, बहुतायत से इन दो सच्चाईयों की गवाही देती हैं, और उनकी गवाहियाँ सार्वभौमिक हैं। भजन संहिता 19 अध्याय पुष्टि करता है कि ''आकाश परमेश्वर की महिमा का वर्णन कर रहा है, और आकाशमण्डल उसकी हस्तकला को प्रगट कर रहा है.... न तो कोई बोली है और न कोई भाषा, जहाँ उसका शब्द सुनाई नहीं देता है।'' एक बार अब्राहम लिंकन ने कहा, ''मैं देख सकता हूँ कि किस प्रकार से एक आदमी के लिए नीचे इस पृथ्वी को देखकर एक नास्तिक होना किस प्रकार से सम्भव हो सकता है, परन्तु मैं कल्पना नहीं कर सकता हूँ कि कैसे वह आसमान की ओर देखकर यह कह सकता है कि कोई परमेश्वर नहीं है।'' एक फ्रांसिसी क्रान्तिकारी किसी किसान के सामने घमण्ड करके कहने लगा, ''हर वो चीज जो तुम्हें परमेश्वर का स्मरण कराती है, हम उसे तोड़कर नीचे लाने जा रहे हैं'' बड़े रूखेपन के साथ किसान ने जवाब दिया ''तो भाई, फिर सितारों को तोड़ लो!'' {4}

पौलुस फिर भी उन बातों को जो प्रकृति से सीखी जा सकती हैं, उन्हें सीमित कर देता है। प्रकृति एक अनन्त, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी और सर्वज्ञानी सृष्टिकर्ता की ओर ईशारा करती है, लेकिन उसके बाद इसकी आवाज विचलित व विफल हो जाती है। एस. डब्ल्यु. बोरेहाम कहते हैं, ''यह केवल यहां है,'' ''यह 1 भाग उस व्यक्ति का साथी है जो मुझसे कहता है कि उसे आराधना करने के लिए कलीसिया में जाने की कोई आवश्यकता नहीं है। वह परमेश्वर को प्रकृति के कण कण में पाता है। हम सभी लोग ईयान मैक्लॉरेन्स के मित्र को जानते हैं, जिसे अपने प्राण के लिए उसके द्वारा सुने गये सभी सन्देशों की तुलना में ढलते हुए सूरज के सामने बैठने से ज्यादा आशीष प्राप्त हुई। मुझे इस व्यक्ति की आलोचना में केवल यही

कहना है कि वह अति कपटी और बेईमान है। वह कहता है कि उसे प्रकृति में परमेश्वर नजर आता है। परन्तु उसके अन्दर उसके कोई गुण प्रगट नहीं होते। वह केवल मन–गढ़न्त बातें करने वाला है और उसे किसी धर्मविचारक विद्यालय में होना चाहिये। वह कहता है कि वह प्रकृति में परमेश्वर को पाता है। उसका मतलब है कि वह परमेश्वर को नीलपुष्प में पाता है। परन्तु प्रकृति नीलपुष्प नहीं है। प्रकृति के भीतर फूल और साँप दोनों ही आते हैं.... अगर ईमानदारी से कहें तो उसे केवल नीलपुष्प की धीमी खुशबू की ही नहीं, बल्कि साँपों के खतरनाक विषदन्तों की भी उपासना करनी चाहिये। उसे केवल कोयल की सुन्दर कूक की ही नहीं, बल्कि गिद्ध की खूनी चोंच की भी आराधना करनी चाहिये। उसे केवल चिकारे के मासूम रूप की नहीं, भेड़िये के खून से सने जबड़ों की भी उपासना करनी चाहिये।

रॉबर्ट लूईस स्टीवनसन् कुछ प्रेरणादायक पंक्तियों को लिखते हैंः

यहाँ चारों ओर फैले हुए हरे हत्यारे,
अपने शिकार करने की कला और जिन्दादिली के साथ,
कुण्डली मारने की कला के कारण फूलते हैं।
सन्धर्षपूर्ण जड़ें मिट्टी पाने के लिए लड़ती है।
जिस प्रकार से कोई भयभीत व निराश दुष्टात्मा हो,
प्रतिद्वन्दी लताएँ हवा की ओर जोर लगाती हैं।
हरे विजेता ऊपर आकाश से
अपने शिकारों के शरीरों को लटकाते हैं!
और देखों! दो डालियों के बीच गड्ढा अर्थात उरूमूल में
ओर्किड का प्रभाव बढ़ता है!
कितनी खामोशी से यह जंगल की लड़ाई
कभी न खत्म होने वाले, शत्रुओं के बीच चलती है
हाथापाई और दबाना, खींचातानी और पकड़ना,
बिना किसी चीख, और बिना हाफें हुए। {6}

प्रकृति, मौसमों, तारों और सूर्य की ओर ईशारा करते हुए कहती है कि ''अवश्य ही प्रभु है; वह अपनी शक्ति में अनन्त है।'' परन्तु मनुष्यों को इससे भी अधिक चाहिये। मनुष्य को एक व्यक्तिगत्

उद्धारकर्ता चाहिये, और प्रकृति इस जरूरत को पूरा नहीं कर सकती, क्योंकि प्रकृति क्षमा के बारे में कुछ नहीं जानती है। उसके नियम कड़े तथा कठोर हैं और वह उसके नियम तोड़ने वाले को कड़ा दण्ड देती है। वह हमें नैतिक आचरण नहीं सिखाती। जंगली व बीहड़ लोगों ने युगों से प्रकृति की गोद में बसेरा किया है और नरभक्षियों को उत्पन्न किया है! प्रकृति के पास आवाज है, परन्तु उनके पास हृदय नहीं है, जिससे मनुष्य की सबसे बड़ी समस्या अर्थात् पाप का कोई समाधान नहीं निकलता। यह उद्धारकर्ता का कोई जिक्र नहीं करती। सृष्टि में होकर परमेश्वर की अपनी साक्षी और छुटकारे के द्वारा स्वयं अपनी साक्षी प्रदान करने के लिए कोई तुलना नहीं की जा सकती। सृष्टि हमें केवल परमेश्वर के हाथों की कुछ कारीगरी के बारे में बताती है; परन्तु केवल कलवरी उसके हृदय को प्रगट करती है।

पौलुस आगे बताता है कि मानवजाति न केवल सृष्टि के द्वारा ही परमेश्वर की गवाही को सुन पाये हैं, बल्कि (2) स्वयं अपने लिए दी गयी गवाही के द्वारा निरूत्तर हो गये हैं। कई बार प्रकाश कम या हल्का हो सकता है, परन्तु वह वहाँ अवश्य होता और ''परमेश्वर की सामर्थ्य और उसकी ईश्वरीयता को'' स्थापित करने के लिए काफी होता हैं, जो मनुष्य को निरूत्तर कर देता है। लेकिन परमेश्वर की निर्दोष और सार्वभौमिक साक्षी के बावजूद भी, कुछ लोग सत्य का इन्कार करके नास्तिक बन जाते हैं; कुछ लोग और दलदल में धँस जाते, सत्य को बिगाड़कर मूर्तिपूजक बन जाते हैं। यही पौलुस का अगला विषय है।

II. अन्यजातियों का दुष्ट विश्वास (1:21–25)

परमेश्वर के अपने प्रति प्रदान किये गये प्रकाशन को स्वेच्छा से इन्कार करने के परिणाम को नास्तिकता कहते हैं और मनुष्यों के ज्ञान को महीमित करने को; झूठा धर्म। मनुष्य, मानवीय तर्कों को सराहता या उन्हें महिमा देता है और ईश्वरीय प्रकाशन को तुच्छ जानता है। जिसमें से एक का परिणाम मनुष्य द्वारा खुद अपनी रचनाओं की उपासना करना और दूसरे का परिणाम मूर्तियों की पूजा करना होता है।

क. परमेश्वर रहित कल्पनाओं के कारण मनुष्य के मन का फूलना (1:21)

''इस कारण कि परमेश्वर को जानने पर भी उन्होंने परमेश्वर के योग्य बड़ाई और धन्यवाद न कियाः परन्तु व्यर्थ विचार करने लगे, यहाँ कि उन का निर्बुद्धि मन अन्धेरा हो गया'' (पद 21)। पौलुस इस पद में दो मुख्य बातों पर जोर डालता है। जब मानव अपने विचारों में परमेश्वर को तुच्छ जानता है तो वह (1) विवेकशील रूप में अधार्मिक बन जाता है। जितना ज्यादा वह ज्ञान प्राप्त करता चला जाता है, उतना ही ज्यादा वह अपने बुद्धिवादी व अपने अविश्वास में मजबूत होता जाता है। वह विश्वास करता है कि मानवीय विज्ञान और दर्शनशास्त्र, परमेश्वर पर विश्वास को निर्अर्थक बना सकता है। {7}

लेकिन इसके पश्चात वह (2) और भी ज्यादा मूर्ख बन जाता है। परमेश्वर धोषणा करते है कि इस प्रकार के व्यक्ति का मन अन्धकार है। उसकी सारी बुद्धिमत्ता नाश हो जाएगी, जिस व्यक्ति ने परमेश्वर को अपने विचारों में तुच्छ जाना है, वह अहंकारी और मूर्ख या अज्ञानी ठहरता है। प्रत्यक्ष है जो व्यक्ति झूठों बातों के आधार पर आधारित होकर कहता है कि कोई परमेश्वर है ही नहीं, या परमेश्वर न्याय संगत नहीं है, वह अन्त में झूठे निष्कर्ष पर ही पहुँचेगा, चाहे उसके मध्यवर्ती कदम कितने ही तर्कपूर्ण क्यों न हों।

लोगों की नास्तिकता को प्रगट करने वाली आधुनिक ईश्वरीयता, आणविक विज्ञान के क्षेत्र में हाल ही हुए विकास से उत्पन्न हुए हैं। इस क्षेत्र में कार्य करने वाले कई वैज्ञानिक मानते हैं कि उन्होंने जीवन के कुछ बुनियादी रहस्यों का पता लगा लिया है। डिओक्सिरिबोन्यूक्लिक एसिड से कार्य करने पर, वैज्ञानिक सम्पूर्ण धरती पर जीवों को आकार प्रदान करने वाले बुनियादी अनुवांशिक नमूने का खुलासा कर रहे हैं। जिन दृष्टिकोणों को इसमें शामिल किया गया था, उनमें बहुत से अविश्वसनीय रूप में जटिल थे। इसके बावजूद भी एक ब्रिटिश वैज्ञानिक ने इस वाक्य को बोला, ''मुझे यह स्पष्ट जान पड़ता है कि जीवन निश्चय ही रासायनिक घटनाओं का परिणाम है। इससे बढ़कर, कि मुझे निश्चय है कि आने वाले एक या दो दशकों के भीतर हम अपने आप ही जीवन को उत्पन्न करने में सक्षम होंगे। मुझे अब परमेश्वर पर विश्वास करने की कोई जरूरत नहीं लगती।'' {8}

ख. मनुष्य द्वारा स्वरचित मूरतों का प्रभाव (1:22–25)

नास्तिकता का अगला कदम मूर्तिपूजा है। पौलुस दर्शाता है कि जब (1) मनुष्य किसी मूर्ति की रचना करता है तो क्या होता है। ''वे अपने आप को बुद्धिमान जताकर मूर्ख बन गए, और अविनाशी परमेश्वर की महिमा को नाशमान मनुष्य और पक्षियों और चौपायों, और रेंगनेवाले जन्तुओं की मूरत की समानता में बदल डाला''(पद 22–23)।

व्यूईस्ट इशारा करते हैं कि इस अनुच्छेद में इस्तेमाल किया गया शब्द ''बुद्धिमान'' यूनानियों के द्वारा किसी विद्वान या संस्कृतियों के जानकार और लेखों को लिखने में कुशल व्यक्ति के लिए इस्तेमाल किया जाता था। ''मूर्खों'' के लिए इस्तेमाल किया गया शब्द उस शब्द से जुड़ा है जिससे हमें ''मन्दबुद्धि'' शब्द प्राप्त होता है, जो हमें बेहतर ढंग से समझा सकते हैं कि यूनानियों का इससे क्या मतलब था। {9} ऐसा कहा जाता है कि मूर्तिपूजा आदिकालीन बाबुल से प्रारम्भ हुई। {10} और फिर वह सारे संसारभर में फैल गयी, जहाँ से उसने सारे अविश्वासियों को अपनी ओर खींच लिया और आज के दिन तक यह हमारे साथ विद्यमान है। इसने अपना कब्जा सर्वाधिक विद्वानों और आधुनिक लोगों पर भी कर रखा है।

पौलुस दर्शाता है कि जब एक बार जब मनुष्य के दिमाग में मूर्ति की तस्वीर उत्पन्न हो जाती है, उसके बाद ज्यादा समय नहीं बीतता (2) कि उस व्यक्ति को उस मूर्ति की शैतानिक शक्तियाँ पूरी तरह से आराधना या उपासना करने के मूर्तिपूजक तरीके से घेर लेती हैं, जैसा कि वचन में स्पष्ट तरीके से लिखा है। ''वे.... अविश्वासियों अर्थात् मूर्तिपूजकों के समान हो गए, और उन्होंने अपने कामों का सही फल पाया। और उन्होंने अपनी मूर्तियों की सेवा कीः जो उनके लिए एक फन्दा था। जी हाँ, उन्होंने अपने पुत्र और पुत्रियों को शैतान के सामने बलि के रूप में चढ़ाया, और उन्होंने मासूमों का खून बहाया, यहाँ तक कि खुद अपनी सन्तानों का लहू, जिन्हें उन्होंने कनान के देवताओं के सामने बलिदान कर दिया''(भजन संहिता 106:35–38; साथ ही देखें लैव्यवस्था 17:7; 2 इतिहास 11:15; 1 कुरिन्थियों 10:19–21)।

मूर्तिपूजा आज सारे संसारभर में जोर–शोर से फैल चुकी है। शिक्षा, संस्कृति और प्रगति मनुष्य को मूर्तिपूजा से छुटकारा देने के लिए ज्यादा कुछ नहीं कर पाते, क्योंकि यह एक आत्मिक मामला है। अन्धविश्वास मूर्तिपूजा में बड़ी भूमिका को निभाता है, परन्तु इसकी मुख्य जड़ शैतान है, और आधुनिक शिक्षा जितना परमेश्वर को नजरअन्दाज करती है, उतना की वह शैतान को भी करती है।

उदाहरण के लिए, भारत में लगभग सभी चीजों को पवित्र माना जाता है। साँप, मगरमच्छ, बन्दर और गाय की अलग–अलग श्रेणियों में उपासना की जाती है। यहाँ पर किसी गाय की हत्या करना किसी मनुष्य का कत्ल करने के बराबर है, और उसका माँस खानेवाला व्यक्ति नरभक्षी कहलाता है। भारत खुद अपने करोड़ों लोगों को भोजन उपलब्ध नहीं करा सकता, जबकि यहाँ पर करीब दो करोड़ गायों को इधर–उधर मुँह मारते हुए, यहाँ के नागरिको से भोजन सम्बन्धी प्रतिस्पर्धा करने तथा कई बार खड़ी फसलों को नाश करने की अनुमति है। यहाँ तक कि भारत सरकार भी देश को गाय की भक्ति से आजाद नहीं करा सकती है, उसके ऐसा करने के प्रयासों को अन्धविश्वासियों के कठोर विरोध का सामना करना पड़ता है। {11}

ठीक ऐसा ही पुराने जमाने में भी था। यूनानी लोग प्राचीनकाल के विद्वान थे, फिर भी रोमी विजेता मजाकिया रूप में लिखता है कि ऐथेंस में ''मनुष्य की तुलना में ईश्वर को ढूँढ़ना आसान था।''

झूठी धार्मिक प्रणाली ने लोगों को विवेकीय और आत्मिक दोनों ही क्षेत्रों में गुलाम बना लिया था। पौलुस विवेकीय गुलामी को इस वाक्य में बयान करता हैः ''इस कारण परमेश्वर ने उन्हें उनके मन की अभिलाषाओं के अनुसार अशुद्धता के लिए छोड़ दिया कि वे आपस में अपने शरीरों का अनादर करें'' (पद 24)।

कनानियों की मूर्तिपूजा इसका उदाहरण है। ''कनानी लोग अत्याधिक खतरनाक और अपमानजक मूर्तिपूजा के तरीके के गुलाम थे, जिससे अनैतिकता को बढ़ावा मिलता था। सन् 1929–37 में पाया गया कि, रास शर्मा के (प्राचीन सीरिया का युगारित) द्वारा रचित कनानियों का धार्मिक साहित्य ऐल, बाल और

पवित्र मानी जाने वाली वैश्या अनाथ, अशेरा और ऐस्टारटे की उपासना के बारे में बताता है। यह साहित्य पुराने नियम में प्रदर्शित कनानियों की धर्म की आड़ में की जाने वाली कामुकता और अनैतिकता से पूरी रीति से सहमत है। जादू–टोना करने का सामान, छोटी मूर्तियाँ और उनका साहित्य मिलकर यह प्रदर्शित करता है कि कनानी धर्म मानवीय बलि चढ़ाने की गतिविधियों, साँप की पूजा, पवित्र वैश्या और किन्नर पुजारियों की अधिकता के साथ कितना ज्यादा काम–वासना केन्द्रित था। सामाजिक विकृति की धृणित गहराई जो कनानियों की कामुकता की उपासना की ओर अगुवाई करती है उसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते हैं।'' {12}

पौलुस कामुकता की गुलामी का वर्णन करने से आत्मिक गुलामी की ओर आगे बढ़ता है, जो मूर्तिपूजा का परिणाम है। वह कहता है कि परमेश्वर ने उनको छोड़ दिया ''क्योंकि उन्होंने परमेश्वर की सच्चाई को बदलकर झूठ बना डाला, और सृष्टि की उपासना और सेवा की, न कि उस सृजनहार की जो सदा धन्य है। आमीन'' (पद 25)।

मूलरूप में, जब एक व्यक्ति किसी मूर्ति का निर्माण करता है तो उसकी यह कोशिश रहती है कि उसकी रचना परमेश्वर का प्रतिनिधित्व करे। वह चाहता है कि उसके द्वारा लोगों के मन में पवित्र चीजों के, बलवन्त व धार्मिक विचार उत्पन्न हों। परन्तु अन्त में परिणाम हमेशा एक जैसा ही होता है। वह खुद अपनी बनायी हुई मूरतों का गुलाम बन जाता है। कलीसिया का इतिहास इसके अति आकर्षक उदाहरणों को प्रस्तुत करता है। जैसा कि इतिहासकार मिलर कहते हैं, ''धर्मगुरू या श्रद्धालु लोग चाहे प्रतिमाओं को कितना भी आदर का प्रतीक या भक्ति की वस्तु मानकर अन्तर बताने का प्रयास करें, परन्तु इसमें कोई सन्देह की बात नहीं है कि चाहे यह अज्ञानता में हो या अन्धविश्वासी दिमाग के चलते हो, इसका इस्तेमाल वह आदर, वह प्रतिमाओं की पूजा, चाहे वह मूर्तियों की पूजा हो या तस्वीरों की, निश्चित रूप से मूर्तिपूजा की ओर अपभ्रष्ट करती है।'' {13}

दूसरी आज्ञा हमें मूर्तियों को बनाने, उनकी उपासना करने तथा उनकी सेवा करने से मना करती है (निर्गमन 20 अध्याय)। परमेश्वर अपनी आज्ञाओं को तोड़ने के सम्बन्ध में चेतावनी देता है कि ऐसा करने से उसका धर्मी क्रोध भड़क उठता है और उन्हें ही नहीं, बल्कि आज्ञा का उल्लंघन करने वालों के वंशजों को भी उसका सोच से परे दण्ड भुगतना पड़ेगा। रोमियों 1 की बाकी बची हुई आयतें इस बात की सत्यता के प्रमाण प्रस्तुत करती हैं।

III. अन्यजातियों का मनमौजी व्यवहार (1:26–32)

जो परमेश्वर को त्याग देते हैं, वे अन्त में खुद को भी परमेश्वर की ओर से त्यागा हुआ पाते हैं। वह मनुष्य को उसकी इच्छा पर छोड़ देता है, और यह एक अत्याधिक खतरनाक तरीका है।

क. वे नैतिक रूप में भष्ट हो गए (1:26–27)

पौलुस इन दो वचनों में वर्णन करता है कि जो लोग परमेश्वर को त्याग देते हैं, वे किस प्रकार अपने आपको अन्त में शर्मसार करनेवाले खतरनाक और अस्वाभाविक कामों, सदोम के घिनौने पापों में, उन पापों में फँसा लेते हैं, जिसके कारण परमेश्वर को लूत के जमाने में आसमान से गन्धक और आग की बारिश करनी पडी थी (उत्पत्ति 19 अध्याय)। यह पाप हमेशा परमेश्वर के परित्याग के साथ पाये जाते हैं (2 पतरस 2:6; यहूदा 7)। वे आज हमारे साथ में रहते हैं, और वे बहुत ज्यादा ऊधम करने वाले, उपद्रवी और हमेशा आगे दिखने वाले होते जा रहे हैं।

संयुक्त राज्य के अन्दर, जिन्होंने अपने आपको इस प्रकार के भ्रष्ट कामों में धकेल दिया है, एक बड़े समूह के रूप में सरकार से भ्रष्ट जीवन के तरीके को मान्यता देने की माँग कर रहे हैं। अश्लील चित्रों को छापने वाले प्रेस काम–वासना व अस्वाभाविक सम्बन्धों से भरे साहित्य को हर वर्ष प्रसारित कर रहे हैं। {14} समाज के इस खण्ड की कहानियाँ सचित्र प्रकाशनों में छप रहीं है और यहाँ तक कि सम्मानजनक समाज में भी सामान्य होती चली जा रही हैं।

जो कुछ अमेरिका के भीतर सच है, वही ब्रिटेन में भी सत्य है, यहाँ के सार्वजनिक जीवन पर इस प्रकार का भ्रष्ट समाज अपना क़ब़ करता चला जा रहा है। अधिकतर ये लोग साम्प्रदायिक तत्वों से जुड़े होते हैं। ब्रिटिश होम कार्यालय ने कुछ वर्षों पहले इस विषय पर अपने बयान में कहा कि एक वरिष्ठ सरकारी अधिकारी, आवासी युवा विकास के लिए कार्यकर्ताओं का चयन करने के लिए जिम्मेदार था, वह जानबूझ कर कुछ खास कामों के लिए इस प्रकार के भ्रष्ट लोगों को चुना करता था। {15} जब किसी समाज में आधिकारिक तौर पर इस प्रकार के कार्यों को इजाजत मिल जाती है तो उस समाज की बुनियाद से दुर्गन्ध आने लगती है।

ख. वे मानसिक रूप से भ्रष्ट हो गए (1:28–32)

नैतिक भ्रष्टता के साथ–साथ मानसिक भ्रष्टता भी आगे बढ़ती है। पौलुस इस मानसिक भ्रष्टता की वजह को (1) प्रस्तुत करता है। ''जब उन्होंने परमेश्वर को पहिचानना न चाहा, तो परमेश्वर ने भी उन्हें उनके निकम्मे मन पर छोड़ दिया कि वे अनुचित काम करें'' (पद 28)। इस अध्याय में हम पर तीन बार इस बात को दोहराया गया है कि जिन लोगों ने परमेश्वर को छोड़ दिया, उन्हें परमेश्वर ने भी छोड़ दिया (पद 24, 26, 28)। यह साधारणतः परमेश्वर का न्यायिक और धार्मिक दण्ड है, जिसके अर्न्तगत् वह मनुष्यों

को उस भयानक अन्त वाले मार्ग में जाने की अनुमति देता है जिसमें जाने का चयन उन्होंने खुद किया होता है। जिस प्रकार से नैतिक भ्रष्टता के परिणाम कामुकता और वासना में लिप्त पाप होते हैं, उसी प्रकार मानवीय भ्रष्टता सब प्रकार बुराईयों को उत्पन्न करती है।

पौलुस इस मानसिक भ्रष्टता के परिणामों के बारे में लगातार वर्णन (2) करता है और वह एक के बाद एक शब्दों का इस्तेमाल करते हुए कहता है कि यदि मनुष्य असंयमित हो जाए तो उसकी बुराई की कोई सीमा नहीं होती। पद 29–32 में बताये गये पाप अनेकों श्रेणियों में आते हैं।

गलत विचारों का परिणाम (क) मनुष्य का अस्थिर चरित्र होता है। मनुष्य अधार्मिक, दुष्ट, डाह करने वाला, चिकनी चुपड़ी बात करने वाला, लोभी और धोखा देने वाला बन जाता है। वह पूरी तरह से बुराई से भर जाता, परमेश्वर को नफरत करने वाला, तुच्छ जानने वाला, घमण्डी, स्वाभाविक आकर्षण रहित, कठोर और दयारहित हो जाता है। इसका परिणाम (ख) मनुष्य का अस्थिर आचरण भी हो जाता है। मनुष्य व्याभिचार और हत्या का दोषी बन जाता है। वे अभिभावकों के अधिकारों को भ्रष्ट करके अपने कर्तव्यों को अपमानजनक तरीके से पूरा करते हैं। गलत विचारधारा का परिणाम (ग) गलत प्रकार की बातें होती हैं। मनुष्य बुराईयों की खोज करने वाला बन जाता है और परमेश्वर कहता है कि वे समझ नहीं रखते। अन्ततः गलत विचारधारा का परिणाम (घ) भ्रष्ट मानवीय संगति होता है। पौलुस कहता है कि ''जो परमेश्वर की यह विधि जानते हैं कि ऐसे–ऐसे काम करने वाले मृत्यु के दण्ड के योग्य हैं, तौभी न केवल आप ही ऐसे काम करते हैं वरन् करने वालों से प्रसन्न भी होते हैं'' (पद 32)।

यह मुद्दा परमेश्वर को अन्यजातियों के प्रति है। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि वह उनके लिए कहता है कि उनके पास ''कोई बहाना'' नहीं है (पद 20)। चाहे वे ''गैरमसीही'' हो जो पौलुस के समय में यूनान में या रोम में रहते थे, चाहे वह हमारे समय में आदियुग के जंगलों में रहते हैं, या जो सिर्फ नामधारी है और परमश्वेर को अपने विचारों से दूर रखते हैं, सभी लोग परमेश्वर के सामने दोषी और बे–बहाना हैं। जिस प्रकार से यूहन्ना ने कहा था, मनुष्य ''पहले ही दोषी ठहर चुका है'' (यूहन्ना 3:18)। अगर ईश्वरीय दया मध्यस्थता न करे तो उसका मामला निराशाजनक है।

कपटियों का दोष

2:1–16

I. कपटियों द्वारा न्याय का वर्णन (2:1–6)

क. वह कैसा महसूस करता है (2:1–2)

ख. वह क्या पाता है (2:1, 3)

ग. वह क्या भूल जाता है (2:4)

घ. वह किन बातों का सामना करता है (2:5–6)

II. कपटियों पर न्याय का वर्णन (2:7–16)

क. उसके कामों के अनुसार उसका न्याय (2:7–10)

1. परमेश्वर व्यक्ति के व्यवहार के कारण को तौलता है (2:7–8)
2. परमेश्वर व्यक्ति के व्यवहार के परिणाम को तौलता है (2:9–10)

ख. उसकी योग्यता के अनुसार उसका न्याय (2:11–16)

1. परमेश्वर का न्याय विभेदकारी है (2:11–15)
    1. वह व्यक्ति के फायदे को तौलता है (2:11–12)
    2. वह व्यक्ति के स्वभाव को तौलता है (2:13–15)
2. परमेश्वर का न्याय नाशकारी है (2:16)

किसके बारे में रोमियों 2:1–16 में ये बातें कही जा रही हैं, इस बात को लेकर बहुत से अलग विचार हैं। जैसे कि, स्कोफील्ड इस अनुच्छेद में गैरमसीहियों के प्रेरितों पर परमेश्वर के न्याय को देखता है, जो और मूर्तिपूजकों से किसी भी रीति से कम नहीं थे। पौलुस के समय के प्रसिद्ध गैरमसीही विद्वान, निम्न आचरण वाले मूर्तिपूजकों की अंधविश्वास से भरी हुई मूर्तिपूजा का मजाक बनाते हैं, जिनसे उनका मन्दिर भरा रहता है। परन्तु खुद अपनी महाशक्तियों को शक्ल प्रदान करने के लिए उनके पास मूर्तियों को छोड़ और कोई चारा नहीं है। बल्कि, उनकी प्रशन्सा करते हुए वे उपनामों या छवियों की पूजा करते हैं। जबकि बड़ी–बड़ी बातों को करने वाले अधिकतर अनैतिकता और अनियमितताओं के दोषी पाए जाते हैं। उदाहरण के लिए, रोमी सम्राट मारकुस अयुरिलियस, एक प्रमुख विद्वान था। उसके विचार उत्कृष्ट, प्रेरणादायक व मान्य थे। फिर भी उसके राज्यकाल में पाया गया कि मसीहियों पर बहुत कठोरता और सताव होता था, जिनका केवल इतना सा दोष था कि वे अयुरिलियस के सिद्धान्त से बेहतर सिद्धान्तों का प्रचार किया करते थे।

दूसरे टिप्पणीकर्ता इस अनुच्छेद को यहूदियों पर दोष लगाते हुए पाते हैं, जो हमेशा अपने आपको स्वर्ग के पसन्दीदा जन समझकर अपने संगी साथियों के साथ कोई व्यवहार नहीं करते। यहूदी लोग अन्यजातियों के लोगों को चढ़ी हुई, अपमानजनक और नफरत भरी निगाहों से देखते हैं, और जिन्हें वे ''अशुद्ध'' श्रेणी में रखते और उन पर ''कुत्ते'' का तमगा लगाते हैं। परन्तु जिस सच्चाई को रखने का वे दावा करते हैं, उसके प्रति उनका व्यवहार चरनी के एक कुत्ते के स्वभाव की तरह होता है। मसीह में प्रदान की गयी आशीषों को प्राप्त करने की इच्छा के न होने पर भी, यदि कोई उन आशीषों को अन्यजातियों में बाँट देने की बात करता तो वह तुरन्त भड़क उठते थे (प्रेरितों के काम 22:21–23)। वह खुद भी इन

कपटियों के बीच में से होकर गुजर रहा था, यह एक ऐसा बिन्दू है जिसका जिक्र पौलुस रोमियों के इस प्रारम्भिक अध्याय में करता है।

शायद रोमियों 2:1–16 को देखने का सबसे सटीक नजरिया यह है कि परमेश्वर किसी कपटी की जाति, सिद्धान्त, संस्कृति और आचरण देखे बगैर उन पर अभियोग लगाता है। इस वार्तालाप में यहूदी और गैर यहूदी दोनों ही शामिल हैं, जबकि यहूदियों की तुलना में गैर यहूदी लोग ज्यादा प्रकाश में नजर आते हैं। यह इस बात को भी दर्शाता है कि, इब्रानियों के खिलाफ परमेश्वर का पहला न्याय तब तक शुरू नहीं होता जब तक हम पद 17 के उस वचन तक नहीं पहुँचते, ''यदि तू यहूदी कहलाता है''।

I. कपटियों द्वारा न्याय का वर्णन (2:1–6)

पौलुस बस अभी खुले तौर पर सकल और लज्जाजनक अईश्वरीय पापों के खिलाफ परमेश्वर के अभियोग को प्रगट करके चुप ही हुआ था। अब वह अपना ध्यान ''आदरणीय'' पापियों की ओर लगाता है, जो अपने आपको दूसरों से बेहतर समझते हैं और जिन पापों को धृणा करने का दिखावा करते हैं, उन्हीं में आप भी गिर जाते हैं।

क. एक कपटी कैसा महसूस करता है (2:1–2)

''अतः हे दोष लगानेवाले, तू कोई क्यों न हो, तू निरूत्तर है; क्योंकि जिस बात में तू दूसरे पर दोष लगाता है उसी बात में अपने आप को भी दोषी ठहराता है; इसलिए कि तू जो दोष लगाता है स्वयं भी वही काम करता है'' (पद 1)। कपटी महसूस करता है कि दूसरों के पाप उसके पापों की तुलना में बहुत धृणित हैं। वह अपनी तुलना एक पियक्कड़, वैश्या और उपद्रव करने वाले के साथ में करता है, और अपनी कलीसिया में सदस्यता, नैतिकता और आदरणीय होने पर धमण्ड करता है। यह तुलना निश्चय ही, अपनी काफी बढ़ाई करने वाली होती है। जो गलती यह व्यक्ति करता है, हालाँकि वह बहुत ही सरल और बहुत सामान्य है। वह अपने आपकी तुलना गलत स्तर के लोगों के साथ में करता है।

परमेश्वर मनुष्य का न्याय उसके खुद के चुने गये स्तर के अनुसार नहीं करता; परन्तु उसका न्याय उसके चुनाव से होता है। परमेश्वर का न्याय स्तर उसकी व्यवस्था है, और वह वो व्यवस्था है जिसका वर्णन प्रभु यीशु मसीह ने अपने पहाड़ी उपदेशों में किया था। प्रभु यीशु के द्वारा कही गयी वे ऊँची और पवित्र बातें खुद उसके द्वारा दैनिक जीवन के तनाव और दबाव में व्यवहारिक रूप से जीवनयापन की गयीं। यदि लोग अपने आपकी तुलना किसी और व्यक्ति से करना चाहते हैं, तो उन्हें अपनी तुलना यीशु मसीह के साथ में करनी चाहिये; और जब वे ऐसा करेगें, तो कपट और आत्म–सन्तुष्टि के लिए कोई स्थान नहीं बचेगा।

कपटी का पाप यह होता है कि वह दूसरों के पापों के प्रति तो बहुत नाराजगी जाहिर करता है, परन्तु खुद अपने पापों में मग्न रहता है। दाऊद इसका एक जबरदस्त उदहारण है। मानवीय स्तर सम्भवतः जितना गम्भीर पाप किया जा सकता था, दाऊद ने वह पाप किया था। दाऊद ने उस समय पर, अपने ही योद्धा की पत्नी के साथ में उस समय व्याभिचार किया, जब उसका पति दाऊद के और भी जवानों के साथ में युद्धसीमा पर प्रथम पंक्ति पर युद्ध कर रहा था। फिर उसने अपने पापों पर पर्दा डालने और उस योद्धा को उसकी पत्नी के साथ सोने का मौका देने की इच्छा से बुलवा भी लिया। उसके बाद उसने अपने सेनापति योआब के नाम इस मनसा से मुहरबन्द पत्र भेजा कि ऊरिय्याह सर्वाधिक धमासान युद्ध वाले क्षेत्र में सबसे आगे पहुँचाकर छोड़ दिया जाए। और अन्त में जब यह खबर आयी कि वह व्यक्ति मारा गया, तो उसने उसने ऊरिय्याह की विधवा से विवाह कर लिया।

कुछ समय के लिए तो सब कुछ ठीक–ठाक नजर आया और ऐसा लगा कि जैसे वह अपने पापों पर पर्दा डालने में कामयाब रहा, क्योंकि राजा यरूशलेम के अन्दर लगातार इस तरह से राज्य और न्याय करता रहा, जैसे कुछ हुआ ही न हो। तत्पश्चात् अचानक नातान नबी आकर उसके किये गम्भीर पापों की याद दिलाता है। वह उसे एक गरीब व्यक्ति की कहानी सुनाता है, जिसके पास एक सुन्दर भेड़ के अलावा और कुछ भी नहीं था। जिसकी भेड़ को उसी के धनी पड़ोसी के द्वारा उसके घर में आए एक मेहमान की मेज सजाने के लिए चुरा लिया गया था। दाऊद अति क्रोधित हो उठा और कहा, ''यहोवा के जीवन की शपथ, जिस मनुष्य ने ऐसा काम किया, वह प्राण दण्ड के योग्य है; और उसको उस भेड़ की बच्ची का चौगुना भर देना होगा, क्योंकि उसने ऐसा काम किया है और कुछ दया नहीं की'' (2 शमूएल 12:5–6)। और उसी समय नातान का विवेक को भेदने वाला वाक्य था, ''तू ही वह मनुष्य है।''

''क्योंकि जिस बात में तू दूसरे पर दोष लगाता है, उसी बात में अपने आपको भी दोषी ठहराता है।'' दूसरों के पापों पर नाराज होना और अपने पापों में मग्न होना बहुत ही आसान काम है। यही कपट का निचोड़ है। ''कटप'' एक ऐसे शब्द से बना है जिस अर्थ है ''मंच पर अपने किरदार को अदा कर देना।'' एक कपटी एक अभिनेता के समान है। वह दूसरों को दिखाने के लिए एक बड़ा अच्छा नाटक तो करता है लेकिन, जैसे दाऊद को पता चला और पौलुस घोषणा करता है, कपटी परमेश्वर को धोखा नहीं दे सकता। ''लेकिन हम जानते है कि ऐसे–ऐसे काम करनेवालों पर परमेश्वर की ओर से ठीक–ठाक दण्ड की आज्ञा होती है'' (2:2)।

ख. कपटी क्या पाता है (2:3)

''हे मनुष्य, तू जो ऐसे–ऐसे काम करनेवालों पर दोष लगाता है और आप वे ही काम करता है; क्या यह समझता है कि तू परमेश्वर की दण्ड की आज्ञा से बच जाएगा?'' कपटी को पता चलता है कि उसके

पापों को पकड़ने का एक रास्ता है; और जो वो बोता है वही काटता है। एक पुरानी इण्डोनेशियन कहानी धार्मिक कपट को बखूबी बयान करती है। यह एक चीते की पूँछ की कहानी है।

इस कहानी के अनुसार, एक इण्डोनेशियन किसान अपने गाँव वापस जा रहा था कि अचानक जंगल के रास्ते में किसी खतरनाक संकट को देखकर उसकी आँखें फटी रह गयीं। वह सड़क के किनारे पर एक चीते की पूँछ को देख सका और, ध्यान से देखकर उसे पता चला कि वह एक बहुत ही बड़े और खूँखार चीते की पूँछ है। यह चीता उसका इन्तजार कर रहा था। धक्का लगने का नाटक करते हुए किसान ने अपनी दरान्ती को नीचे गिरा दिया, और आगे बढ़कर चीते को उसकी पूँछ से पकड़ लिया। बड़ी जोरदार गर्जन के साथ चीते ने उसकी पूँछ को छुड़ाने का प्रयास किया, लेकिन जितना ज्यादा वह गुर्राया और झपटा, उतना ही ज्यादा मजबूती से किसान ने उसको दबोच कर रखा।

यह सन्घर्ष कुछ समय तक यूँ ही चलता रहा, और फिर, जब किसान को ऐसा महसूस होने लगा कि अब वह उसे और ज्यादा देर तक नहीं सम्भाल सकता है, उसी समय वहाँ पर एक इण्डोनेशियन पुजारी आ गया। उस पुजारी ने उस दृश्य का बड़ी रूचि के साथ जायजा लिया और जब वह वहाँ से जाने पर ही था तो किसान ने उसे पुकारा।

वह रोते हुए कहने लगा, ''हे महात्मा, कृप्या मेरी दरान्ती उठाकर इस चीते को मार डालो। अब मैं इसे ज्यादा देर तक नहीं पकड़े रह सकता।''

उस पुजारी ने लम्बी सी साँस ली और उत्तर दिया ''मेरे मित्र, यह मैं बिल्कुल नहीं कर सकता। मेरे धर्म के अनुसार मुझे किसी भी प्राणी को मारने की अनुमति नहीं है।''

किसान ने पुनः जोर लगाकर चीते की पूँछ को पकड़ा। और उसने कहा ''पुजारी जी, क्या आप यह नहीं देख सकते कि यदि आपने इस चीते को नहीं मारा तो यह चीता मुझे मार डालेगा। निश्चय ही, मनुष्य का जीवन किसी भी जानवर के जीवन से ज्यादा कीमती है।''

पुजारी ने अपने कपड़ों कां सम्भालते हुए अपनी आस्तीन को चढ़ाया। इस बारे में उसने कहा ''इस विषय पर मैं बोल नहीं सकता। इस जंगल में चारों ओर मैं चीजों को शिकार करते और उनका शिकार होते हुए देखता हूँ। मैं इन सब बातों के लिए जिम्मेदार नहीं हूँ, और न ही मैं उसकी मदद कर सकता हूँ। परन्तु मेरे लिए मारना.... आह, मैं ऐसा नहीं कर सकता हूँ।''

उसी समय चीते ने जोरदार दहाड़ मारी और अपनी पूँछ को बलपूर्वक खींचा। किसान पसीने से तरबतर हो गया था। वह पुजारी जाने के लिए तैयार था। हताश किसान सिसकते हुए बोला, ''हे प्रिय महात्मा, कृप्या मत जाओ! यदि इस जानवर को मारना आपके धर्म के खिलाफ है, तो कम से कम आप आकर इसकी पूँछ पकड़ ले ताकि मैं उसको मार सकूँ।''

पुजारी ने रूककर इस बात पर ध्यान दिया। और यह कहते हुए वह तैयार हो गया कि, ''शायद यह काम मैं जरूर कर सकता हूँ, किसी जानवर की पूँछ को पकड़ने में कोई बुराई नहीं है।'' उसके पश्चात् वह ध्यान से उस खूँखार जानवर के पास गया और किसान के साथ उस चीते की पूँछ को पकड़ लिया। ''क्या पुजारी जी, आपने उसे पकड़ लिया है?'' किसान ने हाँफते हुए पूछा, ''क्या आपने उसे मजबूती से पकड़ लिया है?''

पुजारी ने कहा, ''हाँ, हाँ, लेकिन तुम इसके छूटने से पहले जल्दी से इसका काम तमाम कर दो।'' बड़े आराम से किसान ने अपने कपड़ों को साफ किया। धीरे से उसने अपनी टोपी को उठाया और पहन लिया। बड़ा सोच–विचार करने के बाद उसने अपनी दरान्ती को उठाया। फिर उस पुजारी को नमस्कार करने के पश्चात् किसान घर जाने लगा।

''अरे भाई, तुम कहाँ जा रहे हो?'' अचानक उस पुजारी ने जोर से आवाज लगाते हुए कहा, ''मैं तो सोच रहा था कि तुम इस चीते को मारने वाले हो।''

किसान ने अपनी कमीज की आस्तीनों को ऊपर किया और रूक गया। उसने उत्तर दिया ''प्रिय पुजारी जी, आप संसार के सबसे महान शिक्षक हो। आपने मुझे अपने सिद्धान्तों और धर्म का कायल बना दिया है। अब मैं देख सकता हूँ कि इन पिछले वर्षों में मैं कितना गलत था। मैं इस चीते को नहीं मार सकता, क्योंकि यह हमारे धार्मिक सिद्धान्तों के खिलाफ है। जिस प्रकार से आपने मुझे सिखाया कि हम अपने चारों ओर अनेकों चीजों को शिकार करते और शिकार होते हुए देखते हैं। हम इन सारी बातों के लिए जिम्मेदार नहीं हैं, परन्तु हम जैसे पवित्र लोगों के लिए, जैसा कि आपने कहा, किसी की हत्या करना नामुमकिन है। अब मैं वहाँ गाँव में जा रहा हूँ, अतः आपको तब तक इस चीते को सम्भालना पड़ेगा, जब तक कि कोई कठोर मन वाला व्यक्ति यहाँ से नहीं गुजरता, जो हमारी तरह पवित्र विश्वास की ऊँची बातों से प्रेरित न हो। शायद आप उसे भी परिवर्तित करने में कामयाब हो जाओ, जैसे कि आपने मुझे बड़ी सफलता से परिवर्तित कर दिया।'' और इन बातों के साथ किसान वहाँ से चला गया।

यह कहानी हमारी दुःखती रग को छूती है। कोई भी कपटियों को पसन्द नहीं करता है। हम यह सोचते है कि अन्त में वह अपने कपट का फल पाएगा। परमेश्वर निश्चित करता है कि अवश्य ही ऐसा होगा। ''हे मनुष्य, तू जो ऐसे–ऐसे काम करनेवालों पर दोष लगाता है और आप वे काम करता है; क्या यह समझता है कि तू परमेश्वर की दण्ड की आज्ञा से बच जायेगा?''

हम लोग इण्डोनेशियन व्यक्ति की दन्तकथा से निकलकर परमेश्वर के वचन की ओर चलते हैं और ऊड़ाऊ पुत्र की कहानी में बड़े भाई को स्मरण करते हैं। यदि वहाँ पर कोई धर्मनिष्ट धोखा हुआ था तो वह यही था। यदि कभी किसी कपटी ने स्वयं अपने आपको धोखा दिया था तो वह यही था। वह इस बात को लेकर अति दुःखी था कि उसके छोटे भाई को पूरी तरह क्षमा करके फिर से परिवार में स्वीकार कर लिया

गया है, उसने उस उत्सव में भाग लेने से ही इन्कार कर दिया। जब उसका पिता उसके पास उस जेवनार में हिस्सा लेने के निवेदन को लेकर आया तो बडे भाई ने वहाँ अपने आपको धार्मिक ठहराते हुए एक भाषण दे दिया। उसने उत्तर दिया, ''देख, मैं इतने वर्ष से तेरी सेवा कर रहा हूँ, और कभी भी तेरी आज्ञा को नहीं टाला, तौभी तू ने मुझे कभी बकरी का एक बच्चा भी नहीं दिया कि मैं अपने मित्रों के साथ आनन्द करता। परन्तु जब तेरा यह पुत्र, जिसने तेरी सम्पत्ति वैश्याओं में उड़ा दी है, आया, तो तूने उसके लिए पला हुआ बछड़ा कटवाया'' (लूका 15:29–30)

आप इस दलील में 'मैं' 'मेरा' और ''मुझे' पर गौर कीजिये। ध्यान दें कि किस प्रकार उसने उस पश्चातापी ऊड़ाऊ का भाई कहलाने से भी इन्कार कर दिया – उसने कहा ''यह तेरा बेटा।'' ध्यान दें कि किस प्रकार उसके धोखेबाज मन में भी दूर देश में जाना था। वह विवाह करना भी चाहता था! वह भी उन परम्पराओं को ठुकराना चाहता था, और अपने जीवन जीने की शैली को प्रस्तुत करना चाहता था! परन्तु उसमें इन दोनों लड़कों में केवल यह ही फरक था कि छोटे लड़के में ज्यादा साहस था और वह कपटी नहीं था। छोटा बेटा अपने शारीरिक रूप में किये गये पापों के लिए दोषी था, जबकि बड़ा भाई, अपने घमण्ड, कड़वाहट, जिद्दीपन और अपने कपट के साथ विन्यासपूर्ण अर्थात् आत्मा के पापों के लिए दोषी था। वह जितना अपने छोटे भाई से नाराज था, उतना ही अपने पिता से भी क्रोधित था, और उसे किसी भी रीति से जीतना मुश्किल था। यह आरोप कि ''तुम भी ऐसा ही करते हो'' उसके जीवन के बाहरी रूप में निर्दोष और आदरणीय जीवन पर बड़े–बड़े अक्षरों से लिखे जा सकते है।

इसके अलावा प्रार्थना करते हुए फरीसी और चुंगी लेने वाले की कहानी को देखें (लूका 18:9–14)। (खुद प्रभु ने इस बात को कहा कि यह दृष्टान्त उन लोगों को प्रगट करने के लिए रखा गया है ''जो अपने आप में भरोसा रखते हैं कि वे धर्मी हैं और वे दूसरों को तुच्छ जानते हैं) चुंगी लेने वाला, अपने अपराधों को जानता था, वह अपनी छाती को पीटने लगा और उसने स्वर्ग की ओर आँखें उठाना भी न चाहा। लेकिन फरीसी, अपनी ही तारीफों के पुल बाँधते हुए यह जताने की कोशिश करता है कि वह कितना आदर्श व्यक्ति था। फरीसी ने कहा, ''हे प्रभु, मैं तेरा धनयवाद करता हूँ कि मैं दूसरे मनुष्यों के समान अन्धेर करनेवाला, अन्यायी और व्याभिचारी नहीं, और न ही इस चुंगी लेने वाले के समान हूँ। मैं सप्ताह में दो बार उपवास रखता हूँ; मैं अपनी सब कमाई का दसवाँ अंश भी देता हूँ।'' और प्रभु इस आत्म–सन्तुष्ट पापी के बारे में क्या कहते हैं? ''उसने महज अपने साथ प्रार्थना की,'' उसकी टिप्पणियाँ तीखी थीं। वह व्यक्ति महज एक कपटी था और उसे उसके कपट का फल भी प्राप्त हुआ।

ग. कपटी क्या भूल जाता है (2:4)

''क्या तू उसकी कृपा, और सहनशीलता, और धीरजरूपी धन को

तुच्छ जानता है; क्या यह नहीं समझता कि परमेश्वर की कृपा तुझे

मनफिराव को सिखाती है?''

ईसा पूर्व 597 में नबूकदनेस्सर, बाबुल के सामर्थी राजा ने यरूशलेम को घेर लिया और उसके सारे यहूदियों के प्रमुख लोगों के गुलाम बनाकर ले गया। वह यरूशलेम में उसकी जी हुजूरी करने वाले राजा को अधिकारी बनाकर वहाँ से चला गया। यहूदियों के निर्वासन कार्य के तीन चरणों में यह दूसरा चरण था। परन्तु यरूशलेम में, यिर्मयाह और यजेहकेल की चेतावनी के बावजूद भी जो यहूदी पीछे छूट गये थे, आपस में बधाईयाँ देने लगे। वे सोचने लगे कि वे सबसे पसन्दीदा लोग हैं इसलिए देश निकाले के समय पर उन्हें छोड़ दिया गया है। वे इस बात को नहीं देख पाये कि वे असल में परमेश्वर के धीरज, सहनशीलता, और कृपा को तुच्छ जानने के दोषी थे, और इस बात से बिल्कुल अन्जान थे कि परमेश्वर की कृपा मनफिराव को सिखाती है। उन्होंने असल में यह सोचा कि वे आदरणीय व्यवहार के योग्य हैं। वे कितनी बड़ी गलतफहमी में थे! उनके पापों में लगातार बढ़ौत्तरी का उन्हें अन्त में बिल्कुल ठीक परिणाम मिला। 586 ईसा पूर्व में यहूदियों के छलकपट से क्रोधित होकर, नबूकदनेस्सर वापस आया। उसने यरूशलेम को लूटा, मन्दिर को नाश किया, पूरे देश को फूँक डाला, राजतन्त्र को खत्म कर दिया और बहुत बड़ी संख्या में लोगों को गुलामी में ले गया। ईश्वरीय धीरज, नियमित रूप में शोषण, कुछ हद तक न्याय की तरफ अगुवाई करता है।

एक और उदहारण की ओर ध्यान दें, जो ईश्वरीय धीरज और प्रेम का और भी बड़ा आश्चर्यकर्म है। लगभग दो हजार वर्ष पहले यहूदियों और गैर यहूदियों ने परमेश्वर के पुत्र को कलवरी क्रूस पर चढ़ाने के लिए एक सहमति की थी। यह एक काम था जिसके कारण परमेश्वर के दूतों और उसका गुस्से को स्वतन्त्र होने के लिए दोहाई दी जाने लगी। फिर भी लगभग दो हजार वर्षों के बाद भी परमेश्वर की भलाई, उसकी सहनशीलता और धीरज ने उसके धर्मी क्रोध को रोके रखा। इस मामले में परमेश्वर की कृपा ने मनुष्य को मनफिराव सिखाना चाहिये, फिर भी मनुष्य कपटपूर्ण यह विश्वास करता है कि परमेश्वर का अनुग्रह उस पर इसलिए हो रहा है क्योंकि वह इसके योग्य है। क्योंकि परमेश्वर तुरन्त न्याय नहीं करता है; इसलिए मनुष्य यह सोचता है कि वह न्याय करेगा ही नहीं; इससे भी बढ़कर वे खुद को इतना समझाते हैं कि उसके पास बदला लेने के लिए कुछ नहीं है, कि जब लड़ाईयाँ और अकाल आ पड़ता है या व्यक्तिगत् दुःख उन पर पड़ते हैं, तो वे सारी बातों के लिए परमेश्वर पर ही दोष लगाने लगते हैं।

यह स्वभाव सटीक ढंग से वांग लुंग के द्वारा प्रगट किया गया है, जो पर्ल बक्स के प्रसिद्ध नोवेल का मुख्य किरदार है। वांग लुंग जवानी के समय में गरीबी के दौर से गुजरने के बाद भी सम्पन्न हो जाता है। उसके पास दूर तक फैले फलवन्त खेत, खलियान और बलवन्त जवान लड़के थे। वह अपने पड़ोसियों

के द्वारा आदर्श के रूप में देखा जाता था। एक दिन उसके फोरमैन चिंग ने उसे बताया कि नदी में बाढ़ आ गयी थी। वांग अपने खेतों को लेकर चिन्तित हो गया और उसका परमेश्वर के प्रति गुस्सा कुछ इस प्रकार के कड़वे शब्दों में प्रगट हुआ। उसने कहा कि, ''अब वह स्वर्ग में बैठा बूढ़ा व्यक्ति अकेले आनन्द मनायेगा, क्योंकि वह नीचे धरती पर देखेगा और उसे डूबे और भूखे प्यासे लोग नज़र आएँगे, और यही दृश्य उस शापित को पसन्द आते हैं।'' उसकी ईश्वरनिन्दा से चिंग को डर लगा। ''लेकिन'' पर्ल बक्स कहते है कि 'क्योंकि वांग लुंग धनी था, तो वह बेपरवाह था; और उसे जैसा अच्छा लगा वह अपनी भड़ास को निकालता रहा, वह अपने खेतों और फसल के बारे में सोचते हुए घर वापस जाते समय बुदबुदा रहा था।'' {1} परमेश्वर की कृपा, उसकी सहनशीलता और उसके धीरज को उस किसान के द्वारा तुच्छ जाना गया। उसे पश्चाताप की ओर अग्रसर करने के बजाय, वे उसे इस भाव के साथ छोड़कर चले गये कि उसको उस भलाई को प्राप्त करने का हक था, जब उसे परमेश्वर की सवश्रेष्ठता के साथ में मिलाया गया तो, वांग लुंग ईश्वरनिन्दा करने वाला ठहरा।

घ. कपटी किन बातों का सामना करता है (2:5–6)

कपटी विशेष प्रकार के क्रोध का सामना करता है। ''पर तू अपनी कठोरता और हठीले मन के कारण उसके क्रोध के दिन के लिये, जिसमें परमेश्वर का सच्चा न्याय प्रगट होगा; अपने लिए क्रोध कमा रहा है।''

यह भाव कि ''अपने लिए क्रोध कमा रहा है'' चौंका देने वाला है, क्योंकि यह कुछ इस प्रकार की तस्वीर का निर्माण करता है जैसे कि कोई पापी प्रतिदिन न्याय के दिन के लिए अपनी बुराई के खाते में कुछ न कुछ बुराई जमा कर रहा है। जब परमेश्वर के न्याय का दिन आयेगा तो वह धार्मिक न्याय होगा। वह हर एक विचार, बात और कार्यों का हिसाब लेगा। चूक करने के पाप और आदेश के पाप सभी का हिसाब होगा। प्रत्येक पाप के प्रभाव को हर पहलू से देखा परखा जायेगा – पापियों पर, दूसरों पर और परमेश्वर पर उसका प्रभाव। जिस प्रकार से एक कुण्ड में पत्थर फेंकने ने बहुत सी तरंगें उठती हैं और तब तक उनका चक्र आगे बढ़ता रहता है जब तक वह उस कुण्ड के किनारे या अन्त तक नहीं पहुँच जाता, ठीक इसी प्रकार से पाप सक्रिय होने पर ऐसी घटनाओं को अन्जाम देता है जिस पर खुद पापी का कोई नियन्त्रण नहीं होता। ये सारी बातों का न्याय होगा। परमेश्वर हर एक व्यक्ति के कामों के अनुसार उसे बदला देंगे। अतः जब कोई कपटी किसी का न्याय करता है, तो वह अपने आप का अति पतली बर्फ पर रख देता है। वह खुद परमेश्वर के न्याय का सामना करता है।

II. कपटियों पर न्याय का वर्णन (2:7–16)

कपटियों के प्रति परमेश्वर का न्याय उनके व्यवहार, चरित्र, कार्यों और व्यक्तिगत् अहमियम के मूल्याँकन के आधार पर होता है।

क. उसके कामों के अनुसार उसका न्याय (2:7–10)

रोमियों की पुस्तक का यह सबसे कठिन खण्ड है, क्योंकि व्यवहारिक तौर पर यह ऐसी शिक्षा देता हुआ प्रतीत होता है कि उद्धार कार्यों के आधार पर होता है; कि लगातार भले कार्यों को करने के द्वारा अनन्त जीवन को कमाया जा सकता है। जबकि इस प्रकार का कोई भी विचार वचन के किसी भी क्षेत्र में अन्जाना है। इस समस्या को सुलझाने के लिए हमें अपने दिमाग में इस बात को बैठाने की जरूरत है कि इस अनुच्छेद का सम्बन्ध परमेश्वर के न्याय के आधार से है। बाईबल के भीतर न्याय कार्यों के द्वारा; और उद्धार विश्वास के द्वारा होता है। महिमा, आदर, अविनाश और भले कामों के साथ में अनन्त जीवन विश्वास का फल है, एक प्रमाण – न कि उद्धार का आधार। पत्री के इस बिन्दू पर पौलुस इस बात की चर्चा नहीं कर रहा है कि एक व्यक्ति किस प्रकार से उद्धार पाता है या अनन्त जीवन प्राप्त करता है। यह सारी बातें बाद में आती हैं। यहाँ पर वह दर्शाता है कि पाप के मामले में परमेश्वर के सामने यहूदी और गैर यहूदी सब एक समान हैं।

''मनुष्य के कामों के अनुसार'' उसका न्याय करते समय (पद 6), परमेश्वर पहले व्यक्ति के व्यवहार (1) करने के कारणों की जाँच करते हैं। ''जो सुकर्म में स्थिर रहकर महिमा, और आदर, और अमरता की खोज में हैं; उन्हें वह अनन्त जीवन देगाः पर जो विवादी हैं और सत्य को नहीं मानते, वरन् अधर्म को मानते हैं उन पर उसका क्रोध और कोप पड़ेगा'' (2:7–8)।

फिर परमेश्वर व्यक्ति के व्यवहार (2) के परिणाम की जाँच करता है। ''और क्लेश और संकट, हर एक मनुष्य के प्राण पर जो बुरा करता है आएगा, पहले यहूदी पर, फिर यूनानी पर; परन्तु महिमा और आदर और कल्याण हर एक को मिलेगा, जो भला करता है, पहले यहूदी को, फिर यूनानी को'' (2:9–10)। यह भाव ''पहले यहूदी को, फिर यूनानी को'' इस तथ्य को प्रगट करता है कि बढ़ता हुआ प्रकाश, जिम्मेदारियों को बढ़ाता है। एक कपटी का दण्ड अन्यजाति के दण्ड की तुलना में काफी अधिक होगा और इसका सरल सा कारण यह है कि उसे बहुत से मौके प्रदान किये गये थे।

ख. उसकी योग्यता के अनुसार उसका न्याय (2:11–16)

हमें यह ध्यान देना चाहिये (1) कि परमेश्वर का न्याय कितना विभेदकारी होता है। सर्वप्रथम, परमेश्वर व्यक्ति के फायदे को तौलता है। ''क्योंकि परमेश्वर किसी का पक्षपात नहीं करता। इसलिए जिन्होंने बिना व्यवस्था पाये पाप किया, वे बिना व्यवस्था के नष्ट भी हो जायेंगे, और जिन्होंने व्यवस्था पाकर पाप किया,

उनका दण्ड व्यवस्था के अनुसार होगा'' (पद 11–12)। पौलुस कहता है कि, जिनके पास व्यवस्था है उनके पास उनसे ज्यादा प्रकाश है जिनके पास व्यवस्था नहीं है। खुली हुई बाईबल का अधिकार, परमेश्वर की इच्छा को जानने की हमारी योग्यता को बढ़ाता है। परन्तु प्रकाश तो प्रकाश है और इससे कोई फरक नहीं पड़ता कि वह धीमा प्रकाश है या तेज। यदि कोई व्यक्ति धोर अन्धकारमय जंगल में धिरा हो तो, हल्के से हल्का प्रकाश भी उसे अपनी ओर आकर्षित करेगा; और यदि उसे इस अन्धकार से छुटकारा चाहिये तो वह, उस प्रकाश की ओर आगे बढ़ेगा और प्रकाश की तारीफ करेगा। जबकि, यदि उस व्यक्ति के जीवन में छिपाने वाले दोष हैं, तो वह उस प्रकाश को कोई प्रतिउत्तर नहीं देगा, बल्कि वह उस प्रकाश से छिपने का प्रयास करेगा, चाहे वह प्रकाश हल्का हो या तेज। जो लोग प्रकाश को अस्वीकार करते हैं, उनके लिए दण्डाज्ञा इन्तजार करती है; परन्तु जितने लोग उस प्रकाश को अपना लेते हैं उनका बहुत बड़ा फायदा होता है, इसमें बहाने के लिए कम परन्तु दण्ड का बड़ा मौका रहता है।

परमेश्वर व्यक्ति के स्वभाव को भी परखता है। ''क्योंकि परमेश्वर के यहाँ व्यवस्था के सुनने वाले धर्मी नहीं, पर व्यवस्था पर चलने वाले धर्मी ठहराये जायेंगे। फिर जब अन्यजाति लोग जिनके पास व्यवस्था नहीं, स्वभाव ही से व्यवस्था पर चलते हैं, तो व्यवस्था उनके पास न होने पर भी वे अपने लिए आप ही व्यवस्था हैं, वे व्यवस्था की बातें अपने अपने ह्रदयों में लिखा हुआ दिखाते हैं, और उनके विवेक भी गवाही देते हैं और उनके विचार परस्पर दोष लगाते या उन्हें निर्दोष ठहराते हैं''(पद 13–15)।

जो व्यवस्था अन्यजातियों के पास में है वह अंको में नहीं, परन्तु उनके विवेक में है। सही में, उनके पास हर एक बात के लिए कोई विशेष निदेर्शों पर निर्देश नहीं है, जैसे कि यहूदियों के पास मूसा की व्यवस्था में हैं। परन्तु उनके पास व्यवस्था में पाये जाने वाले बुनियादी नैतिक नियम हैं, क्योंकि परमेश्वर के सामान्य नियम आदिकाल से ही मनुष्य को प्रदान किये गये हैं। निश्चय ही, यह व्यवस्था उनके मनों पर लिखी हुई है और वह उनके विवेकों में गवाही देती है।

अब, विवेक अच्छा होना चाहिये, न कि एक उत्तर पुस्तिका। जो व्यक्ति ऐसा कहता है कि ''तुम्हारा विवेक तुम्हारा मार्गदर्शक हो,'' वह विवेक के कार्यों में गलती कर रहा है। विवेक परमेश्वर द्वारा ठहराया गया एक जाँच का औज़ार है। विवेक को चुप और यहाँ तक कि खत्म भी किया जा सकता है। यह सम्भव है कि हम गलत काम के लिए भी अपने विवेक की अनुमति को प्राप्त करें। {2}

डिकन्स, जो मानवीय चरित्र के एक चतुर आलोचक हैं, उन्हें विवेक से खासा लगाव था। श्रीमती क्वील्प हाल ही में उनके पति की एक योजना में अनैच्छिक रूप में भागीदार रहीं थी। डिकन्स कहते हैं कि, ''श्रीमती क्वील्प को उन कामों को याद करने में जो उसने अभी अभी शुरू किया था काफी तकलीफों को सामना करना पड़ा था, जिसकी वजह से उसे उसके चैम्बर में बन्द रहना पड़ा था, और वो अपने सिर को चद्दर में लपेटकर अपनी गलतियों को याद करके इतना ज्यादा विलाप करती थीं कि कोई कमजोर मन

का व्यक्ति उसे सह नहीं सकता; अतः ज्यादातर मामलों में, विवेक एक लास्टिक के समान बहुत अधिक लचीला होता है, जो बहुत से खिंचाव से होकर गुजरता है और अनेकों प्रकार की परिस्थितियों का सामना करता है। कई लोग, इसे समझदारी के साथ जिस प्रकार से गर्मी के मौसम में फलालैन के वैस्टकोट को एक एक करके उतारा जाता है, उसी प्रकार उतारते हैं, यहाँ तक कि मौका मिलने पर उसे एक साथ ही उतारने का प्रयास करते हैं; परन्तु कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो उस कपड़े को स्वीकार कर लेते हैं और अपने आपको खुशी से उसके हवाले कर देते हैं; और यह सर्वोत्तम सुधार होने के कारण, सर्वाधिक प्रचलित होता है।'' {3}

ऐसा कहा जाता है कि जब जॉन हस को एक खूँटे से बाँधकर जलाया जा रहा था, तब एक गरीब महिला वहाँ पर लकड़ी का एक गट्ठा लेकर आयी। उसने अधिकारियों से इस गट्ठे को उस आग में उस खूँटे से बन्धे शहीद के करीब से करीब डालने के लिए कहा। वह उस स्त्री को नहीं जानता था, इसलिए जॉन हस ने उससे पूछा कि उसने उस स्त्री या स्त्री के घर वालों के साथ ऐसा क्या किया है कि वह उससे इतनी नफरत करती है। उसने कहा कि जॉन हस ने उसे कभी व्यक्तिगत् तौर पर कोई नुक्सान नहीं पहुँचाया। फिर भी, यद्यपि यह लकड़ी दुर्लभ और बहुत महँगी है और वह स्त्री काफी गरीब थी, उसे तकलीफ हुई और उसने इस गटठे को खरीदने के लिए एक मकसद से पाई–पाई को जोड़ा। उसने कहा कि वह अपधर्मी था, और उसको जलाने के लिए लकड़ी का गट्ठा देना एक नेक काम था। जॉन हस के विवेक ने कहा, ''अपने शरीर को जलाने के लिए दे।'' उस विधवा के विवेक ने कहा कि ''उस व्यक्ति को जलाने के लिए लकड़ी का गट्ठा दे।''

अतः विवेक कोई मार्गदर्शक नहीं परन्तु अंकुश है। उसे परमेश्वर के वचन के द्वारा शिक्षा प्रदान करना और परखा जाना जरूरी है। दोषी ठहराने के कार्य में, पवित्र आत्मा मनुष्य के विवेक पर कब्जा करता है और परमेश्वर के वचन को सामर्थ्य के साथ उसके विवेक में डालता है। परमेश्वर के वचनों को छोड़कर, विवेक हमारे प्राण का अति अनिश्चित प्रभाग है। जबकि आदिकाल के मूर्तिपूजक अपनी सन्तानों को पूर्ण विवेक के साथ खौलते हुए कड़ाव में डाल देंगे, वहाँ सख्त बौद्ध अनुयायी एक मक्खी को मारने पर भी पश्चाताप करेगा। दोनों ही कार्य अपने अपने स्थान पर गलत हैं।

विवेक एक मानसिक विभाग है, जिसके द्वारा कोई भी व्यक्ति किसी के कार्यों का न्याय करता और तत्पश्चात् वाक्यों को बोलता है। यह इस बात की साक्षी प्रदान करता है कि मनुष्य एक सार्वभौमिक नैतिकता में जीता है और अन्त में परमेश्वर के प्रति उत्तरदायी होता है। जिन लोगों के पास परमेश्वर का वचन मार्गदर्शक के रूप में मौजूद है, उनके विवेक, उन लोगों के विवेक से अधिक दोषी ठहरने की स्थिति में हैं, जिनके पास परमेश्वर का वचन, उन पर परमेश्वर की इच्छा को व्यक्त करने के लिए नहीं है, लेकिन

फिर भी वे नैतिक और धार्मिक रीति से व्यवहार करते हैं। अतः परमश्वेर का न्याय विभेदकारी है और मनुष्य के फायदे और स्वभाव की परख करता है। यह सब एक कपटी के दोषों में बढ़ौत्तरी करते हैं।

अन्त में ध्यान दें कि (2) परमेश्वर का न्याय कितना अधिक विनाशक है। पौलुस आने वाले दिनों की बात करता है, ''जिस दिन परमेश्वर मेरे सुसमाचार के अनुसार यीशु मसीह के द्वारा मनुष्यों की गुप्त बातों का न्याय करेगा'' (पद 16)। मनुष्यों का रहस्य! वह दिन कितना भयानक होगा, जब परमेश्वर सारे गुप्त कामों पर अपना प्रकाश डालना शुरू करेगा। सभी लोगों के जीवन में दोषपूर्ण रहस्य हैं, ऐसी बातें जो उन्होंने की हैं और जिनको उन्हें नहीं करना चाहिये था, और ऐसे काम करने से चूक गये हैं, जिन्हें उन्होंने करना चाहिये था, परन्तु नहीं कर पाये हैं। परमेश्वर ने उन्हें न तो नजरअन्दाज किया है और न ही वह उसे भूला है। एक दिन कपटी के सारे गुप्त काम खुल जायेंगे, और उसके जीवन की सच्चाई सबके सामने प्रगट की जाएगी।

इब्रानियों का दोष

2:17—3:8

I. धार्मिक रूढ़िवादिता की जाँच (2:17—24)

क. एक व्यक्ति की सच्चाई तक पहुँच (2:17—20)

1. सच्चाई में सुनिश्चित होना (2:17—18)
2. सत्य पर आत्मविश्वास करना (2:19—20)

ख. सत्य के प्रति एक व्यक्ति की जवाबदेही (2:21—24)

1. आत्मिक पाखण्ड का खुलासा (2:21क)
2. आत्मिक असंवेदनशीलता का खुलासा (2:21ख—22)
3. आत्मिक दिवालियेपन की खुलासा (2:23—24)

II. धार्मिक अध्यादेश की जाँच (2:25—29)

क. धार्मिक विधियों की सीमित कीमत (2:25—27)

1. परमेश्वर के द्वारा दिये गये नियम (2:25)
2. प्रकाश जो एक मनुष्य के पास है (2:26—27)
    1. एक धार्मिक रीतियों से विहीन व्यक्ति, उन रीतियों के प्रति समर्पित व्यक्ति से ज्यादा धार्मिक हो सकता है (2:26)

2. एक धार्मिक रीतियों के प्रति समर्पित व्यक्ति, उन रीतियो से विहीन व्यक्ति की तुलना में ज्यादा जिम्मेदार हो सकता है (2:27)

ख. सच्चाई की असीमित कीमत (2:28–29)

1. बाहरी रूप में (2:28)
2. अन्दरूनी स्वीकृति में (2:29)

III. धार्मिक विरोध की जाँच (3:1–8)

क. जो बहस करते थे कि जो सही है वह गलत है (3:1–2)

ख. जो बहस करते थे कि जो गलत है वह ही सही है (3:3–8)

एक गैरमसीही, भ्रष्ट धर्म से ग्रसित व्यक्ति है; कपटी वह व्यक्ति है जो धर्मधारण करने का नाटक करता है; जबकि इब्रानी एक शक्तिहीन धर्म को प्रदर्शित करते हैं। यद्यपि रोमियों 2:17–3:8 में यह इब्रानी व्यक्ति ही है जिस पर यह मुकद्दमा चल रहा है, उसका मामला, किसी भी धार्मिक व्यक्ति के लिए एक परीक्षा के समान है। इब्रानी हमारे सामने ऐसे व्यक्ति को प्रस्तुत करते हैं जो प्रकट धर्म के लिए जिज्ञासा से भरा हुआ है, परन्तु वह मसीह से अन्जान है। नामधारी मसीहीयत ऐसे लोगों से भरी है जो सच में इस क्षेत्र के कायल अर्थात् स्वीकार करने वाले होते हैं, जिनका इब्रानी लोग विरोध करते हैं।

शायद धार्मिक व्यक्ति को सुसमाचार के द्वारा समझा पाना सबसे मुश्किल काम है। कोई भी व्यक्ति इतना बुरा नहीं है कि यीशु मसीह उसका उद्धार न करें, परन्तु करोड़ों लोग ऐसे हैं जो अपने आपको बहुत ज्यादा अच्छा समझते हैं। कुछ इसी प्रकार के लोगों के बारे में रोमियों के इस खण्ड में प्रभु विचार करते हैं। धार्मिक लोगों की रूढ़िवादिता, धार्मिक अध्यादेश, व विरोध की जाँच, यहूदियों के सार के अनुसार, अब परखी जाती है।

I. धार्मिक रूढ़िवादिता की जाँच (2:17–24)

कुछ लोग तरसुस के जवान शाऊल से भी ज्यादा रूढ़िवादी थे। ''मैं फरीसी होकर अपने धर्म के सबसे खरे पन्थ के अनुसार चला'' राजा अग्रिप्पा के सामने यह उसकी खुद की गवाही थी (प्रेरितों के काम 26:5)। पौलुस धार्मिक कट्टरपन्थ के बारे में पूरी जानकारी रखता था और वह जानता था कि किस प्रकार एक समर्पित और जुनून से भरा हुआ व्यक्ति यीशु मसीह का दुश्मन बन सकता था। वह कहता है, ''मैं ने भी समझा था कि यीशु नासरी के नाम के विराध में मुझे बहुत कुछ करना चाहिये'' (प्रेरितों के काम 26:9)। पौलुस यहूदियों पर कोई आरोप नहीं लगा रहा था, क्योंकि वह खुद यहूदी मत का विरोधी था। वह खुद भी

यहूदी था, परन्तु एक जागरुक यहूदी, जो धर्म के जोखिम और फन्दों से बाहर निकला, और जिस पर बाईबल का प्रकाश प्रगट हुआ, और उसने मनुष्य की सेवा को छोड़कर प्रभु यीशु की सेवा को करना प्रारम्भ कर दिया।

धर्म के अन्दर सत्य के प्रति और सत्य के उत्तरदायित्व के प्रति दो बुनियादी बातों की अपेक्षा की जाती है। बाईबल तक एक व्यक्ति की पहुँच होना, परमेश्वर की दृष्टि में व्यक्ति की जिम्मेदारियों को बढ़ा देती है।

क. एक व्यक्ति की सच्चाई तक पहुँच (2:17–20)

पौलुस का पहला कदम यह दिखाना था कि यहूदी के पास न केवल सत्य तक पहुँचने का मार्ग पहले से ही तैयार है, बल्कि वह (1) उस सत्य के प्रति बिल्कुल निश्चित भी है। ''यदि तू यहूदी कहलाता है और व्यवस्था पर भरोसा रखता है और परमेश्वर के विषय में घमण्ड करता है, और उसकी इच्छा जानता और व्यवस्था की शिक्षा पाकर उत्तम उत्तम बातों को प्रिय जानता है'' (2:17–18)।

इन वचनों के अनुसार यहूदियों को दो फायदे नजर आते हैं। पहला, उसको इब्री घर में पैदा होने को लाभ था। बचपन से ही उसे आराधनालय में शिक्षा प्रदान की जाती थी; उसे सब्त का आदर करना और उसे मानना सिखाया जाता था; उसे बलिदान चढ़ाने की जरूरत के बारे में बताया जाता था; और उसे अलग किये जाने की सच्चाई के बारे में सैद्धान्तिक शिक्षा दी जाती थी। जब अधिकतर लोग अन्धविश्वास और मूर्तिपूजा में लिप्त हो गये तो उस काल और दिनों में इन सारी बातों का फायदा उन्हें नहीं मिल पाया। जब सब लोग अन्धकार में टटोल रहे थे, यहूदी अपनी व्यवस्था पर भरोसा कर सकते थे। अतः उसके पास केवल इब्री धर में पैदा होने का लाभ नहीं था, बल्कि उसको इब्री बाईबल होने को भी लाभ था। इसके अलावा वह परमेश्वर के द्वारा उस पर प्रगट किये गये प्रकाशनों का विस्तारपूर्वक वर्णन करने में भी माहिर था।

इसके अलावा यहूदी, उस सच्चाई पर (2) भरोसा रखने वाले भी थे। ''और अपने आप पर भरोसा रखता है कि मैं अन्धों का अगुवा, और अन्धकार में पड़े हुओं की ज्योति और बुद्धिमानों का सिखानेवाला, और बालकों का उपदेशक हूँ; और ज्ञान और सत्य का नमूना जो व्यवस्था में है, मुझे मिला है'' (2:19–20)।

दूसरे शब्दों में कहें तो यहूदी अपने आपको दूसरों के शिक्षक के रूप में स्थापित करता है, और दूसरों की अज्ञानता के चलते उसे बड़ी तुच्छ और हीन निगाहों से देखता है, परन्तु अपनी अज्ञानता से अन्जान रहता है। इस अनुच्छेद में ''मूर्ख'' के लिए सही शब्द ''बेवकूफ' इस्तेमाल किया गया है। यहूदी अपने गैरयहूदी पड़ोसियों को अति अपमानजनक दृष्टि से देखते थे, क्योंकि जो बातें एक अनपढ़ यहूदी को भी मालूम थीं, उसके पहले हिस्से से भी ये लोग अन्जान थे।

इस कारण पौलुस का सर्वप्रथम आरोप यहूदियों की सत्य तक पहुँच को लेकर है, दुर्भाग्यवश् वह पहुँच पौलुस के दिनों में अन्यजातियों के प्रति घमण्ड के भाव से परिपूर्ण होकर विज्ञापित हुई।

ऐसे परिवार में पैदा होना, जहाँ पर परमेश्वर की बातें सामान्य ज्ञान के जैसे पायी जाती हों, और जहाँ पर बाईबल नियमित रूप से पढ़ी जाने वाली पुस्तक हो, वहाँ सत्य तक पहुँच होना एक गम्भीर बात है। ऐसे सौभाग्य के साथ हमेशा बड़ी जिम्मेदारियाँ भी आती हैं, और उस व्यक्ति के लिए यह शोक की बात है जो इसकी अहमियत को नहीं समझ पाता है। आत्मिक सौभाग्यों से पूर्ण परिस्थितियों में पालन–पोषण होने के बावजूद धार्मिक तौर पर स्वार्थी बनने वाला व्यक्ति रोमियों 2 अध्याय की विनाशकारी दण्डाज्ञाओं का भागी ठहरता है।

ख. सत्य के प्रति एक व्यक्ति की जवाबदेही (2:21–24)

पौलुस आगे यहूदियों पर अपने आरोपों को और भी मजबूत करने के लिए उन यहूदियों की जाँच करता है, जिनका सरोकार केवल दिमागी ज्ञान से है और वे परमेश्वर की आज्ञापालन से दूर रहते हैं। ऐसे धार्मिक अनुभव जो केवल बातें करते हैं, परन्तु उनका व्यवहारिक जीवन में कोई इस्तेमाल नहीं है, वह परमेश्वर के न्याय के दिन का कभी सामना नहीं कर पायेंगे।

उदाहरण के लिए, यहाँ पर (1) आत्मिक पाखण्ड का मामला है। ''अतः क्या तू जो दूसरों को सिखाता है, अपने आपको नहीं सिखाता है?''(2:21)। धार्मिक क्षेत्र में यह एक बहुत ही सामान्य और ऐसा क्षेत्र है जिसमें लोग आसानी से गिर जाते हैं। क्योंकि सच्ची शिक्षा का एक खास उद्देश्य अर्थात् लोगों के व्यवहारिक जीवन में परिवर्तन होता है, अध्यापक को दूसरों को शिक्षा प्रदान करने से पहले खुद उन शिक्षाओं को अपने जीवन में लागू करना चाहिये। यशायाह इसका एक बहुत ही अच्छा उदाहरण है। यह महान प्रचारकीय भविष्यद्वक्ता अपनी पुस्तक के 5 अध्याय में दूसरों पर न्याय की शीशी को उण्डेल देता है। 'हाय उन पर जो घर से घर मिलाते हैं... हाय उन पर जो बड़े तड़के उठकर मदिरा पीने लगते हैं... हाय उन पर जो बुरे को भला और भले को बुरा कहते हैं... हाय उन पर जो अपनी दृष्टि में ज्ञानी और अपने लेखे में बुद्धिमान हैं...'' करीब छः बार वह इस प्रकार की बातों को बोलता है, लेकिन 6 अध्याय में वह अपने आपको तीन गुना ज्यादा पवित्र परमेश्वर की उपस्थिति में पाता है और पुकार उठता है ''मुझ पर हाय!'' वह एक बुद्धिमान व्यक्ति था; उसने अपने आपको शिक्षा दी। जब उसने चीजों को उसके सही नजरीये से देखा तो वह उनका इस्तेमाल अपने जीवन में करने से न हिचकिचाया। दूसरों को शिक्षा प्रदान करना और अपने आप उससे कोई सबक न लेना, यह पाखण्ड की चरमसीमा होती है।

इसके पश्चात आत्मिक संवेदनशीलता (2) का मामला था। ''अतः क्या तू जो दूसरों को सिखाता है, अपने आपको नहीं सिखाता? तू जो चोरी न करने का उपदेश देता है, आप ही चोरी करता है? तू जो

कहता है, व्यभिचार न करना, क्या आप ही व्यभिचार करता है? तू जो मूरतों से घृणा करता है, क्या आप ही मन्दिरों को लूटता है?'' (2:21–22)।

एक परिभ्रमण करने वाला प्रचारक जिन लोगों के बीच में प्रचार किया करता था, वहाँ पर अपने प्रचार की कठोरता और सन्देशों को बड़ी कटुता के साथ में प्रस्तुत करने के लिए काफी प्रसिद्ध था। वह स्थिरता के साथ पाप के विरूद्ध गरजता रहा, और नरक की आग कभी भी उसके प्रचारों से अलग नहीं हुई। कई सालों तक वह इसी रीति से प्रचार करता रहा, जब तक कि उसे उसके जीवन में एक झटका न लगा। वर्षों पहले, उसे प्रचारकीय कार्य के अर्न्तगत् किसी गांव में जाना पड़ा, जहाँ पर वह पाप में गिर गया और एक उद्धारहीन स्त्री से व्यभिचार कर बैठा। जब वह उस रविवार की सभा में प्रवेश किया, वह अपने पाप को भूल चुका था, इत्तेफाक से वह स्त्री उस सभा में बैठी थी, जिसने हाल ही में उद्धार पाया था। उस स्त्री को भी उतना ही जोरदार आश्चर्य हुआ, जितना उसे झटका लगा कि यह व्यक्ति एक प्रचारक था, और उस स्त्री ने प्रचारक के कुकर्म को लेकर सार्वजनिक तौर पर उसका सामना किया। उसका कठोर प्रचार और कटु सन्देश देने का तरीका दोषी विवेक की आड़ के अलावा कुछ नहीं था। वह सब लोगों को प्रचार करता रहा, परन्तु अपने आप आत्मिक रूप से असंवेदनशील बना रहा, और अब उसके पापों ने उसको पकड़ लिया।

पौलुस इन आयतों में दर्शाता है कि आस्था के क्षेत्र में, नैतिक और आत्मिक रूप में भी यहूदी इस प्रकार के व्यवहार के दोषी थे। उन्होंने व्यवस्था का ऊँचे और पवित्र स्तर का प्रचार किया, परन्तु वह इस बात के लिए बिल्कुल लापरवाह थे कि उनका खुद का जीवन जीता–जागता झूठ था।

इसके अलावा यहाँ पर (3) आत्मिक दिवालियेपन का मामला भी था। ''तू जो व्यवस्था के विषय में घमण्ड करता है, क्या व्यवस्था न मानकर परमेश्वर का अनादर करता है? क्योंकि तुम्हारे कारण अन्यजातियों में परमेश्वर के नाम की निन्दा की जाती है, जैसा कि लिखा भी है'' (2:23–24)। एक धरोहर बनने के बजाय, यहूदियों की सच्चाई तक पहुँच महज कर्तव्य बन गया था, जिसके लिए वह परमेश्वर के सम्मुख भयंकर रूप से उत्तरदायी था; क्योंकि किसी विश्वासी के द्वारा गलत व्यवहार करने से ज्यादा तेजी से किसी अन्यजाति के व्यक्ति को परमेश्वर से इतनी जल्दी दूर नहीं कर सकता।

जब अब्राहम ने मिस्र में अपनी पत्नी सारा का इन्कार किया और उसे फिरौन के स्त्रीकक्ष में ले जाया गया, अब्राहम मिस्रियों के लिए आशीष का कारण नहीं, बल्कि वह उसके लिए श्राप का और मरी का कारण बना। अन्ततः फिरौन को उस परेशानी का कारण भी पता चल गया और उसने अब्राहम से उसका हिसाब भी माँगा। ''तू ने हमारे साथ ऐसा क्यों किया? तू ने मुझे क्यों नहीं बताया कि वह तेरी पत्नी है? क्यों तू ने मुझसे कहा कि वह तेरी बहन है?'' इनमें से किसी भी क्रुद्ध सवाल का अब्राहम के पास कोई भी

जवाब नहीं था। मानवीय रूप में कहा जाए तो, जहाँ तक फिरौन का सवाल है तो यहोवा के नाम पर उसकी गवाही समाप्त हो चुकी थी। यह पूरी कहानी हम उत्पत्ति 12:10–20 में पा सकते हैं।

जब दाऊद ने बेतशेबा के साथ में पाप किया तो, ठीक इसी प्रकार की परिस्थिति खड़ी हुई। नातान भविष्यवक्ता ने, दाऊद के विवेक को एक कथा के द्वारा पूरी तरह झिंझोड़कर, दाऊद को उसके द्वारा किये गये दोषों पर कभी न भूले जाने वाले शब्दों द्वारा धावा बोला, ''तूने अपने शत्रुओं को परमेश्वर की निन्दा करने का बड़ा अवसर प्रदान किया है'' (2 शमूएल 12:14)। यह एक विशिष्ट तथ्य है कि इस दिन के बाद से दाऊद को अविश्वासी के बीच में उपहास के तौर पर ''परमेश्वर के मनानुसार व्यक्ति कहा जाने लगा।'' हो सकता है कि जब वह यहूदियों द्वारा अन्यजातियों को परमेश्वर की निन्दा करने के अवसर प्रदान करने की बात करता है, तो यह लिखते समय पौलुस के मन में भी दाऊद का यह उदहारण रहा हो, जो उसने बाद में इस वाक्य को जोड़ा, ''जैसा कि लिखा है''।

अतः, केवल कट्टरवादी होने से ही कोई परमेश्वर के द्वारा अधिक ग्रहणयोग्य नहीं हो जाता है। और न ही ऐसा करने से कोई व्यक्ति आकर्षित नहीं होता है, क्योंकि वे धर्म के अन्दर सच्चाई को देखते हैं और महज दिखावे के कामों को तुरन्त ही पहचान लेते हैं। एक व्यक्ति के द्वारा सच्चाई तक पहुँच उसके सत्य के प्रति उत्तरदायित्व को बढ़ाती है। ''क्योंकि परमेश्वर के यहाँ व्यवस्था के सुनने वाले ही नहीं, परन्तु व्यवस्था पर चलने वाले धर्मी ठहराये जायेंगे'' (पद 1)।

II. धार्मिक अध्यादेश की जाँच (2:25–29)

एक धार्मिक व्यक्ति न केवल साधारणतः इसलिए यह समझता है कि उसे परमेश्वर की बेहतर समझ है, क्योंकि सच्चाई के सन्दर्भ में उसके पास रूढ़िवादी बौद्धिक सहमति है, परन्तु क्योंकि उसने धार्मिक अध्यादेशों, अनुष्ठानों और धार्मिक रीति रिवाजों को अतिसर्तकता के साथ सम्भाल कर रखा है। पौलुस यहाँ पर दर्शाता है कि मात्र धार्मिक काम किसी का परमेश्वर के सम्मुख प्राथमिकता प्रदान नहीं करते।

पौलुस यहाँ पर संसार के अनगिनत और कभी न समाप्त होने वाले रीति रिवाजों के बारे में चिन्तित नहीं है। निश्चय ही, परमेश्वर के ठहराये गये वचन के अनुसार उनका कोई मूल्य नहीं है। वह इस्राएल की ईश्वरीयता से प्रेरित कानूनी संहिता के तहत पुराने नियम के समय के आवश्यक आदेशों के प्रति चिन्तित है। विशेषकर वह यहूदियों की खतना की विधि को लेकर चिन्तित है, जो कि अब्राहम की वाचा का चिन्ह है, जो प्रत्येक यहूदी के लिए बचपन से ही कड़ा आदेश है। जिस प्रकार से बहुत से नामधारी मसीही बचपन में बपतिस्मा लेने के कारण, अपने आपको मसीह की कलीसिया का सदस्य और स्वर्ग का वारिस मानते हैं, यहूदियों का भी मानना था कि उनके खतना कराने से उन्हें परमेश्वर के सम्मुख एक विशेष स्थान मिल जायेगा। अगला विचार जिसको पौलुस आगे विरोध करता है कि धार्मिक आदेश मुख्य, व्यक्तिगत् और

आत्मिक अनुभवों से परे प्राण को फायदा पहुँचा सकते हैं। वह धार्मिक मामलों में रीति रिवाजों के सीमित मूल्यों की तुलना वास्तविकता की असीमित कीमत के साथ में करता है।

क. धार्मिक विधियों की सीमित कीमत (2:25–27)

किसी भी ईश्वरीय अधिकृत विधि की कीमत सीधे उस व्यवस्था (1) से जुड़ी होती है जिसे परमेश्वर ने प्रदान किया होता है। ''यदि तू व्यवस्था पर चले तो खतने से लाभ तो है, परन्तु तू यदि व्यवस्था को न माने तो तेरा खतना बिन खतना की दशा ठहरा है'' (पद 25)। दूसरे शब्दों में, धार्मिक अनुष्ठान या विधि तभी कोई मायने रखती है जब बाहरी प्रकटीकरण अन्दरूनी अनुभवों का परिणाम हो। किसी भी बाहरी प्रतिक्रिया का तब तक कोई अर्थ नहीं होता, जब तक कि वह किसी न किसी तरह हमारे जीवन के व्यक्तिगत्, दैनिक जीवन, वचन सम्बन्धी आत्मिक अनुभवों से जुड़ा हुआ न हो।

और उसके बाद उसका घिसना! यदि खतना को कोई व्यवहारिक महत्व बनाकर रखना है तो – यहूदियों को परमेश्वर के नियमों को ऐसा बनाकर रखना होगा – कुछ ऐसा जो मानवीय रूप में असम्भव हो, और व्यवस्था को तोड़ना, विधियों का उल्लंघन है।

ईश्वरीय अधिकृत विधि की कीमत न केवल सीधे उस व्यवस्था से जुड़ी होती है जिसे परमेश्वर ने प्रदान किया होता है, बल्कि (2) उस प्रकाशन से भी जुड़ी होती है जो उस व्यक्ति के पास होता है। विधियों से विहीन एक व्यक्ति, उन विधियों के प्रति समर्पित व्यक्ति से ज्यादा धार्मिक हो सकता है, और विधियों के प्रति अधिक समर्पित व्यक्ति, उनसे विहीन व्यक्ति की तुलना में परमेश्वर की दृष्टि में अधिक जिम्मेदार हो सकता है। ''इसलिए खतनारहित व्यक्ति विधियों का माना करे तो क्या उसकी बिन खतना की दशा खतने के बराबर न गिनी जायेगी? जो मनुष्य शारीरिक रूप से बिन खतना रहा, यदि वह व्यवस्था को पूरा करे तो क्या तुझे जो लेख पाने और खतना किये जाने पर भी व्यवस्था को माना नहीं करता, दोषी न ठहरायेगा?'' (पद 26–27)। यहाँ पर पौलुस का सीधा सा तर्क यह है कि यदि कोई धार्मिक व्यक्ति परमेश्वर के वचनों की अवज्ञा करता है तो वह, उन सारी बातों को खत्म कर देता है जिसके लिए वे नियम दिये गये थे। दूसरी ओर, एक ऐसा व्यक्ति जिसने प्रगट रूप में अपने विश्वास के चिन्ह को प्राप्त न किया हो, परन्तु उसका ह्रदय परमेश्वर के कामों के प्रति ठीक हो तो, जिन बातों के लिए विधियाँ ठहराई गयी हैं, वह उनका आनन्द उठा रहा है।

पौलुस यहाँ पर यह नहीं कह रहा है कि ठहराए गए रीति रिवाजों की कोई कीमत नहीं होती। वह कह रहा है कि वह कीमत व्यक्ति के ह्रदय की स्थिति के अनुसार सीमित हो जाती है। परमेश्वर के साथ मनुष्य के सम्बन्ध के विषय में कुछ भी अपने आप, यान्त्रिकी, या दिखावटी नहीं होता, और न ही मनुष्य के जीवन में कमी को कोई भी रीति रिवाज पूरा कर सकता है। शायद एक छोटा दृष्टान्त इस बात को स्पष्ट

करने में सहायक होगा। तेरह वर्ष की आयु में एक इब्रानी लड़का एक धर्मक्रिया से होकर गुजरता है जिसको बार मित्सवाह कहते हैं। क्योंकि जब कोई लड़का तेरह वर्ष की आयु का हो जाता है, तो माना जाता है कि वह अब धार्मिक कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को निभाने के योग्य हो चुका है। परन्तु महज किसी पर इस धर्मक्रिया को निभाने से कोई भी लड़का आदमी नहीं बन जाता। किसी को आदमी बनने के लिए अन्य बहुत सी बातों की आवश्कयकता होती है। न ही किसी रीति रिवाज को पूरा करने से कोई व्यक्ति मसीही बन जाता है; मसीही बनने के लिए इससे भी बढ़कर कामों को करना पड़ता है।

ख. सच्चाई की असीमित कीमत (2:28–29)

''क्योंकि यहूदी वह नहीं जो प्रगट में यहूदी है; और न वह खतना है जो प्रगट में है और देह में है। पर यहूदी वही है जो मन में है और खतना वही है जो हृदय का और आत्मा में है, न कि लेख काः ऐसे की प्रशंसा मनुष्यों की ओर से नहीं, परन्तु परमेश्वर की ओर से होती है।'' यह पौलुस का कोई नया विचार नहीं था। यह सच्चाई कि खतना का चिन्ह किसी व्यक्ति को यहूदी नहीं बनाता, उतना ही पुरानी थी जितनी कि व्यवस्था और भविष्यद्वक्ता (देखें व्यवस्थाविवरण 10:16; यजेहकेल 44:9)। हम व्यवस्था के आत्मिक इस्तेमालों को नजरअन्दाज करके, व्यवस्था की पत्रियों को रखकर सन्तुष्ट होने के आदि हो चुके हैं। परन्तु परमेश्वर हृदयों को जाँचता है – एक ऐसा अध्याय जिसे धर्मी शमूएल को भी सीखना था। जब शमूएल को यिशै के घर में राजा का चयन करने के लिए भेजा गया, वह एलिआब को देखकर बहुत प्रभावित हुआ, उस ऊँचे कद और सुडौल व्यक्ति को देखकर। परन्तु हम पढ़ते हैं, ''परन्तु यहोवा ने शमूएल से कहा, ''न तो उसके रूप पर दृष्टि कर, और न उसके कद की ऊँचाई पर, क्योंकि मैंने उसे अयोग्य जाना है; क्योंकि परमेश्वर का देखना, मनुष्य का देखना नहीं है; मनुष्य तो बाहर का रूप देखता है, परन्तु यहोवा की दृष्टि मन पर लगी रहती है'' (1 शमूएल 16:7)। और जब तक दाऊद वहाँ पर नहीं आ गया (जिसे बाद में शाऊल और गोलियत दोनों ने ही बालक कहा) तब तक शमूएल से परमेश्वर ने यह नहीं कहा, कि उठकर इसका अभिषेक कर, क्योंकि यही वह जन है (1 शमूएल 16:12; 17:33, 42, 56)। दाऊद में राजा होने की खूबी बाहरी नहीं, परन्तु भीतरी थी।

अब पौलुस, इब्रानियों पर दूसरा आरोप लगाता है कि वे परमश्वेर के साथ जीवित अनुभवों की सच्चाई पर विश्वास करने की बजाय वे रीति रिवाजों पर विश्वास करते हैं। निश्चय ही, कोई भी जन भयंकर विरोध का सामना किये बगैर किसी भी व्यक्ति की रूढ़िवादिता पर प्रश्न नहीं कर सकता है। अतः पौलुस आगे धर्म के अगुवों द्वारा उठाये जाने वाले अजीब विरोधों के बारे में चर्चा करता है और बताता है कि वे कितने दिखावटी और छिछले वे हैं।

III. धार्मिक विरोध की जाँच (3:1–8)

इस खण्ड में यहुदियों द्वारा उठाये गये तर्क महज इस मुद्दे को गड़बड़ी में डालने के लिए मार्ग मे बिछाये गये बहुत से अवरोधों के समान थे। यह बड़ी आश्चर्यचकित कर देने वाली बात है कि जब परमेश्वर के साथ सम्बन्ध की बात आती है, तो लोग कितने होशियार हो जाते हैं। उदाहरण के लिए, कुएँ पर की उस स्त्री के बारे में साचिये। जब उसे महसूस हुआ कि सच्चाई बड़ी ही असहजता के साथ उसके घर के पास आ रही है, तो उसने एक संगतहीन मुद्दे को वहाँ पर खड़ा कर दिया कि दो जगहों में से कौन सी वह पसन्दीदा जगह है, जहाँ परमेश्वर चाहते हैं कि उसकी आराधना की जाए (यूहना 4:20)। उसने उस ''धर्म सम्बन्धी'' सामान्य मामले में तब तक चर्चा करने से कोई एतराज नहीं किया जब तक वह प्रकाश स्तम्भ खुद उसके अपने प्राणों के नजदीक नहीं आ गया।

यह बिल्कुल स्पष्ट है कि यहूदी द्वारा उठाए गये विरोध और पौलुस द्वारा प्रस्तुत किये गये पूर्वानुमान, अति दिखावटी और छिछले थे।

क. जो बहस करते थे कि जो सही है वह गलत है (3:1–2)

''अतः यहूदी की क्या बड़ाई या खतने का क्या लाभ?'' ये लोग विरोध कर रहे थे कि पौलस के द्वारा बताई गयी सच्चाईयाँ और सिद्धान्त गलत हैं। वे गलत थे, क्योंकि उनका विचार था कि उन्होंने उस अवसर और परमाधिकार को तुच्छ जाना, जो यहूदियों के लिए आरक्षित थे। पौलुस तुरन्त ही इस विरोध से निपटता है। ''यहूदी को इससे क्या लाभ?... हर प्रकार से बहुत कुछः पहले तो यह कि परमेश्वर के वचन उनको सौंपे गए'' (पद 1–2)। यहूदी घर में पैदा होने का सबसे बड़ा फायदा यह था कि उसे बचपन से ही परमेश्वर का वचन जानने का मौका मिल जाता था।

ख. जो बहस करते थे कि जो गलत है वह ही सही है (3:3–8)

पौलुस के पहले प्रश्न के जवाब में प्रस्तुत किये गये खण्डन ने विरोध में दो बहुत गलत विचारधाराओं को स्थापित किया। सबसे पहला स्थापित किया गया गलत विचार यह था कि (1) अविश्वास से असल में परमेश्वर की विश्वासयोग्यता और भी अधिक मजबूती होती है, अतः उसे बढ़ावा देना चाहिये! ''यदि कुछ विश्वासघाती निकले भी तो क्या हुआ? क्या उनके विश्वासधाती होने से परमेश्वर की सच्चाई व्यर्थ ठहरेगी?'' (पद 3)। बेक्स का अनुवाद इसे स्पष्ट करता हैः ''यदि कुछ लोग अविश्वासयोग्य निकले तो क्या हुआ? क्या उनकी अविश्वासयोग्यता की वजह से परमेश्वर भी अविश्वासयोग्य हो जायेगा। पौलुस का उत्तर उस बिन्दू को प्रगट करता हैः ''कदापि नहीं! वरन् परमेश्वर सच्चा और हर एक मनुष्य झूठा ठहरे;

जैसा कि लिखा है, जिससे तू अपनी बातों में धर्मी ठहरे, और न्याय करते समय तू जय पाए'' (पद 4)। पौलुस जवाब में कहता है कि परमेश्वर कभी अविश्वासयोग्य नहीं है, वह कभी अपने वचनों से पीछे नहीं हटता और वह सच्चाई को और भी मजबूती के साथ में स्थापित करने के लिए दाऊद के प्रायश्चित करने वाले भजन 51 को उद्धत करता है। यह भजन प्रगट करता है कि दाऊद अपने आपको इतना नीचे और दोषी ठहराने के लिए इच्छुक था कि परमेश्वर उसके प्रति किये जाने वाले न्याय में धर्मी ठहरे; और यह वचन पौलुस के बिन्दू को सिद्ध करता है कि यद्यपि परमेश्वर ने इस्राएल को प्रतिज्ञाएँ दी थीं, परन्तु उन प्रतिज्ञाओं के होने का अर्थ यह नहीं था कि यहूदी परमेश्वर के न्याय से बच जाएँगे।

दूसरा विचार जिसका पौलुस के द्वारा विरोध किया गया, वह यह था कि (2) अधार्मिकता के स्थान पर परमेश्वर की क्षमा ज्यादा प्रगट होती है, अतः पाप करना सराहनीय है! परमेश्वर यहूदी के पापों में गलतियों को नहीं ढूँढ़ता, क्योंकि वह पाप परमेश्वर को बढ़ाने में सहायता करता है। ''इसलिए यदि हमारा अधर्म परमेश्वर की धार्मिकता ठहरा देता है तो हम क्या कहें? क्या यह कि जो परमेश्वर क्रोध करता और दण्ड देता है वह अन्यायी है? (यह तो मैं मनुष्यों की रीति पर कहता हूँ)'' (बेक्स, पद 5)। {2} एक बार से पौलुस गूँज के साथ जवाब देता है, ''परमेश्वर विरोध करता है!'' (1:6)। परमेश्वर धर्मी और न्यायी दोनों है, कुछ ऐसा जो अपने वचन के ताने–बाने में बुना हुआ हो। क्योंकि यह सच्चाई है, अतः यह एक बिल्कुल अनुमान है कि मनुष्य के पाप परमेश्वर की धार्मिकता बढ़ाते हैं।

पौलुस के शत्रु असल में यह झूठ फैला रहे थे कि पौलुस ने इन बातों को प्रचार किया और परमेश्वर की महिमा को बढ़ाने के लिए पाप को एक को माध्यम बताया है। पौलुस बड़े गुस्से के साथ में इस प्रकार की गलत शिक्षाओं का इन्कार करता और बताता है कि उसकी निन्दा करने वाले इस प्रकार की अफवाहें फैलाने के द्वारा उस पर दोष लगाने से खुद दोषी ठहरते है (पद 7–8)।

अतः पौलुस यहूदियों के खिलाफ अपने अभियोग को यहाँ पर समाप्त करता है। पौलुस यहूदियों के इस दावे को बिल्कुल भी तवज्जो नहीं देता है कि एक यहूदी होने के कारण वह परमेश्वर के न्याय से बच जाते हैं। यहूदी और यूनानी, धर्मी और अधर्मी, सभी लोग परमेश्वर के सम्मुख खड़े होते हैं, और अपने–अपने पापों के अनुसार उसके क्रोध का सामना करते हैं।

सम्पूर्ण मानवजाति को दोष

3:9–20

I. मानवीय पापों की विश्वव्यापकता (3:9–12)

क. जातिय दृष्टिकोण (3:9)

ख. धार्मिक दृष्टिकोण (3:10–12)

1. मनुष्य अधर्मी होते हैं (3:10)
2. मनुष्य समझहीन होते हैं (3:11क)
3. मनुष्य प्रतिउत्तरहीन होते हैं (3:11ख)
4. मनुष्य अपश्चातापी हो गये हैं (3:12)

II. मानवीय पाप की अपराधिकता (3:13–18)

क. मनुष्यों के दुष्ट शब्द (3:13–14)

1. खुली कब्र के समान हैं (3:13)
2. साँपों के विष के समान हैं (3:13–14)

ख. मनुष्यों के दुष्ट रास्ते (3:15–18)

1. हत्या (3:15)
2. तंगहाली (3:16–17)
3. विद्रोह (3:18)

III. मानवीय पापों के दोष की योग्यता (3:19–20)

क. व्यवस्था प्रदर्शित करती है कि मानव की स्थिति असहाय है (3:19)

1. वह निरूत्तर है
2. वह दोषी है

ख. व्यवस्था प्रदर्शित करती है कि मानव का मामला निराशाजनक है (3:20)

अब इस पत्री में मानव जाति के खिलाफ परमेश्वर के मामलों को संकलन करने का समय आ गया है। अन्यजातियों, कपटियों और इब्रानियों पर बारी बारी करके आरोप लगाये गये और सभी दोषी ठहरे। और अब मानवजाति को परमेश्वर के कटघरे में उसके खिलाफ अभियोग को तय करने के लिए बुलाया जाता है।

I. मानवीय पापों की विश्वव्यापकता (3:9–12)

इस खण्ड में पाये जाने वाले शब्द ''कोई नहीं'' और ''नहीं एक भी नहीं'' के दो बार प्रगट होने पर गौर करें। आदम के तबाह वंश में से एक भी नहीं छोड़ा गया; वह अभियोग पूरी तरह से सफाया करने वाला,

विस्तारपूर्वक और सारी बातों को शामिल किये हुए था। पौलुस मानवीय पापों के धार्मिक और जातिय पहलू को ध्यान में रखते हुए पुनः दोहराना शुरू करता है।

क. जातिय दृष्टिकोण (3:9)

''तो फिर क्या हुआ? क्या हम उनसे अच्छे हैं? कभी नहीं; क्योंकि हम यहूदी और यूनानी दोनों पर दोष लगा चुके हैं कि वे सब के सब पाप के वश में हैं।'' जब पाप का सवाल आता है तो सभी मनुष्य परमेश्वर के सम्मुख एक ही मंच पर आकर खड़े हो जाते हैं। यहूदी और यूनानी, पूर्वी या पाश्चात्य देशीय, लाल या पीले, काले या सफेद – इसमें कोई फरक नहीं है। परमेश्वर की दृष्टि में सभी लोग पापी हैं।

ख. धार्मिक दृष्टिकोण (3:10–12)

यहाँ पर क्रमानुसार, आरोपों का एक के बाद एक वर्णन सामने आता है, प्रत्येक के लिए पुराने नियम से वचन को उद्धत किया गया है। सर्वप्रथम पौलुस कहता है कि परमेश्वर के साथ उनके सम्बन्ध में मानव (1) अधार्मिक है और इस बात के पक्ष में वह भजन संहिता 14:3 को उद्धत करता है: ''जैसा कि लिखा है, कोई धर्मी नहीं, एक भी नहीं'' (3:10)। मनुष्य अपनी योग्यता से उन कामों को बिल्कुल नहीं कर सकता जो परमेश्वर की दृष्टि में ठीक हैं।

सर्वाधिक आलेखित और खतरनाक दृष्टान्तों में से एक न्यायियों के दिनों से आता है, वह समय जो परमेश्वरत्याग और अनैतिकता से भरा हुआ था। फिर न्यायियों की पुस्तक में हम दो बार यह पढ़ते हैं कि ''जिसको जो ठीक जान पड़ता था, वही वह करता था'' (न्यायियों 17:6; 21:25) – ध्यान दें कि जो उनकी दृष्टि में अच्छा था, न कि जो बुरा था। जिसको जो अच्छा लगता था, उसके वैसा करने से इस्राएल के इतिहास मे एक सर्वाधिक अन्धकारमयकाल का उदय हुआ।

बहुत से लोग सोचते हैं कि उनका व्यवहार ठीक है – और शायद यह मानवीय मानदण्ड के अनुसार ठीक भी हो। परन्तु परमेश्वर मनुष्य को उसके मानदण्डों के आधार पर नही जाँचता, वह उन्हें अपने सिद्ध मानदण्डों के आधार पर परखता है। एक बार एक आत्मधर्मी व्यक्ति अपने एक मसीही मित्र के सामने काफी फूल रहा था, ''सच बताऊँ, जॉन, मैं कोई बुरा इन्सान नहीं हूँ। अनेकों लोग मुझसे भी बहुत बुरे हैं!'' उसके मित्र ने जवाब दिया, ''आइवर, तुम अपने आपको गलत मानदण्ड में तौल रहे हो। तुम अपने आपकी तुलना वैश्याओं और पियक्कड़ों और फिसलने वाले मार्ग से करते हो और अपने आप में आत्मसन्तुष्टि को महसूस करते हो। अपने आपकी तुलना प्रभु यीशु के साथ में करो और देखो कि तुम अपने आपको कहाँ पाते हो।'' किसी भी व्यक्ति का जीवन यीशु मसीह के सिद्ध जीवन की तुलना में खड़ा

करने पर निर्दोष नहीं ठहरता। प्रभु यीशु का जीवन हमें दर्शाता है हमारे अपने जीवन कितने धूर्त और अशुद्ध हैं। परमेश्वर कहता है कि, ''कोई धर्मी नहीं, एक भी नहीं।''

आगे, पौलुस बताता है कि परमेश्वर के साथ सम्बन्धों को लेकर (2) मनुष्य समझदार नहीं है। ''कोई समझदार नहीं'' (3:11क)। कुरिन्थियों को लिखते समय पौलुस कहता है, ''परन्तु शारिरिक मनुष्य परमेश्वर के आत्मा की बातें ग्रहण नहीं करता, क्योंकि वे उसकी दृष्टि में मूर्खता की बातें हैं, और न वह उन्हें जान सकता है क्योंकि उनकी जाँच आत्मिक रीति से होती है'' (1 कुरिन्थियों 2:14)। यही सच्चाई कुलुस्सियों की पत्री में भी प्रकट होती है जहाँ पर पौलुस घोषणा करता है कि मनुष्य अपने स्वाभाविक दशा के बुरे कामों के कारण परमेश्वर के बैरी थे (कुलुस्सियों 1:21)।

मनुष्य के सोच–विचार करने की शक्ति उसे जानवरों से उत्तम बनाती है। वैज्ञानिक प्रकाशनों और आधुनिक तकनीक के इस युग में, हमारे पास हर एक प्रमाण मौजूद है कि मनुष्य एक अतिउत्तम बुद्धिजीवी है। परन्तु इसके साथ ही साथ वह आत्मिक सच्चाईयों के मामले में दुविधाओं से घिरा हुआ है; क्योंकि उसके बहुत से क्षेत्रों में निपुण होने के बावजूद भी, जब परमेश्वर की चीजों का सवाल आता है तो मनुष्य सबसे महत्वपूर्ण सघनता का इन्कार कर देता है। इस क्षेत्र में उसको कोई स्वाभाविक जानकारी या समझ नहीं है। जब अनन्त और आत्मिक मुद्दों का सवाल आता है तो उसका मन बहुत सी दिशाओं में भागता है, किसी को स्वीकार करता और कभी भटकता है। पाप के द्वारा किया गया नाशक कार्य मनुष्य की विचार करने की प्रक्रिया की जड़ों में दौड़ता है। उसकी कल्पनाएँ ज्यादातर रद्दी होती हैं, उसकी यादें अधिकतर उसका विश्वासघात करती हैं, उसकी कटौती ज्यादातर झूठ होती है; और उसका निष्कर्ष अधिकतर गलत होता है।

जो बातें सर्वाधिक महत्वपूर्ण होती हैं, मनुष्य उनके प्रति बिल्कुल अन्जान होता है। उदाहरण के लिए, धर्म के नाम पर एक व्यक्ति जिन बातों पर विश्वास कर लेगा, वे विस्मित कर देने वाली हैं। एक व्यक्ति आपसे कहेगा, ''इससे कोई फरक नहीं पडता कि आपने अभी तक क्या विश्वास किया था क्योंकि आप निष्कपट थे'' – एक गणित का प्राध्यापक जो अंकगणित या जोड़ सिखाता हो, अगर वह दर्शनशास्त्र की बात करने लग जाए तो उसे कतई बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। दूसरा व्यक्ति आपसे कहेगा, ''मैं तो यह भुलाकर कि ''परमेश्वर बीती हुई बातों को फिर पूछता है'' प्रसन्नता के साथ में पत्ता पलटूँगा'' (सभोपदेशक 3:15)। और न ही कोई व्यापारी अपने उधार देने वाले से इस प्रकार की दार्शनिकता को बर्दाश्त करेगा। आप उस व्यक्ति की प्रतिक्रिया की कल्पना करके देखिये जो एक सुबह को अपनी मेल खोलता है और उसे ऐसे व्यक्ति से एक पत्र प्राप्त होता है, जिससे उसने पाँच हजार डॉलर उधार लिया हो और उस मेल में यूँ लिखा होः ''श्रीमान जी, मुझे अभी अभी याद आया कि मैंने आपको पाँच हजार डॉलर दिये थे, परन्तु आज मैंने अपने खाते में नया पन्ना खोला है और आज के बाद इरादा किया है कि अब मैं

अपना उधार चुकाकर उच्च स्तरीय व्यापारी जीवन को ईमानदारी के साथ जिऊँगा। आज के बाद जो भी आपका बकाया रह जायेगा, वह समय पर उतार दिया जायेगा। मैं पिछली बातों को नजरअन्दाज कर रहा हूँ। आपका आभारी'' – फिर भी वही व्यक्ति जो इस प्रकार के पत्र को पाकर विस्मित हुआ होगा, प्राणों के मामले में इस प्रकार की विचारधारा का इस्तेमाल करता है।

''कोई समझदार नहीं।'' परमेश्वर के स्वभाव को लेकर मनुष्य समझ नहीं रखता। मनुष्य यह कभी नहीं समझ पाता कि परमेश्वर की निगाहों में उसका पाप कितना घृणित है। वह यह भी कभी नहीं समझ पाता कि परमेश्वर कितना पवित्र है; और न यह कि आने वाले समय के स्वर्ग और नरक में क्या फरक है; और न ही परमेश्वर के द्वारा मुहैया की गयी वह कीमत को जिसे वह नजरअन्दाज कर रहा है। यदि मनुष्य इन बातों को समझ जाये तो वह हमेशा उद्धार पाने की जल्दी में रहेगा। अवश्य, यही होता है जब मनुष्य की आँखें अन्त में पवित्र आत्मा के कायल कर देने वाले कार्यों के द्वारा खुल जाती हैं।

इसके बाद पौलुस प्रगट करता है कि परमेश्वर के साथ उसके सम्बन्ध के अर्न्तगत् (3) मनुष्य प्रतिउत्तरहीन है। ''कोई भी परमेश्वर की खोज करने वाला नहीं है'' (3:11क)। यहाँ पर स्वाभाविक रूप में एक प्रश्न उठता है, कि मूर्तिपूजकों के देशों में जहाँ पर हर जगह मन्दिर और भक्त पाये जाते हैं, यह किस प्रकार सम्भव हो सकता है। बाइबल इसका उत्तर देती है किः ''अन्यजाति जो बलिदान करते है वह बलिदान परमेश्वर के लिए नहीं, परन्तु दुष्टआत्माओं के लिए होता है'' (1 कुरिन्थियों 10:20)। पौलुस ने अन्यजातियों के अभियोग में प्रदर्शित किया है कि अन्याजियों ने स्वेच्छा के साथ परमेश्वर की सच्चाई से अपना मुख मोड़ लिया है और अविश्वासी और मूर्तिपूजक बन गये हैं। संसार के इस झूठे विश्वास के पीछे ''इस संसार का ईश्वर है'' (2 कुरिन्थियों 4:3–4) अर्थात् शैतान है। इस विषय पर हमारे पास खुद परमेश्वर का वचन है, नवजीवन से अलग धर्म व्यर्थ है। उसने कहा, ''कोई मेरे पास नहीं आ सकता है, जब तक कि मेरा पिता उसे अपने पास न खींच ले'' (यूहन्ना 6:44)।''

व्यूस्ट बतलाते हैं कि जो शब्द ''खोजते'' हैं का इस्तेमाल यहाँ पर किया गया है वह एक्जीटियो (म्रामजमव) है, जिसका मतलब है '''तलाश करना'' किसी को ढूँढ़ना' और जो किसी वस्तु की दृढ़ संकल्प के साथ खोज को बताता है।'' {1} ज्यादातर लोग उतने ज्यादा स्वाधीन नहीं होते, परन्तु अपने धार्मिक विचार को तैयार रखते हैं। कुछ लोग, यह सत्य है कि तब तक कभी यहाँ और फिर कभी वहाँ मुँह मारते हैं, जब तक कि उन्हें उनके स्वाद का कोई स्थान प्राप्त नहीं हो जाता, परन्तु पवित्र आत्मा के द्वारा कायल किये और अपनी ओर खींचे बगैर वे महज मायाजाल के एक और नाम को धारण करने वाले बन जाते हैं।

परमेश्वर कहते हैं, ''तुम मुझे ढूँढ़ोगे और पाओगे भी, क्योंकि तुम अपने सम्पूर्ण मन से मेरे पास आओगे'' (यिर्मयाह 29:13)। कुछ ऐसा जो हमारे प्राण में बिना पवित्र आत्मा के कार्य नहीं किया जा सकता। प्रभु की स्तुति हो, क्योंकि उसने पहल को किया है! यीशु ने कहा, ''क्योंकि मनुष्य का पुत्र खोये हुओं को

ढूँढ़ने और उनका उद्धार करने के लिए आया है'' (लूका 19:10)। यह बहुत महत्वपूर्ण है कि बाईबल मनुष्य की तुलना खोई हुई भेड़ से करती है, क्योंकि भेड़ एक ऐसा जानवर है जो बहुत ज्यादा चतुर नही होती, तेज मगर मजबूत नहीं, और जिसके पास एक बार अपने चरवाहे से भटक जाने के बाद दोबारा वापस जाने की न तो ताकत होती है और न झुकाव। मनुष्य परमेश्वर के प्रति इतना ज्यादा असक्रिय है कि उद्धार के निमित्त जितने भी कदम उठाये गये है वे सब परमेश्वर की ओर से ही उठाये गये हैं। और उसने इतना कुछ किया है! उसने अपना पुत्र दिया है; उसने अपना वचन दिया है; और उसने अपनी आत्मा को दिया है; और ज्यादातर अब भी कोई प्रतिउत्तर नहीं देंगे। एक आम आदमी के लिए ठीक ही कहा गया है, ''कोई ऐसा नहीं है जो परमेश्वर की खोज करता हो।''

आगे पौलुस बताता है कि {4} मनुष्य अपश्चातापी है। ''सब भटक गये हैं, सब के सब निकम्मे बन गये हैं, कोई भलाई करने वाला नहीं, एक भी नहीं'' (3:12)। ये शब्द मनुष्य के द्वारा कल्पना की गयी सारी भलाई की धज्जियाँ उड़ा देते हैं। ये कुछ नियमित रूप से किये जाने वाले दावे हैं, ''जितना अच्छा मुझसे हो सकता है, मैं कर रहा हूँ'' साधारणतः सत्य नहीं है। कभी भी किसी व्यक्ति ने अपनी तरफ से अपना उत्तम प्रदर्शन नहीं किया है; कभी भी ऐसा नहीं हुआ है कि जहाँ हमने थोड़ा भी प्रयास किया हो या ध्यान दिया हो, वहाँ उन्नति नजर न आयी हो। जो लोग इस प्रकार का दावा करते हैं वे खुद अपने धर्म के द्वारा दोषी ठहरते हैं।

परमेश्वर का मनुष्य के जीवन के प्रति जाँच है कि उसका जीवन ''बेफायदा'' है। उसके भले काम, उसके बुरे कामों को ढाँप नहीं सकते, उसके सारे धार्मिक काम पाप के दोष के द्वारा डूबे हुए हैं। पौलुस ने भी एक बार अपने धार्मिक ''फायदों'' पर घमण्ड किया, जब तक कि परमेश्वर ने उसको न दिखाया कि वे सारी चीजें कितनी मूल्यहीन थी, जिन पर वह अपना भरोसा रख रहा था। फिर वह मसीह के लिए उन सारी चीजों को छोड़ने के लिए तैयार हो गया। ''वे सारी बातें मेरे लिए फायदे की थीं, जिन्हें मैंने, मसीह के लिए हानि समझा'' (फिलिप्पियों 3:4–9)।

यह भी याद रखिये कि मनुष्य की अधार्मिकता, असमझदारी, प्रतिक्रियाहीनता और अपश्चाताप के सन्दर्भ में उसके आरोपों के दौरान सम्पूर्ण मानवजाति आरोपी ठहरी। प्रत्येक मनुष्य मानवीय पाप की व्यापकता के खुलासे में शामिल हो गया।

II. मानवीय पाप की अपराधिकता (3:13–18)

मनुष्य, परमेश्वर के सामने मात्र दोषी नहीं, बल्कि अतिदोषी है। पौलुस उन बातों की ओर हमारा ध्यान खींचकर अपनी बात को साबित करता है जिन बातों को मनुष्य कहता और करता है।

क. मनुष्यों के दुष्ट शब्द (3:13–14)

पौलुस अभी भी पुराने नियम के वचनों का हवाला दे देकर प्रमाणों को प्रदर्शित कर रहा है। वह दर्शाता है कि मनुष्य की बोली की तुलना (1) कब्र के घटिया तस्वीर से की जा सकती है – ''उनका गला खुली कब्र के समान है'' (पद 13क)। मानवीय बोलचाल की अतिभ्रष्टता को चित्रित करने का यह बहुत ही आर्कर्षित तरीका है। किसी खुली हुई कब्र से दुर्गन्ध उसके खुले होने की वजह से नहीं, परन्तु उसके भीतर पाये जाने वाली लाश की वजह से आती है। ठीक इसी प्रकार, अशुद्ध, कृपारहित, झूठे मनुष्य की बातें एक दूषित, द्वेषपूर्ण और छली हृदय को ही अपना शिकार बनाती हैं।

उसके पश्चात पौलुस मनुष्य की बोली की तुलना (2) साँपों के विष से करता है। ''उन्होंने अपनी जीभों से छल किया है, उनके होठों में साँपों का विष है'' (पद 13ख–14)। नीवैल बताते हैं कि ''विनाशकारी साँप के विषदन्त, साधारणतः, ऊपर वाले जबड़ों के पिछले हिस्से में लिपटे होते हैं, परन्तु जब वह किसी पर आक्रमण करने के लिए फन मारता है तो, वे खोखले विषदन्त नीचे की ओर आ जाते हैं, और जब वह साँप काटता है, तो वे विषदन्त होठों में छिपे जहर को फुंकारी के साथ जोर से जहर की थैली से बाहर निकाल देता है, और इस प्रकार से वह जहर को घाव के भीतर प्रवेश करा देता है। आप और मैं भी इसी प्रकार नैतिक विष थैलियों के साथ में पैदा हुए थे।'' {2} हम एक दूसरे को विषैले शब्दों से काटते हैं।

खराब बोली न केवल मनुष्य के विरूद्ध अपराध है, बल्कि यह परमेश्वर के विरूद्ध भी अपराध है। प्रभु यीशु चेतावनी देते हैं कि ''जो जो निकम्मी बातें मनुष्य कहेंगे, न्याय के दिन वे हर एक उस बात का लेखा देंगे'' (मत्ती 12:36)। हर एक बोलने वाला व्यक्ति प्रतिदिन हजारों शब्दों का इस्तेमाल करता है। यह प्रतिदिन बोले जाने वाले शब्द एक वॉल्यूम बनाने के लिए काफी हैं और अगर हमारे जीवनभर की बातों के वॉल्यूम्स को इकट्ठा कर दिया जाये, तो वह किसी कॉलेज का पुस्तकालय बन सकता है। प्रत्येक वॉल्यूम का खण्ड, वक्ता के विचारों को उनके शब्दों में व्यक्त करते हैं, और हर एक शब्द परमेश्वर के सामने न्याय और जाँच के लिए खुला होता है। इसके अलावा, कोई भी शब्द को दोबारा बोलने का मौका नहीं दिया जायेगा और न ही किसी शब्दों के संग्रह को वापस लिया जायेगा। पौलुस यहाँ पर दर्शाता है कि हमारा प्रत्येक शब्द हमारे प्रति परमेश्वर के आरोपों के महत्वपूर्ण भाग का निर्माण करता है।

ख. मनुष्यों के दुष्ट रास्ते (3:15–18)

केवल हमारे द्वारा बोली जाने वाली बातें ही नहीं, परन्तु जो कार्य हम करते हैं, वे भी हमें न्याय के सामने लाकर खड़ा कर देते हैं। सर्वप्रथम, परमेश्वर हत्या को मानवीय व्यवहार का एक लक्षण बताते हैं। ''उनके पाँव लहू बहाने को फुर्तीले हैं'' (पद 15)। यह बहुत ही महत्वपूर्ण है कि अदन की वाटिका के बाहर

पहला पाप हत्या थी (उत्पत्ति 4:8)। पाप पूरी तरह से विकसित होकर मनुष्य के जीवन में प्रवेश कर गया। मनुष्य के प्रथम पाप ने मनुष्य को परमेश्वर से अलग कर दिया था; परन्तु उसके दूसरे पाप ने मनुष्य को मनुष्य से अलग कर दिया। केन के धर्म के अनुसार एक मेम्ने को मारना अति कठिन कार्य था, लेकिन हाबिल को मारना नहीं। पौलुस कहता है कि मनुष्य लहू बहाने के लिए फुर्तीला है। जे. एडगर हूवर हमें याद दिलाते हैं कि, संयुक्त राज्य जैसे देश के अन्दर भी, प्रति चालीस मिनट में एक कत्ल होता है।

जैसा कि पुराना इतिहास बताता है कि परमेश्वर का न्याय न तो अतिश्यौक्ति करता है और न ही वह पुराना होता है। द्वितीय विश्वयुद्ध के अन्त में नाज़ी युद्ध के हत्यारों को मुकद्दमे के लिए पेश किया गया और उन्हें चार प्रकार से दोषी पाया गया। पहली तीन गणना – युद्ध का अपराध – जिसमें हत्या के लिए अभियोग पक्ष, वहाँ के आम नागरिकों और युद्ध में प्राप्त कैदियों के साथ अभद्र व्यवहार, लोगों को मजदूर गुलाम बनाने के लिए भेजना और बन्धकों को मारना शामिल था। चौथी गणना – मानवीयता के खिलाफ अपराध – जिसमें हत्या, अत्याचार, गुलाम बनाने, रातनीतिक और जातिवाद के आधार पर सताव शामिल था।

न्यायमूर्ति जैक्सन, आरोपों की फाइल खोलने पर, एक दल के शक्ति में आने का वर्णन करते हैं और बाद में यहूदियों के खिलाफ अपराधों के बारे में बताते हैं। ''नाज़ियों के द्वारा बड़ी संख्या में बर्बर अपराधों की योजना बनायी गयी और उसे अन्जाम दिया गया.... गेथो एक दमनकारी कार्यों की जाँच करने वाली प्रयोगशाला थी.... यहूदियों को नाश करने के द्वारा नाजियों को, पोल्स, सर्ब्स, यूनानियों के खिलाफ अपनी व्यवहारिक ताकत का अन्दाजा हो गया था।'' नाजी – अधिकृत क्षेत्रों में करीब साठ प्रतिशत यहूदियों – या करीब 57 लाख यहूदियों की हत्या कर दी गयी थी। ''इतिहास,'' वह कहते हैं कि ''इतने ज्यादा लोगों के प्रति किये गये अपराधों का लिखा नहीं गया या फिर आँकडों में विस्तारपूर्वक उसकी क्रूरता का विवरण नहीं किया गया है।'' वह उस दुःखद क्रूरता, अत्याचारों, भुखमरी, नियोजित छावनियों में बड़ी भीड़ की हत्या और औषधि के नाम पर निर्दयता और भ्रष्टता से पूर्ण ''वैज्ञानिक'' प्रयोगों का वर्णन करता है।

मुकद्दमे के दौरान एक फिल्म दिखाई गयी, जिसमें एकड़ों जमीन पर लाशें, यातनाएँ सहे हुए लोग, सड़ी गली हालत में शव, अन्तड़ियों और सिरों से भरे हुए टोकरे, प्रकाश स्तम्भों पर लटके हुए शरीर, अपने प्रियजनों के पास बैठी रोती हुई स्त्रियाँ; अनेकों लोगों को एक साथ देह संस्कार; सिरों पर प्रहार किये गये बच्चे; दाहगृह और ईंधन कक्ष; कपड़ों की पोटलियाँ; स्त्रियों के बालों की गठरियाँ दिखाई गयी थी।

मुकद्दमे के अन्त में, श्रीमान हार्टले शोक्रॉस ने ब्रिटिश प्रतिनिधि मण्डल को यह निर्णय सुनाया। उन्होंने सुरक्षाकर्मियों के द्वारा हुए अपराधों के बारे में बहुत विस्तार से बताया, कि वे अपराध इतने भयानक थे कि उनकी कल्पना करने पर रूह काँप उठती है। उसने उन शहरों की चर्चा की, जिसे मलबे में तब्दील कर दिया गया, जिसमें से लाखों बेघर और लूले लंगड़े और भूख और कुपोषणता के शिकार, बीमार विचरने

के लिए छोड़ दिये गये थे, जो युद्ध का परिणाम था। उसने नाज़ीयों के द्वारा गुलामी की बेदारी के बारे में वर्णन किया और इसकी कठोरता और निर्दयता के बारे में बताया कि किया प्रकार औरतों और बच्चों को उनके घरों से बाहर ले जाकर उनके साथ जानवरों से बुरा व्यवहार किया गया, भूखा–प्यासा रखा गया, पीटा गया और कत्ल कर दिया गया। यहूदियों के बर्बर विनाश की चर्चा करते हुए, श्रीमार हार्टले शोक्रॉस ने बताया कि किस प्रकार गलत तरीके से उन लोगों ने मनुष्य के सोने के दाँतों को गलाकर उन्हें सोने की सिल्ली में तबदील किया और जर्मन के बैंकों में रखा, अपने व्यवसायिक कार्यों के लिए स्त्रियों के बालों का इस्तेमाल किया, और लैम्प के कवर बनाने के लिए गुदे हुए शरीरों की चमड़ी को उधेड़ लिया। उसने कहा कि ''बड़ी मात्रा में कत्लेआम'' एक धन्धा बन गया था और जो प्रचलित भी होता जा रहा था। {3} इस बात को ध्यान में रखा जाये कि ये सारे घोर अपराध यूरोप के एक सभ्य, शिक्षित और विकसित देश के द्वारा किये जा रहे थे।

आत्म–सन्तुष्ट होकर, दूसरों पर आरोप लगाते हुए यह कहना बहुत ही आसान है कि ''मैंने कभी इस प्रकार का काम नहीं किया!'' असल में विषय यह नहीं है। मनुष्य का ह्रदय किसी भी कल्पना किये जाने वाले पाप का वारिस बनने को तत्पर रहता है। प्रभु यीशु ने बुरी नजर से देखने को ही व्यभिचार कहा, और क्रोध के साथ विचार करने को हत्या (मत्ती 5:21–22, 27–28)। और इसकी जड़ कहाँ है, यह परमेश्वर का नियन्त्रित करने वाला अनुग्रह ही है जो फलों की पूरी पैदावार को रोके रखता है।

अगला, परमेश्वर दुर्दशा को (2) मनुष्य की दुष्टता का मार्ग का नतीजा बताता है। ''उनके मार्गों में नाश और क्लेश है, उन्होंने कुशल का मार्ग नहीं जाना''(पद 16–17)। न्यूरिम्बर्ग के मुकद्दमे में, दुनियाभर के लोग यह कहने के लिए इकट्ठा हुआ कि ''फिर कभी नहीं!'' परन्तु उसका परिणाम क्या हुआ? कुछ नहीं!

आज की तारीख में, उदाहरण के लिए चीन गणराज्य के लोग सर्वाधिक व्यापक और दयारहित, गुलामों से मजदूरी कराने की प्रणाली के द्वारा, जिसे शायद की संसार ने देखा हो, कार्य करते हैं, जो नाजीयों के प्रयासों में बाधा डालते हैं और जिसकी तुलना मात्र सोवियत संघ से की जा सकती है। साम्प्रदायिक देश चीन एक बड़े कारागार के समान है। ''परिश्रम के द्वारा सुधार'' कैम्प पूरे देश में लगाये जाते और ठीक उसी रीति से चलाये जाते हैं, जैसे कि गुलामों के कैम्प, जिन्होंने उन मजदूरों के सामने मिस्र के पिरामिड और चीन की महान दीवार बनाने जैसे लक्ष्यों को प्रदान किया था।

चीन में, आतंक राज्य की स्वीकृत नीति हैं। परिवार योजनाबद्ध तरीके से टूट जाते हैं, क्योंकि वहाँ पर बच्चों को अपने माता–पिता, दूसरे रिश्तेदारों और मित्र की जासूसी करने के लिए कहा जाता है। बच्चों को ''जाँच–पड़ताल सम्बन्धी''(साधारण शब्दों में – जासूसी करने के लिए) विशेष पाठ्यक्रम और काम दिया जाता है। मेनलैण्ड चीन की दुर्गति को तुच्छ जानते हुए, माओ ट्सी–टुंग मानवता के खिलाफ निर्णायक योजना को लेकर अति प्रसन्न होता हैं। उसने बताया कि वे किसी भी प्रकार की आपातकालीन स्थिति,

किसी भी परिस्थिति, एक परमाणु युद्ध के लिए जिसके अर्न्तगत् ''दुनिया के करीब 300 करोड़ लोग जो कि दुनिया के आधे लोग हैं, समाप्त हो जायेंगे'' के लिए और उसके साथ ही साथ ''मौत के मलबे पर समाज बनाने'' के लिए तैयार हो रहे हैं। क्योंकि अब चीन शस्त्रागार और मिसाइलों के साथ एक परमाणु शक्ति बन गया है, यह भयानक धमकी सम्भवतः हकीकत बन सकती है।

इस दौरान, करीब आठ हजार टन अफीम प्रतिवर्ष रेड चीन में तैयार की जाती है, जिसमें से अधिकतर समाप्त करने के इरादे से निर्यात की जाती है। उदाहरण के लिए, द यूनाईटेड स्टेट में, साम्प्रदायिक तत्वों के द्वारा मादक पदार्थों को फैलाया जा रहा है, जिसका मुख्य लक्ष्य ज्यादा से ज्यादा लोगों को इसकी आदत डाल देना है। {4}

''उन्होंने कुशल का मार्ग नही जाना।'' संयुक्त देशों की संस्थाओं के द्वारा प्रस्तुत किये गये आँकड़ों के अनुसार, द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान लगभग तीन सौ बीस लाख लोग युद्ध के मैदान में मारे गये थे; करीब दो सौ पचास लाख बमबारी में मारे गए; दो सौ पचास लाख लोग नियोजित छावनियों में डालकर मार दिये गये; और करीब दो सौ नब्बे लाख लोग चोटिल या विकलांग हो गये। जब हम इस प्रकाशमान बीसवीं सदी में मनुष्य की अमानवीयता पर ध्यान करते हैं, हम इस प्रकार के आँकड़ों को अपने दिमाग से बाहर रखते हैं, क्योंकि हम इन दिये गये आँकड़ों की घोरता को सहन नहीं कर सकते।

ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान एक सैनिक को मारने के लिए करीब 225,000 डॉलर खर्च हुए और सभी संगठनों को 800 बिलियन का खर्च उठाना पड़ा। सम्मेलन मंच पर सारी अर्न्तर्राष्ट्रीय समस्यों की मध्यस्थता की सामग्री को जमा करने के बावजूद, मनुष्य फिर भी कुशलता के मार्ग को नहीं ढूँढ़ सकता।

आज के समय में संयुक्त राज्य में, मजदूर सेना में हर दस में से एक व्यक्ति सुरक्षा की गतिविधि से जुड़ा हुआ है। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि जितनी भी लड़ाईयाँ बाहर होती हैं, उनमें वह पहले चौबीस घण्टे में लगभग सोलह बिलियन टन टी.एन.टी छोड़ सकता है – जो कि द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान छोड़े गये टी.एन.टी का चार हजार गुना ज्यादा है। यदि उसकी ''पहली लहर'' शत्रु की सुरक्षा को भेद देती है, तो रूस के 200 मिलियन लोगों में से 80 से 90 प्रतिशत लोग खत्म हो जायेंगे, सारे बड़े शहर ध्वस्त हो जायेंगे, और 85 प्रतिशत सोवियत उद्योग खत्म हो जायेगा।

लगभग दो हजार वर्ष पहले इस दुनिया में कोई ऐसा जन आया, जिसको ''शान्ति का राजकुमार'' नाम दिया गया (यशायाह 9:6)। उसके जन्म पर स्वर्गदूतों के दल ने यहूदा के पहाड़ पर गीत गाया, ''आकाश में परमेश्वर की महिमा और पृथ्वी पर उन मनुष्यों में, जिनसे वह प्रसन्न है, शान्ति हो'' (लूका 2:14)। परन्तु सारी दुनिया कलवरी पर उसे क्रूस पर चढ़ाने के लिए इकट्ठा हो गयी, जिसके परिणाम–स्वरूप उन्हें, जब तक कि वह वापस नहीं आ जाता, केवल ''लड़ाईयों पर लड़ाईयों की चर्चा सुनने

को मिलेंगी'' (मत्ती 24:6)। इस दौरान, मनुष्य की दुर्दशा केवल सहने योग्य नहीं है; बल्कि यह कुछ ऐसी बात है जिसके लिए मनुष्य परमेश्वर के सिंहासन के सामने आपराधिक तौर पर उत्तरदायी बन गया है।

अन्त में, परमेश्वर मनुष्य के विद्रोह को (3) मनुष्य के मार्गों की विशेषता बतलाता है – ''उन्हीं आँखों के सामने परमेश्वर का भय नहीं है'' (पद 18)। परमेश्वर, जिसकी उपस्थिति में ही मनुष्य को गलत काम के भय का एहसास हो जाना चाहिये, यह एहसास उसके भीतर से पूरी तरह से गायब होता जा रहा है। उसका आदर करने के बजाय, मनुष्य उसके साथ ऐसा व्यवहार करता है कि मानो उसका कोई अस्तित्व ही न हो। उदाहरण के लिए, सोवियत संघ को स्वीकृति देने के समय, संयुक्त देशों के संगठन ने सहमति दर्ज की कि उसके सत्रों में परमेश्वर का नाम नहीं लिया जायेगा। परन्तु उन्होंने एक बहुत ही प्रमुख जगह पर ज्यूस की मूर्ति को स्थापित किया, जो ओलम्पस का देवता है। इस संसार में नास्तिकता प्रगतिशील है और दिन प्रतिदिन बढ़ती चली जा रही है।

III. मानवीय पापों के दोष की योग्यता (3:19–20)

मानवीय पापों की अपराधिकता और विश्वव्यापकता के परिदृश्य में, यह थोड़े से आश्चर्य की बात है कि पौलुस अपने अभियोग को खत्म करते समय वह मानवीय परिस्थिति और परमेश्वर द्वारा दण्ड के लिए वह मनुष्य के विवेक को दोषी ठहराता है। यह करने के लिए, वह परमेश्वर की व्यवस्था को सामने लाता है।

क. मानव की स्थिति असहाय है (3:19)

व्यवस्था जल्दी ही मानवीय आचरण को प्रगट कर देती है। मनुष्य अपने पापों के प्रति निरूत्तर है और उसकी यह निरूत्तरता परमेश्वर की आज्ञाओं के उल्लंघन से आती है। ''हम जानते हैं कि व्यवस्था जो कुछ कहती हैं, उन्हीं से कहती है, जो व्यवस्था के अधीन है, इसलिए कि हर एक मुँह बन्द किया जाये और सारा संसार परमेश्वर के दण्ड के योग्य ठहरे'' (पद 19)। ''व्यवस्था'' शब्द का इस्तेमाल ऐसा प्रतीत होता है कि यह सम्पूर्ण पुराने नियम के प्रकाशन को दर्शाता है। पौलुस अभी तक हमें मानवीय पापों के सन्दर्भ में चौदह वाक्यों के बारे में बताता है। {5} जिस व्यक्ति ने अपने आपको इन वचनों में होकर देख लिया तो उसे अपने बचाव में कुछ कहने की जरूरत नहीं। हर एक मुँह बन्द किया गया है। वह परमेश्वर के सामने एक नैतिक और आत्मिक कोढ़ी का स्थान लेकर, अपने मुँह पर हाथ रखकर कहेगा, ''मैं अशुद्ध हूँ!'' (लैव्यवस्था 13:45; व यशायाह 6:1–5)। वह उस चुंगी लेने वाले के समान रोयेगा, ''हे परमेश्वर, मुझ पर दया कर, मैं पापी हूँ'' (लूका 18:13)। जो लोग इस स्थान को प्राप्त कर लेते हैं, उनके लिए दया बढ़ाई जाती है, जैसे कि पौलुस इस बात को आगे साबित करेगा; परन्तु जो लोग बहस करते है, श्वेत सिहांसन

के सामने, मुँह बन्द किये जाने के समय उनके लिए कोई दया नहीं होगी (प्रकाशितवाक्य 6:15–17; 20:11–15)।

मनुष्य न केवल परमेश्वर की व्यवस्था के द्वारा निरूत्तर है, परन्तु (2) वह व्यवस्था के द्वारा दोषी भी ठहरता है। वह ''दोषी है!'' एक वजह जिसके कारण परमेश्वर ने अपनी व्यवस्था को दिया, वह थी कि ''सारा संसार परमेश्वर के दण्ड के योग्य ठहरे'' (पद 19)। यह पता करने के लिए कि हम परमेश्वर के सिंहासन के सम्मुख कहाँ खड़े होंगे, हमें हमारी मृत्यु का इन्तजार करने की जरूरत नहीं है, यह हम अभी जान सकते हैं। यूहन्ना और पौलुस सहमत हैं कि हम ''पहले से ही दोषी हैं'' (यूहन्ना 3:18)। परमेश्वर का न्याय केवल उन बातों का समर्थन होगा, जो हम रोमियों 1–3 में पाते हैं। सच में, मनुष्य की स्थिति असहाय है।

ख. मानव का मामला निराशाजनक है (3:20)

''क्योंकि व्यवस्था के कामों से कोई प्राणी उसके सामने धर्मी नहीं ठहरेगा, इसलिये कि व्यवस्था के द्वारा पाप की पहिचान होती है'' (पद 20)। किसी भी व्यक्ति के लिए यह आशा करना बिल्कुल व्यर्थ है कि कैसे न कैसे, फिर भी उसके भले काम, उसके बुरे कामों द्वारा दब जायेंगे; कि किसी न किसी तरह वह खुद को परमेश्वर के सम्मुख ग्रहणयोग्य बनाने में कामयाब हो जायेगा। वह परमेश्वर के कूट संकेत – उसकी व्यवस्था के द्वारा, जिसका मुख्य काम किसी को बचाना नहीं, परन्तु उन्हें दोषी ठहराना है। परमेश्वर को मनाने के लिए उसकी व्यवस्थाओं के बेहतर से बेहतर ढंग से मानने पर भी असफला मिलती है – और उसकी व्यवस्था खुद ही उस असफलता को व्यक्त करती है। सच में मनुष्य केवल अपनी परिस्थिति को लेकर असहाय ही नहीं, परन्तु वह अपने मामले को लेकर आशाहीन भी है।

यदि मनुष्य को बचना है तो, परमश्वेर को ही उसे बचाना होगा। और इस पत्री में यही पौलुस का अगला विषय है।

उद्धार मुफ्त है

3:21–31

I. उद्धार के निमित्त परमेश्वर की योजना प्रगट है (3:21–23)

क. यह सम्पूर्ण आत्मिक है (3:21)

1. यह व्यवस्था के स्तर की पुष्टि करता है (3:21क)
2. यह भविष्यद्वक्ताओं के वचनों की पुष्टि करता है (3:21ख)

ख. यह बिल्कुल उपयुक्त है (3:22–23)

1. वह अपने प्रस्ताव रखने में अनोखा है (3:22)
2. वह आग्रह करने में विश्वव्यापी है (3:23)

II. उद्धार के निमित्त परमेश्वर की योजना धार्मिक है (3:24–26)

क. मनुष्य की दुर्दशा (3:24–26क) इसलिए उद्धार निम्न बातों पर आधारित है

1. एक विशिष्ट सिद्धान्त (3:24क)
2. एक छुटकारा देने वाला मूल्य (3:24ख –25क)
3. एक राजकीय उद्घोषणा (3:25ख–26क)

ख. परमेश्वर का धार्मिक चरित्र (3:26ख)

III. उद्धार के निमित्त परमेश्वर की योजना उचित है (3:27–31)

क. यह मानवीय घमण्ड का बहिष्कार करता है (3:27–28)

ख. यह मानवीय पूर्वधाराणाओं का बहिष्कार करता है (3:29–30)

ग. यह मानवीय पूर्वानुमान का बहिष्कार करता है (3:31)

''लेकिन अब...'' (3:21)। बाईबल के सभी लेकिनों पर ध्यान दें! जिस प्रकार से बड़े बड़े दरवाजे कब्जे पर इधर–उधर घूमते हैं, ठीक उसी प्रकार बाईबल में नाटकीय ढंग से आने वाले बदलाव इस साधारण से शब्द पर घूमते हैं। उदाहरण के लिए, सुलैमान के जीवन में लेकिन को देखें (1 राजा 11:1), उज्जियाह के जीवन में देखें (2 इतिहास 26:16), फिरैन (निर्गमन 8:15), और नूह (उत्पत्ति 6:8), और ऊड़ाऊ पुत्र की कहानी में (लूका 15:20)।

पौलुस मानवजाति के पापों की कितनी काली तस्वीर को बना रहा था; इसमें आकाश में तूफान भरे कितने घने बादल हैं और कितनी डरावनी गुस्से से भरी बिजली चमकती है! लेकिन देखो! बादलों के बीच एक दरार है, जहाँ से सूरज की किरणें निकलती हैं। परमेश्वर के पास पापियों के उद्धार के लिए योजना है, यहाँ तक कि जगत के सबसे बड़े पापी के लिए भी। सबसे पहली बात जो पौलुस इस दरार के बीच से हमारे लिए प्रकाशित करना चाहता है कि उद्धार निःशुल्क है। यह मनुष्य का काम नहीं, परन्तु परमेश्वर का काम है।

I. उद्धार के निमित्त परमेश्वर की योजना प्रगट है (3:21–23)

मनुष्य के लिए उद्धार मानवीय वजह या प्रयास को नतीजा नहीं है। यह शुरू से लेकर अन्त तक परमेश्वर की योजना है, जो परमेश्वर के द्वारा उसके वचनों में प्रगट की गयी है। पौलुस सबसे पहले यह प्रदर्शित करने के लिए दर्द सहता है कि उद्धार के निमित्त जो सच्चाई वह प्रगट करने जा रहा है, वह मजबूती से पुराने नियम की शिक्षाओं पर आधारित है।

क. यह सम्पूर्ण आत्मिक है (3:21)

यह व्यवस्था के स्तर की (1) पुष्टि करता है। ''परन्तु अब व्यवस्था से अलग परमेश्वर की वह धार्मिकता प्रगट हुई है जिसकी गवाही व्यवस्था और भविष्यद्वक्ता देते हैं'' (3:21क)। परमेश्वर कभी भी अपने स्तर को नीचे नहीं कर सकता है। यदि उसे मनुष्य को उसकी मूर्खता और पापों के नाश से बचाना है, तो वह अवश्य ही उस तरीके से होना चाहिये, जिससे मूसा के द्वारा प्रदान की गयी स्पष्ट व्यवस्था न टूटे। पुराने नियम की व्यवस्था नैतिक और अनुष्ठानिक दोनों की थी। नैतिक व्यवस्था पाप को बेपरदा करने के लिए तैयार की गयी थी; और अनुष्ठानिक व्यवस्था सामने आये हुए पापों को अस्थाई रूप से छिपाने के लिए तैयार की गयी थी। सुसमाचार में दी गयी परमेश्वर की उद्धार की योजना, मूसा की व्यवस्था में प्रस्तुत परमेश्वर की धार्मिकता को बरकार रखती है, और पाप को साफ करने के एक सन्तोषजनक तरीके को भी बताती है जो शायद ही बैल और बकरी के लहू चढ़ाने से प्राप्त हो सकता है। अनुष्ठानिक व्यवस्था इस बात की साक्षी थी कि प्रमाणिक कमियों के बावजूद, परमेश्वर की इच्छा अथाह पापों को अपने उस महान बलिदान और उस तरीके से साफ करने और रद्द करने की है, जो उसकी पवित्रता से पूर्ण हो।

उद्धार के निमित्त परमेश्वर की (2) योजना भविष्यद्वक्ताओं के वाक्यों की पुष्टि करती है। ''जिसकी गवाही व्यवस्था और भविष्यवक्ता देते हैं'' (3:21ख)। यशायाह 53 एक दम हमारे दिमाग में न केवल हमें हमारे बदले में मसीह की वैकल्पिक मृत्यु की याद दिलाता है (पद 6), परन्तु हमारे लेखे में मसीह की धार्मिकता को प्रत्यापित करने की भी (पद 11)।

अतः, मानवीय प्रयासों और व्यवस्था के बिना पापी मनुष्य को धार्मिक बनाने की योजना पूर्णरूप से वचन पर आधारित थी।

ख. यह बिल्कुल उपयुक्त है (3:22–23)

जिस प्रकार से पौलुस ने पहले से प्रदर्शित कर दिया है, हमारा मामला आशाहीन है; इसलिए यदि हमारा उद्धार होना है तो उस तरीके से होना चाहिये जो हमारी असफल परिस्थिति के लिए उचित हो। परमेश्वर ने खुद उसका इन्तेजाम करना है, ''ऐसी युक्ति बनाता है कि निकाला हुआ उसका निकाला हुआ न ठहरे'' (2 शमूएल 14:14)। यह उसने किया है। पौलुस प्रगट करता है कि उद्धार के निमित्त परमेश्वर की

योजना (1) प्रस्ताव रखने में अनोखी है। वह परमेश्वर की उस धार्मिकता के बारे में बताती है ''जो यीशु मसीह पर विश्वास करने से सब विश्वास करनेवालों के लिए है। क्योंकि कुछ भेद नहीं है'' (पद 22)। क्योंकि हम अपने आपको नहीं बचा सकते, इसलिए परमेश्वर हमको एक सिद्ध धार्मिकता प्रदान करने के द्वारा बचायेंगे, बल्कि मसीह की धार्मिकता प्रदान करके, यदि हम अपना विश्वास प्रभु यीशु मसीह पर लगायें।

यहाँ आकर परमेश्वर की उद्धार की योजना, मानवीय हृदय में तैयार की गयी प्रत्येक योजना के साथ हो जाती है। संसारभर के झूठे धार्मिक प्रणाली का अध्ययन यह बताता है कि चाहे उनके सिद्धान्त कितने भी अलग हो, परन्तु उनके बीच में एक बड़ा मत सामान्य है। सारे ही लोग इस बात को मानते हैं कि उद्धार को कमाया जाना चाहिये, क्योंकि यह कामों के द्वारा है, कि मनुष्य को परमेश्वर के अनुग्रह को प्राप्त करने के लिए कुछ न कुछ जरूर करना चाहिये। प्रभु यीशु का सुसमाचार, अपने क्रान्तिकारी दृष्टिकोण के साथ कि उद्धार सिर्फ विश्वास के द्वारा है, महान और अनोखे तरीके से इन प्रणालियों से अलग रखा गया है। ''क्योंकि विश्वास के द्वारा अनुग्रह से ही तुम्हारा उद्धार हुआ है; और यह तुम्हारी ओर से नहीं, वरन् परमेश्वर का दान है, और न कर्मों के कारण, ऐसा न हो कि कोई घमण्ड करे। क्योंकि हम उसके बनाए हुए हैं और मसीह यीशु में उन भले कामों के लिए सृजे गये हैं, जिन्हें पहले से ही परमेश्वर ने हमारे करने के लिए तैयार किया है'' (इफिसियों 2:8–10)। सुसमाचार के अन्दर ''कामों'' का परिणाम उद्धार नहीं होता, वे उद्धार का परिणाम होते हैं।

इसके अलावा परमेश्वर की उद्धार की योजना उचित है, क्योंकि यह आग्रह (2) करने के लिए सार्वभौमिक है। ''क्योंकि सबने पाप किया है और सब परमेश्वर की महिमा रहित हो गये हैं'' (पद 23)। जिस प्रकार के उद्धार की पौलुस चर्चा करता है उसकी जरूरत सारी दुनिया को है। पौलुस परमेश्वर की महिमा से रहित होने को पाप कहता है। ईश्वरीय स्तर की बराबरी कर पाना नामुमकिन है।

दो लोग गार्ड रैजिमेन्ट में भर्ती होने के लिए लन्दन के एक कार्यालय में गये। गार्डमैन के लिए जरूरी लम्बाई छः फुट थी। उसमें से एक दूसरे से लम्बाई में बड़ा था, परन्तु जब आधिकारिक रूप से उनकी लम्बाई को नापा गया तो दोनों ही बाहर हो गये। उनमें से छोटे कद वाले की लम्बाई पाँच फुट सात इंच निकली, जो ठहराई गयी सीमा से काफी कम थी; उसके साथी की लम्बाई पाँच फुट साढ़े ग्यारह इंच निकली और वह भरसक प्रयास करने के बाद भी उस सीमा तक नहीं पहुँच पाया। और इस प्रकार से उसकी दरखास्त भी नामंजूर हो गयी। इससे कोई फरक नहीं पड़ा कि वह एक गार्ड का बेटा था, या उसने यह वायदा किया था कि वह एक दिन वह एक अच्छा सैनिक बनेगा, कि उनसे पहले से ही सैनिकों की कदम ताल को सीख रखा है और सेना के नियम और कानूनों को मुँह जुबानी जानता है। परन्तु वह उनके स्तर से कम रह गया था।

पाप का अर्थ परमेश्वर के स्तर से कम होना है। बहुत से लोग जो आते हैं, वे स्तर से बहुत कम होते हैं और वे स्वर्ग के राज्य के लिए अयोग्य ठहरते हैं। दूसरे देखने वालों की नजर में, नैतिक और सीधे, ईमानदार और संयमी और शायद मानवीय स्तर पर परमेश्वर की ओर से स्वीकृति पाने की पूरी उम्मीद की जा सकती हो। लेकिन चाहे जो कुछ भी हो, वे यहाँ पर मनुष्य के माप से नहीं, परन्तु परमेश्वर की माप से मापे जाते हैं, और जब मापने का कार्य उस सिद्ध स्तर से होता है जो हमें यीशु मसीह में प्राप्त होता है, तो वे फिर भी परमेश्वर की महिमा से रहित जान पड़ते हैं। इसलिए परमेश्वर के द्वारा बनायी गयी योजना उचित है। यह योजना खास पापियों के लिए बनायी गयी है, ''और सब ने पाप किया है और परमेश्वर की महिमा से रहित हो गये हैं।''

IV. उद्धार के निमित्त परमेश्वर की योजना धार्मिक है (3:24–26)

पौलुस अब हमें बताने जा रहा है कि किस प्रकार परमेश्वर ''धर्मी ठहरे, और जो यीशु पर विश्वास करे, उसका भी धर्मी ठहराने वाला हो'' (पद 26)। क्योंकि जिस गहराई में मनुष्य पहुँचकर गिर गया था, उसमें परमेश्वर मनुष्य के लिए एक निःशुल्क उद्धार को प्रदान करते हुए, उसने किसी भी प्रकार से अपनी पवित्रता, न्याय और धार्मिकता के साथ समझौता नहीं किया है। परमेश्वर की उद्धार की योजना दो कारणों से धार्मिक है। जिसका लेखा निम्न हैः

क. मनुष्य की दुर्दशा (3:24–26क)

मसीही वैज्ञानिकों का पाप और मृत्यु के प्रति समाधान यह है कि उसके सिर को रेत के नीचे डाल दो और आराम से यह सोचो कि वे पाये ही नहीं जाते हैं, कि वे ''नश्वर दिमाग की गलती हैं।'' परमेश्वर का वचन इस प्रकार की मूर्खतापूर्ण बातों में रूचि नहीं लेता है। पाप और बीमारियाँ भयानक बात है, जिसे यूँ ही नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता है। परमेश्वर की उद्धार की योजना मनुष्य की दुर्दशा को देखकर अपनी आँखें नहीं मूँद लेती। परन्तु वह उसकी एक एक चीज पर नजर रखती है।

मनुष्य की दुर्दशा के कारण उद्धार (1) एक विशिष्ट सिद्धान्त पर आधारित है। हमें 'सेंतमेंत धर्मी ठहराये जाने के लिए'' चुना गया है (पद 24क)। शब्द ''धर्मी'', ''सेंतमेंत'' और ''अनुग्रह'' पर ध्यान दें, क्योंकि वे उस सिद्धान्त का सार हैं जहाँ पर परमेश्वर आकर मनुष्य की सारी दुर्दशा में मिलता है।

''धर्मी ठहराये जाने का अर्थ, न्यायी के रूप में परमेश्वर के द्वारा घोषित दण्ड से छुटकारा, और विश्वास करनेवाले पापी को अपनी दृष्टि में धार्मिक घोषित करना है। जिस क्रिया को यहाँ पर इस्तेमाल किया गया है वह वर्तमान निरन्तरकाल है और जिन लोगों ने विश्वास किया है और धर्मी ठहराये गये हैं उनके लिए यह धर्मी ठहराये जाने वाली लगातार प्रक्रिया की ओर ईशारा करती है।'' {1}

क्षमा किये जाने वाले और धर्मी ठहराये जाने वाले लोगों के बीच काफी अन्तर है। मान लीजिये एक स्त्री को किसी बड़ी कम्पनी की एक ब्रान्च स्टोर का उधार चुकाना था, जो उसके बस से बाहर था। यदि उसकी मजबूरी को सुनकर स्टोर वाले उसका कर्जा माफ कर देते हैं तो उसे हम क्षमा कहेंगे। इन परिस्थितियों के तहत, वह स्त्री कोई भी हिसाब देने के लिए जिम्मेदार नहीं होगी, परन्तु उसके अन्दर हमें उस कर्ज को चुकाये जाने के तरीके को लेकर एक बेचैनी या असहजता बनी रहेगी। परन्तु, दूसरी ओर यदि, कम्पनी का कानूनी विभाग उस कर्ज को वापस लेने के लिए कोई दबाव डाले, तो उसे न्याय कहा जायेगा। मान लीजिये कि उस स्त्री के न चुकाये गये कर्जे के तहत वह मुकद्दमे की तारीख का इन्तजार करने के दौरान उस स्टोर के मालिक के बेटे से विवाह कर लेती है, जो व्यक्तिगत् तौर पर उसके सारे कर्ज को चुका देने की जिम्मेदारी लेता है। तो उसके खिलाफ कोई कानूनी मामला नहीं बनेगा और यदि कभी उसे न्यायालय में बुलाया भी गया, तो वह ''बिना दोष भावना'' के गुहार लगा सकती है कि उसका सारा कर्ज उसके पति के द्वारा चुका दिया गया है। तब न्यायालय कहेगा कि वह अपने मामले में ''निर्दोष'' और धर्मी है, और उसका मुकद्दमा रद्द कर दिया जायेगा।

यदि कोई व्यक्ति क्षमादान पाता है तो उसे अपने ''दोष'' के लिए निवेदन और दया के लिए दरखास्त देनी पड़ती है। यदि किसी व्यक्ति को धर्मी ठहराया जाता है तो, उसे ''निर्दोष'' के रूप में प्रार्थना करनी, और यह दिखाना है कि दुश्मन का कोई भी मामला उस पर नहीं बनता। निश्चय ही क्षमादान और धर्मी ठहराया जाना हमारे उद्धार के जीवन का हिस्सा होते हैं, लेकिन यह धर्मी ठहराये जाने की उच्च सच्चाई है जिसे पौलुस रोमियों की पुस्तक में हमारे सामने रखना चाहता है। प्रभु यीशु मसीह ने हमारे सारे कर्जों को चुका दिया है अतः हम पर कोई कानूनी मुकद्दमा चलाये जाने का कोई आधार नहीं होता है। इसके अलावा, उसने हमें परमेश्वर सम्मुख सिद्ध अधिकार भी दिया है, जिससे हम उसकी नजरों में ग्रहणयोग्य ठहरते हैं।

हम ''सेंतमेंत'' धर्मी ठहराये गये हैं। यह बिल्कुल परमेश्वर के समान है! वह किसी भी चीज के लिए हमसे कीमत नहीं माँगता है। वह मनुष्य के साथ व्यवहार करने में उदार और विपुल है। बोने और काटने का समय, धूप और छाया, ताजगी देने वाली बारिश, हर एक चीज परमेश्वर की ओर से मुफ्त है। न ही परमेश्वर हमको बचाने की कीमत माँगता है।

एक विधवा की कहानी बतायी जाती है, जिसकी इकलौती बेटी बहुत बीमार थी और उसे ताजे फलों की आवश्यकता थी। परन्तु वह जाड़ों का समय था; अंगूर और सन्तरे सब महँगे थे, और यह विधवा बहुत गरीब थी। शहर की सड़क पर जाते हुए उसने अपने आपको एक राजमहल के बाहर पाया। उसने दरवाजे से झाँक कर देखा तो उसे राजकीय बगीचे में मुँह में पानी ला देने वाले अंगूर के गुच्छों की झलक दिखाई दी। जब वह उन गुच्छों को देखने में मग्न थी, तभी राजकुमारी वहाँ आ पहुँची, और सारी परिस्थिति

को एक ही नजर में पढ़कर, वह अपने ही हाथों से एक टोकरी भर अंगूर उसके लिए तोड़ कर ले आयी। अपने काँपते हुए हाथों से उस विधवा ने राजकुमारी के सामने जो भी पैसे उसके पास में थे, उन्हें रखने का प्रस्ताव रखा, परन्तु उसने उसके बदले में एक सज्जन जवाब दिया, ''मैडम, ये अंगूर बिकाऊ नहीं हैं। मेरे पिता यहाँ के राजा हैं और वे इतने धनी हैं कि उन्हें इसे बेचने की जरूरत नहीं, और इसके अलावा आप इसे खरीदने के बहुत गरीब भी हो। आप इन अंगूरों को मुफ्त में या फिर बिल्कुल नहीं ले सकती है।'' बिल्कुल ठीक! हमारा पिता राजा है। वह बेचता नहीं है। वह हमें उद्धार मुफ्त या फिर बिल्कुल नहीं देता है।

फिर उसके बाद शब्द ''अनुग्रह'' आता है। अनुग्रह का अर्थ बिना भावतौल के पक्ष। इसका मतलब किसी ऐसी चीज को प्राप्त करना, जिसके हम योग्य नहीं हैं। जिसके हम योग्य हैं वह हमारे उच्च कोटि के विद्रोह के लिए उसका अनन्त दण्ड; परन्तु इसके बजाय कलवरी पर कीमत चुकाने के द्वारा वह हमें उसके पुत्र के द्वारा उद्धार प्रदान करता है। अतः हम उसके अनुग्रह के द्वारा ''सेंतमेंत धर्मी ठहराये गये हैं।'' सच में उद्धार के निमित्त परमेश्वर की योजना एक अतिविशिष्ट सिद्धान्त पर आधारित है।

यह एक छुटकारा देने वाली कीमत (2) पर भी आधारित है, जिसके सन्दर्भ में पौलुस लगातार उस छुटकारे के बारे में बोलता है ''जो मसीह यीशु में है, सेंतमेंत धर्मी ठहराए जाते हैं। उसे परमेश्वर ने उसके लहू के कारण एक ऐसा प्रायश्चित ठहराया जो विश्वास करने से कार्यकारी होता है'' (24क–25ख)। सुसमाचार के उन महत्वपूर्ण शब्दों पर निशान लगायें ''छुटकारा,'' ''प्रायश्चित,'' ''विश्वास'' और ''लहू''।

हम लोग छुड़ाये गये हैं। छुटकारे के लिए इस्तेमाल किया गया शब्द, गुलामों के बाजार से खरीदे जाने से ज्यादा अर्थ का सुझाव करता है; इसका मतलब छुटकारा होना, आजाद किया जाना है। कुछ खरीदना एक बात है, परन्तु इसके अलावा, इससे भी बेहतर, उस खरीदे जाने के द्वारा मुक्त कराया जाना होता है।

नियमित उपयोग में, प्रायश्चित शब्द का मतलब सन्तुष्ट करना है; परन्तु यह कोई बाईबल के अनुसार विचार नहीं है। बाईबल आधारित शब्द का अर्थ बलिदान के द्वारा प्रायश्चित करना है। परमेश्वर ने कलवरी पर मसीह के कार्यों के द्वारा प्रायश्चित किया; वह उसकी पवित्रता है जिसके द्वारा उसने पूर्णरूप से सन्तुष्टि प्रदान की है, ताकि वह फिर से मनुष्य की ओर अनुग्रह से देख सकता है।

जिस उपाय से हम छुटकारे और इस प्रायश्चित का फायदा उठाते हैं, वह विश्वास है। डब्ल्यू. ई. वाईन कहते हैंः ''जो अल्पविराम 'विश्वास के द्वारा' {ASV में {2}}से पहले या बाद में आते हैं, वे सभी अतिमहत्वपूर्ण हैं। कभी भी लहू पर विश्वास करने के लिए नहीं कहा गया है... यह वाक्य 'उसके लहू के द्वारा' प्रायश्चित के मतलब को बयान करता है।'' {3} हमारे उद्धार में लहू बहुत महत्पूर्ण है, परन्तु हम उस

पर विश्वास नहीं करते, बल्कि हम मसीह पर अर्थात् अपने जीवित मुक्तिदाता पर विश्वास करते हैं। एक व्यक्ति के रूप में उस पर विश्वास। यह मसीह पर भरोसा रखना है जो विश्वास को मान्य बनाता है।

विश्वास को लेकर सामान्यतः दो गलतियाँ अक्सर की जाती हैं। अनेकों लोग विश्वास की माप को लेकर गलती करते हैं कि कितना विश्वास उनके पास है, और यह महसूस करते हुए कि वह अपर्याप्त है, वे कभी भी उनके उद्धार के आनन्द में प्रवेश नहीं कर पाते हैं। ऐसे लोग अपने विश्वास पर भरोसा रखने की कोशिश करते हैं, प्रभु यीशु मसीह पर नहीं। दूसरी गलती समान ही है और विश्वास के बारे में है। विश्वास में भी वही समान तत्व पाये जाते हैं। निश्चय ही, यह जीवन का सामान्य मानक है, कुछ ऐसा जो हम सबसे भीतर पाया जाता है और जिसके बिना हम अपना एक दिन भी नहीं जी सकते। हम अनजाने में, प्रतिदिन हजारों बार विश्वास का इस्तेमाल करते है। हम लोगों की बातों पर भरोसा करते हैं, जो भी हम अखबारों में पढ़ते हैं उस पर विश्वास करते हैं, हम अपने पैसे बैंक में रखकर विश्वास करते हैं, और अपने आप के लिए बस चालक, डाक्टर, लिफ्ट चालक, और नाई पर विश्वास करते है; हमारे सामने जो भी कुछ रख दिया जाता है उसे हम बिना किसी शक के खा जाते हैं, और प्रत्येक निवाला बिना किसी प्रश्न के सटक जाते हैं। इन बातों और इनके अलावा और भी बहुत सी बातों में, दूसरी परिस्थितियों में, हम साधारणतः विश्वास का इस्तेमाल करते हैं, जो हमारे जीवन का एक अंगभूत हिस्सा है। परन्तु इस प्रकार का विश्वास उद्धार करने वाला विश्वास नहीं है। विश्वास उद्धार करने वाला विश्वास तब बन जाता है, जब वह प्रभु यीशु मसीह पर किया जाये। परमेश्वर बड़ी यथोचितता के साथ में कहते हैं, ''जब हम मनुष्यों की गवाही मान लेते हैं, तो परमेश्वर की गवाही तो उससे बढ़कर है, और परमेश्वर की गवाही यह है कि उसने अपने पुत्र के विषय में गवाही दी है। जो परमेश्वर के पुत्र पर विश्वास करता है वह अपने ही में गवाही रखता है। जिसने परमेश्वर पर विश्वास नहीं किया, उसने उसे झूठा ठहराया, क्योंकि उसने उस गवाही पर विश्वास नहीं किया, जो परमेश्वर ने अपने पुत्र के विषय में दी है। और वह गवाही यह है कि परमेश्वर ने हमें अनन्त जीवन दिया है और यह जीवन उसके पुत्र में है'' (1 यूहन्ना 5:9–11)

परमेश्वर हमें विश्वास के द्वारा छुटकारे को प्रदान कर सकते हैं और उसे मसीह के लहू बहाये जाने के कारण मनाया भी जा सकता है। उद्धार मुफ्त जरूर है, मगर सस्ता बिल्कुल नहीं है। इसके लिए परमेश्वर को अपने प्रिय पुत्र, बल्कि अपने इकलौते प्रिय पुत्र की कीमत चुकानी पड़ी और प्रभु यीशु मसीह को क्रूस पर निन्दापूर्ण और यातनापूर्ण मृत्यु को सहना पड़ा। परमेश्वर ने घोषणा की है कि बहाया गया लहू ''बहूमूल्य लहू है'' (1 पतरस 1:18–19), और वह है भी। क्रूस पर बहाये गये लहू की कीमत मानवीय कल्पना से परे और हमारे बयान से बाहर है। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि जो लोग उसके लहू को अपने पैरों तले रौंदते हैं, उसके लिए बड़े गुस्से के साथ परमेश्वर का दण्ड इन्तजार कर रहा है। ''जब मूसा की व्यवस्था का न माननेवाला, दो या तीन जनों की गवाही पर बिना दया के मार डाला जाता है, तो सोच

लो कि वह कितने और भी भारी दण्ड के योग्य ठहरेगा, जिसने परमेश्वर के पुत्र को पाँवों से रौंदा और वाचा के लहू को, जिसके द्वारा वह पवित्र ठहराया गया था, अपवित्र जाना है, और अनुग्रह के आत्मा का अपमान किया'' (इब्रानियों 10:28–29)।

लहू के द्वारा छुटकारे के विषय में पुराने नियम में दिया गया अध्याय, निश्चय ही फसह के पर्व पर मिस्र से निर्गमन की रात को दिया गया था (निर्गमन 12)। फसह के बलि किये गये मेम्ने का लहू घर की चौखट के दोनों अलंगों और ऊपरी अलंग पर लगाना जरूरी था। चौखट के दरवाजे और उसकी देवढ़ी पर इसलिए लहू को नहीं लगाया था, जिससे लहू को पाँव के तले रौंदा न जाए।

उद्धार, जो मनुष्य की दुर्दशा के लिए बिल्कुल उपयुक्त है, अनोखे सिद्धान्त और छुटकारा देनेवाले मूल्य पर आधारित है। यह उस राजकीय घोषणा (3) पर भी आधारित है जिसे पौलुस इस तरह से प्रस्तुत करते हैः ''उनके विषय में वह अपनी धार्मिकता प्रगट करे। वरन् इसी समय उसकी धार्मिकता प्रगट हो कि जिससे वह आप ही धर्मी ठहरे'' (पद 25ख–26क)।

जिस तरह से उसने पाप के प्रश्न का जवाब दिया है, क्रूस एक सार्वजनिक घोषणा है कि परमेश्वर धार्मिक है। पुराने नियम के युग में ऐसा प्रतीत होता है कि मानों परमेश्वर ने पाप के साथ बहुत हल्के और दिखावटी तौर पर व्यवहार किया। जानवरों का बलिदान कभी भी मनुष्य के पापों को नहीं हटा सकता था, और वहाँ पर कई बार ऐसा हुआ कि मानों परमेश्वर ने पापों के प्रति आँखें मूँद ली हों (''आँखें मूँदना'', इसी तरीके से पौलुस प्रेरितों 17:30 में लिखता है); परन्तु कलवरी प्रगट करता है कि वह सत्य नहीं था। पुराने नियम की सम्पूर्ण बलिदान चढ़ाने वाली प्रणाली दर्शाती है कि परमेश्वर पवित्र है, और कलवरी दर्शाता है कि किस प्रकार से परमेश्वर ने धार्मिकता के साथ में पाप के साथ व्यवहार किया। और राजकीय उद्घोषणा यह बताती है कि परमेश्वर ने विश्वासियों को धर्मी ठहराने के कार्य के बीच में धर्मी बनने को एक रास्ता ढूँढ़ लिया है, जो पौलुस का अगला विषय है। उद्धार न केवल मनुष्य की दुर्दशा में पड़ी जरूरतों को पूरा करता है, परन्तु उसका हिसाब भी रखता हैः

ख. परमेश्वर का धार्मिक चरित्र (3:26ख)

''और जो यीशु पर विश्वास करे, उसका भी धर्मी ठहराने वाला हो।'' परमेश्वर कभी पाप को नजरअन्दाज नहीं करता, परन्तु वह उसे ऐसे खुले में लाकर खड़ा कर देता है, जहाँ पर वह अपनी आदरणीय धार्मिक चरित्र के अनुसार व्यवहार कर सके।

पुराने नियम के दो बलिदानों को सिद्ध रूप में एक साथ यह दर्शाने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है कि जब कोई पापी व्यक्ति मसीह को अपना उद्धारकर्ता करके स्वीकार करता है तो क्या होता है। यह पापबलि और होमबलि हैं। किसी हद तक दोनों ही बलिदान करने का तरीका समान ही था, क्योंकि

दोनों ही मामलों में बलिदान चढ़ाने वाला व्यक्ति अपने हाथों को उस मेम्ने पर रखता था, जिसे वह अपने बदले विकल्प के रूप में इस्तेमाल कर रहा हो। लेकिन इन दोनों बलिदानों के मायने बिल्कुल अलग थे। पापबलि के अन्दर मनुष्य के सारे पाप और दुष्टता बलि में स्थानान्तरित हो जाते थे, परन्तु होमबलि के अन्दर मेम्ने के सारे सद्‌गुण एक पापी मनुष्य के भीतर प्रवेश कर जाते थे। जब पौलुस कुरिन्थिस की कलीसिया को कलवरी के अभिप्राय को समझाता है तो शायद उसके दिमाग में ये बातें रही होंगीः ''जो पाप से अज्ञात था, उसी को उसने हमारे लिए पाप ठहराया कि हम उसमें होकर परमेश्वर की धार्मिकता बन जाएँ'' (2 कुरिन्थियों 5:21)। कलवरी क्रूस परमेश्वर को धर्मी और धर्मी ठहराने वाला बनाता है।

धर्मी ठहराया जाना, फिर भी केवल उन लोगों के लिए है जो ''यीशु पर विश्वास करते हैं।'' इस पर और अधिक रौशनी नहीं डाली जा सकती है। परमेश्वर केवल उन्हीं लोगों को धर्मी ठहराता है जो यीशु में विश्वास करते हैं। हर एक जन किसी वस्तु या किसी व्यक्ति पर विश्वास करता है। कुछ लोग बहुत कुछ जाँच–पड़ताल करके बड़े तरीके के साथ विश्वास करते हैं; जबकि कुछ लोग इसे हल्के में लेते हैं, और कुछ लोग इस मामले में बिल्कुल उदासीन होते हैं। अगर हम अपने विश्वास के निमित्त इस प्रकार से वस्तुओं को चुनते हैं, जिस प्रकार से हम अपने फर्नीचर को चुनाव करते हैं, तो एफ. डब्ल्यू. बोरेहाम हमें खतरे के प्रति आगाह करते हैं। यह सम्भव है कि हम कुछ सहमति भरे निष्कर्षों को हासिल करेंगे, एक सहज सिद्धान्त, एक अनुकूल विश्वास का भण्डार और फिर हम अपनी परख और अपने स्वाद पर एक दूसरे को बधाई देंगे। यहाँ पर किसी चीज पर केवल इसलिए विश्वास करने को खतरा है कि वह हमारे लिए आरामदायक है। केवल एक ही प्रकार का विश्वास परमेश्वर के सामने मान्य है और वह है प्रभु यीशु मसीह पर विश्वास।

मैं ईम्मानुएल की भूमि के अलावा कोई
और जगह नहीं जानता, जहाँ महिमा बसती हो। {5}

ख. यह मानवीय पूर्वधाराणाओं का बहिष्कार करता है (3:29–30)

किसी भी देश या जनसमूह, कलीसिया या संस्था का परमेश्वर पर एकाधिकार नहीं हैं। वास्तव में यहूदी, अब्राहम एवं दाऊद परमेश्वर की विशेष प्रतिज्ञाओं के प्रभाव से एक अनोखा स्थान रखते हैं, परन्तु यह सोचना गलत होगा कि परमेश्वर अपना प्रेम किसी एक ही देश के लिए आरक्षित रखता है। {6} जे. बी. फिलिप्स इस बात को उजागर करते हैं कि कुछ लोगों का गलत मत होता है कि परमेश्वर उनका एवं

उनके विश्वास का विशेष पक्ष लेते हैं। यहाँ एक गैर कलीसियाई व्यक्ति विभिन्न संस्थाओं की ओर मानो मधुमक्खी के छत्ते की ओर देखकर चर्चा करते हुए, कहता हैं, ''कलीसियाओं की मसीहत के बारे में जो बात उसके गले में चुभती है, वह मात्र उनकी संस्थाओं में फर्क का होना नहीं हैं, बल्कि ''कलीसियाईपन'' की आत्मा हैं, जो उन सबके अन्दर फैली हुई नजर आती हैं। वे जकड़े हुए, पालतू एवं प्रशिक्षित नजर आते हैं, जैसे कि वास्तव में बहुत दूर बहुत बड़ी कोई चीज हो जिसे मानव निर्मित एक छोटे से डिब्बे में सिर पर एक शुद्धता की चिप्पी लगाकर डालने की जबरदस्ती की गई हो... 'यद्यपी' कलीसियाएँ उनसे यह कहती हुई दिखाई दे रही हैं, कि 'तुम हमारी आवाज या इशारे पर हमारे द्वारा चिन्हित लाईन पर कूदोगे, तब हम तुम्हारा परिचय परमेश्वर से करवाएँगे। लेकिन यदि तुम नहीं कूद पाए तो तुम्हारे लिए कोई परमेश्वर नहीं हैं।'

यह उसे मूर्ख बनना, और मलिन अहंकार नज़र आता हैं।''

पौलुस इसे इस तरह से रखते हैंः ''क्या परमेश्वर केवल यहूदियों ही का है? क्या वह अन्यजातियों का नहीं? हाँ, अन्यजातियों का भी हैं, क्योंकि एक ही परमेश्वर हैं, जो खतनावालों को विश्वास से और खतनारहितों को भी विश्वास के द्वारा धर्मी ठहराएगा'' (पद 29–30)।

ग. यह मानवीय पूर्वानुमान का बहिष्कार करता है (3:31)

कुछ लोगों का यह मानना है कि केवल विश्वास से धर्मी ठहराया जाने को सिद्धान्त ही अपने में व्यवस्था का अधिकार एवं आलौकिक अधिकार दोनों रखता हैं। पौलुस इस तर्क को उठाता हैं। ''तो क्या हम व्यवस्था को विश्वास के द्वारा व्यर्थ ठहराते हैं? कदापि नहीं! वरन् व्यवस्था को स्थिर करते हैं'' (पद 31)। जैसा कि स्कोफील्ड ने इसे निर्दिष्ट किया, ''पापी व्यवस्था का अपने पाप को अंगीकार करने के द्वारा सही उपयोग कर आदर करता है, और इस बात को मान लेता हैं कि इसके द्वारा वह सही में दोषी ठहराया गहया हैं। मसीह, पापी के स्थान पर, उसके दण्ड को अपने ऊपर लेकर, मृत्यु की सजा को लेकर व्यवस्था को स्थापित करते हैं।'' {8} जिस व्यक्ति ने वास्तव में अपने पापों की गम्भीरता को देखा है और पाप से छुटकारे का अर्थ परमेश्वर की कृपा पर निर्भर नहीं करता, मान लेता हैं, तो वह इस बात को ग्रहण कर लेगा कि उसका उद्धार पाप से हुआ है, न कि पाप करने के लिए उद्धार हुआ हैं – आगे अपनी पत्री में पौलुस इस पर विस्तृत चर्चा करेगा।

अतः, प्रगट है कि परमेश्वर की उद्धार की योजना धर्मी एवं उचित हैं। यह क्षणमात्र में, बिना शर्त एवं आनन्दपूर्ण स्वीकृति की पुकार हैं।

विश्वास के द्वारा उद्धार

I. उद्धार के लिए प्रयत्न करने पर प्रश्न (4:1–15)

क. ऐसे लोग जो स्वयं की धार्मिकता पर निर्भर रहते हैं (4:1–18) इस विचार का खण्डन किया गया है

1. अब्राहम के मामले में – इब्री वंश परिवार का स्थापक (4:1–5)
    1. अब्राहम के मामले पर पुनर्विचार की याचना (4:1–3)
    2. अब्राहम के मामले को लागू करना (4:4–5)
2. दाऊद के मामले में – इब्री राजकीय परिवार का स्थापक (4:6–8)
    1. उद्धार मुफ्त में दिया जाना (4:6)
    2. हमेशा के लिए पाप को हटा दिया जाना (4:7–8)

ख. ऐसे लोग जो स्वयं के धर्म पर निर्भर रहते हैं (4:9–15)

1. धार्मिक रीतियों या संस्कारों पर भरोसा रखना (4:9–12)
    1. ध्यान दें कब अब्राहम ने संस्कार किया था (4:9–10)
    2. ध्यान दें क्यों अब्राहम ने संस्कार किया था (4:11–12)
2. धार्मिक नियमों पर भरोसा रखना (4:13–15)
    1. प्रभु की प्रतिज्ञा उद्धार करती है (4:13)
    2. व्यवस्था के आज्ञा हत्या या वध करती है (4:14–15)

II. उद्धार के लिए भरोसा करने पर प्रश्न (4:16–25)

क. हमें विश्वास के सिद्धान्त की व्याख्या दी गई है (4:16)

1. विश्वास हमें परमेश्वर के पक्ष में लाता है
2. विश्वास हमें परमेश्वर के परिवार में लाता है

ख. हमें विश्वास की सिद्धान्त का अर्थ स्पष्टता से बताया गया है – (4:17–22)

1. अब्राहम ने कैसे परमेश्वर का वचन पाया (4:17–18)
2. अब्राहम ने कैसे परमेश्वर के वचन पर विश्वास किया (4:19–22)

ग. हमने विश्वास के सिद्धान्त का अनुभव किया है (4:23–25)

1. एक ही उद्देश्य के लिए (4:23–24क)

2. एक ही प्रक्रिया के द्वारा (4:24ख)

3. एक ही सिद्धान्त पर (4:25)

रोमियों 4 अध्याय सिर्फ विश्वास द्वारा उद्धार की शिक्षा पर बाईबल का एक महान अध्याय हैं। कई लोग इस बात का दावा करते हैं कि वे मानते हैं कि विश्वास द्वारा ही उद्धार होता हैं, किन्तु सिर्फ विश्वास द्वारा ही उद्धार होता हैं इस बात को नहीं मानते हैं। ''सिर्फ'' शब्द ही कैथोलिक के मौलिक एवं प्रोटेस्टेन्ट को अलग करने वाला सबसे महत्वपूर्ण चिन्ह हैं, और यही सोलहवीं शताब्दी में धार्मिक सुधार का सांकेतिक चिन्ह बना। उदाहरण के लिए, कैथोलिक विचारधारा वाला व्यक्ति, विश्वास के द्वारा उद्धार को मानता है, लेकिन सिर्फ विश्वास के द्वारा ही उद्धार को नहीं मानता है; वह लहू की कीमत पर विश्वास करता है, लेकिन सिर्फ लहू की कीमत पर ही विश्वास नहीं करता है; वह इस तथ्य को स्वीकार करेगा कि मसीह ही मध्यस्थ है, परन्तु इस बात को स्वीकार नहीं करेगा; वह धर्मशास्त्र के अधिकार को मानता हैं, किन्तु सिर्फ उस ही के अधिकार को नहीं मानता है। रोमियों 4 में पौलुस इस बात को प्रगट करते हैं कि उद्धार मनुष्य की योग्यता या किसी भी काम से बिल्कुल हटकर सिर्फ विश्वास ही के द्वारा होता हैं।

I. उद्धार के लिए प्रयत्न करने पर प्रश्न (4:1–15)

इससे पहले की इस मामले की पुष्टि करें कि उद्धार सिर्फ विश्वास ही के द्वारा होता है, पौलुस इस पूरे सवाल को उद्धार के साधन के रूप में इस्तेमाल करते हैं। वह दिखाते हैं कि यह कितना गैर–धर्मशास्त्रीय विचार है कि बाईबल के दो व्यक्तियों, अब्राहम एवं दाऊद की ओर इशारा करते हुए कोई अपनी स्वधार्मिकता एवं धर्म पर निर्भर भ्रान्ति पर चर्चा करता है।

क. ऐसे लोग जो स्वयं की धार्मिकता पर निर्भर रहते हैं (4:1–18)

सभी भ्रान्तियों का पोषण मुख्यतः इस एक बात से होता है कि हर मनुष्य में कुछ न कुछ अच्छाई की चिन्गारी जरूर होती है, जिसे आग में बदलने के लिए सिर्फ हवा देने की जरूरत होती है। इस विचार का खण्डन करने के लिए, पौलुस अब्राहम के मुद्दे को पुनर्विचार के लिए लाते हैं। कुलपतियों में सबसे महान एवं पुराने नियम के सन्तों में सबसे श्रेष्ठ, ताकि इस बात को बता सके कि उद्धार के मामले में कोई भी मनुष्य ऊँचा नहीं उठाया जा सकता हैं, एवं दाऊद को, जो कि राजाओं में सबसे महान एवं पुराने नियम के पापियों में सबसे मुख्य है, ताकि यह बता सके कि किसी भी मनुष्य को इससे बाहर नहीं रखना चाहिए।

पौलुस अब्राहम के मुद्दे के साथ (1) शुरू करते हैं, जो कि इब्री वंशावली परिवार के स्थापक हैं (4:1–5)। यदि कभी–कभी किसी पुरूष को उसके अंग्रेजी में 11

some passages are missing here

बार इस अध्याय में आया है। परमेश्वर के बही–खाते की पद्धति में इस बात का वर्णन होता है कि हमारे खाते से पाप हस्तांतरित हो गया हैं एवं धार्मिकता हमारे खाते में हस्तांतरित हो गई है।

अब्राहम ने वही किया जो एक व्यक्ति बिना कुछ किये कर सकता है – उसने परमेश्वर पर विश्वास किया (उत्पत्ति 15:6)। गलतियों 3:16 प्रतिज्ञा के बीज (वशंज) के विषय में इस बात को स्पष्ट कर देता है जो परमेश्वर का कहना था कि अब्राहम ने उस पर विश्वास किया, यह विश्वास अन्ततः मसीह पर ही है।

फिर अब्राहम के मुद्दे को लागू करने की बात आती है। पौलूस अपने बिन्दू को इन शब्दों के साथ घर की ओर ले चलता है, ''काम करने वाली की मजदूरी देना दान नहीं, परन्तु हक्क समझा जाता है। परन्तु जो काम नहीं करता, वरन् भक्तिहीन के धर्मी ठहराने वाले पर विश्वास करता है, उसका विश्वास उसके लिये धार्मिकता गिना जाता है।'' (पद 4–5)। कामों की पद्धति के अन्तर्गत् सबकुछ पापी पर निर्भर करता है; किन्तु अनुग्रह के अन्तर्गत सब कुछ उद्धारकर्ता पर निर्भर करता है। प्राथमिकता के अन्तर्गत, परमेश्वर स्पष्ट मुकदमा या जाँच करते हैं, किन्तु द्वितीय के अन्तर्गत वे मुफ्त क्षमा देते हैं। इसका विवरण ''उसे जो भक्तिहीन को धर्मी ठहराता है,'' वह जो इस बात को महसूस करता है कि मुकद्दमा बहुत ही ईमानदारी से होना है, वह आशा से भरपूर है, और उतना ही न्याय के प्रति विश्वस्त भी। यह बहुत ही महत्वपूर्ण बात है जिस पर ध्यान देना अवश्य है कि परमेश्वर भक्तिहीन को धर्मी ठहराते हैं। परमेश्वर की पापी को धर्मी ठहराने की पद्धति प्रत्येक पापी व्यक्ति तक पहुँचाई गई है, न कि धर्मी होने के कारण, उसके सन्त होने के करण। परमेश्वर के अनुग्रह एवं ज्ञान में बढ़ने से उसकी धार्मिकता नहीं बढ़ती है, और न ही उसकी असफलता से वह कम होती है। न्यायालय में दया के लिये मुकद्दमा चलाने एवं क्षमा प्राप्त करने के लिये, एक व्यक्ति को अपने दोष के लिये विनयपूर्वक क्षमा याचना दायर करना जरूरी है। एक व्यक्ति जो केवल मुकद्दमा दायर करता है और ''दोषी नहीं,'' तो वह केवल एक ईमानदारी से मुकद्दमे की सुनवाई की आशा कर सकता है। वह व्यक्ति जो ''दोष स्वीकार कर'' क्षमा याचना करता है, वह केवल दया की आशा कर सकता है।

आगे पौलुस (2) दाऊद के मसले को सुलझाते हैं, जो कि इब्री राजकीय परिवार के स्थापक हैं (4:6–8)। दाऊद का मुद्दा अब्राहम के मुद्दे से बिल्कुल ही भिन्न है। यहाँ भजन संहिता 32 अध्याय के अंश का उद्धरण मुद्दे से बिल्कुल ही भिन्न है। यहाँ पौलुस भजन संहिता 32 अध्याय के अंश का उद्धरण करते हैं, जो कि दाऊद ने अपने गुप्त पापों के प्रगट होने के बाद लिखा है (2 शमूएल 11–12 अध्याय)। बतशेबा वाली घटना में, पहले दाऊद ललचाया, फिर व्यभिचार किया, कत्ल किया, दस में से तीन आज्ञाओं

को तोड़ा। उसका ललचाकर बतशेबा का हरण एवं छल से ऊरिय्याह का कत्ल करना, दाऊद को दो बातों में मौत की सजा के योग्य दर्शाता है, एवं मूसा की व्यवस्था के कठोर पत्र के अनुसार उसके लिये कोई आशा नहीं बची थी। स्वयं की इच्छा से किये गये पाप के लिये पुराने नियम की बलि चढ़ाने की पद्धत्ति में कोई प्रावधान नहीं पाया जाता है। इसलिये दाऊद अपने दूसरे पश्चातापी भजन में पुकार उठा, जिसका जन्म इसी समयकाल में हुआ था, ''क्योंकि तू मेलबलि से प्रसन्न नहीं होता, नहीं तो मैं देता, होमबलि से भी तू प्रसन्न नहीं होता। टूटा मन परमेश्वर के योग्य बलिदान हैः हे परमेश्वर, तू टूटे और पिसे हुए मन को तुच्छ नहीं जानता'' (भजन संहिता 51:16–17)। दाऊद का तीव्र मुद्दा सब कुछ परमेश्वर पर डालता है। दाऊद ने इन दो अनुभवों से, जिस भी तरह से उद्धार के विषय में इन दो महत्वपूर्ण सच्चाईयों को सीखा है, जो उसने भजन संहिता 32 अध्याय में लिखी हैं एवं जिन्हें पौलुस आगे अपने तर्क में उठाता है।

इन सच्चाइयों में पहली बात यह है कि उद्धार मुफ्त में दिया जाता है। ''जिसे परमेश्वर बिना कर्मों के धर्मी ठहराता है, उसे दाऊद भी धन्य कहता है'' (पद 6)। दाऊद ने बिना कर्मों के सच्ची खुशी एवं सच्ची पवित्रता का रास्ता खोज लिया। बतशेबा को उसकी शुद्धता एवं ऊरिय्याह को उसका जीवन लौटाने के लिये दाऊद क्या कर सकता था? वह स्वयं की भी निष्पाप अवस्था को फिर से पाने के लिये क्या कर सकता था? कुछ नहीं! उसका मुद्दा पूरी तरह से आशारहित था। लेकिन फिर इस बीच परमेश्वर ने कदम रखा और अपने श्रेष्ठ अनुग्रह से दाऊद के पापों को मुफ्त में रद्द किया एवं उसे धर्मी ठहराया। परमेश्वर की खुली प्रतिज्ञा पर सरल विश्वास, ''यहोवा ने तेरे पाप को दूर किया है, तू न मरेगा'' (2 शमूएल 12:13), सिर्फ यही दाऊद के पास था, लेकिन यही पर्याप्त था। उद्धार मुफ्त दिया गया है।

दाऊद ने इससे भी बढ़कर कुछ सीखा कि रद्द किये गये पाप हमेशा के लिये नष्ट हो जाते हैं। ''धन्य है वे जिनके अधर्म क्षमा हुए, और जिनके पाप ढाँपे गए। धन्य है वह मनुष्य जिसे परमेश्वर पापी न ठहराए'' (पद 7–8)। दाऊद ने इस बात को खोज लिया था कि उसके पाप न सिर्फ ढाँपे गये, बल्कि रद्द कर दिये गये, सिर्फ क्षमा नहीं किये गये, बल्कि भूला दिये गये।

कुछ साल पहले एक धनी अंग्रेज व्यवसायी ने एक रोल्स रॉयस (कार के ब्राण्ड का नाम) खरीदी और जल्द ही अपनी नई कार को लेकर वह फ्रांस गया। जब वह फ्रांस के दक्षिण में था तब उसकी कार खराब (टूट–फूट) हो गई और उसने ब्रिटेन में रोल्स रॉयस के लोगों को फोन किया। निर्माता कम्पनी ने एक मशीन हवाई जहाज के रास्ते फ्रांस पहुँचाई और उस व्यक्ति की कार ठीक हो गई। उसने इस अपूर्व सेवा के बदले एक बहुत बड़े बिल की प्रतीक्षा की, लेकिन जब महीनों बीतने पर भी कोई रसीद नहीं आयी, तो इस व्यापारी ने रोल्स रॉयस कम्पनी को लिखा कि उसका खाता बन्द किया जाए। जवाब में कम्पनी की ओर से एक विनम्र नोट आया, जिसमें यह बताया गया कि कम्पनी के लेखे में ऐसा कोई विवरण ही नहीं है कि उसकी गाड़ी में कभी कुछ खराबी हुई थी। दूसरे शब्दों में रोल्स रॉयस कम्पनी इस बात को मानने से

इन्कार करती है कि उसके उत्पादन में कोई कमी है। आत्मिक रूप से दाऊद के साथ भी बिल्कुल ऐसा ही हुआ। ''धन्य है वह मनुष्य जिसे परमेश्वर पापी न ठहराए।'' जब परमेश्वर क्षमा कर देता है, तब वह लेखे या रिकार्ड को भी नष्ट कर देता है।

डॉ. मून अपनी फिल्म में समय एक अनन्तकाल को बड़े नाटकीय ढंग से रेखांकित करते है। समय के विभिन्न रिश्तों को दिखाने के बाद, डॉ. मून इस तरह समाप्त करते है, ''हम सबने स्पष्ट काली रात में ऊपर देखा है, जगमगाते हुए टिमटिमाते तारों को, परन्तु हम में से कितने इस बात को महसूस करते हैं कि जैसे तारे अभी हैं, हम उन्हें नहीं देख सकते हैं? हर समय जब हम देखते हैं, हम भूतकाल में देख रहे होते हैं, हम उन्हें ऐसे देखते हैं जैसे वे थे.... लेकिन यह दोनों तरफ से काम करता है। यद्यपि आप तारों में से किसी एक पर होते और कल्पना कीजिए, आपके पास एक योग्य दूरबीन है और धरती को देखेंगे, जैसी कि वह कुछ देर पहले थी। एक नक्षत्र पर से आप उसे देख सकते हैं जो आप नौ साल पहले कर रहे थे। क्योंकि सच्चे एवं गहन वैज्ञानिक दृष्टिकोण से आप उसे अभी भी कर रहे है। हाँ, हर एक वो काम जिसे आपने कभी किया है, आप उसे अभी भी कर रहे है। आपके भूतकाल की छाया सार्वभौमिकता के साथ सदा रहती है, लेकिन याद रखें, हम जानते हैं कि परमेश्वर सर्वव्यापी है। इसका मतलब, परमेश्वर के लिये हर पाप जो आपने कभी भी किया है। अभी भी कर रहे हैं, और उसे हमेशा करते रहेंगे, परमेश्वर की क्षमा से दूर रहकर। केवल सर्वशक्तिमान अनन्त परमेश्वर, जो समय के सभी खण्डों को, दूरी को एवं मामलों को नियन्त्रित करता है, कभी भी हमारे पापों को मिटा सकता है। परमेश्वर कहता हैः 'मैं वही हूँ, जो अपने नाम के निमित्त तेरे अपराधों को मिटा देता हूँ और तेरे पापों को स्मरण न करूँगा' (यशायाह 43:25)।'' {1} जब परमेश्वर पाप को रद्द करता है, तो वो उसे अस्तित्व से हटा देता है, यह मात्र क्षमा करना और स्मरण करना ही नहीं है, यह लोप कर देना है।

ख. ऐसे लोग जो स्वयं के धर्म पर निर्भर रहते हैं (4:9–15)

अक्सर जो उद्धार पाने का यत्न करते हैं, वे दो बैसाखियों पर टंगे होते हैं – पहला उनका स्वयं का काल्पनिक अच्छापन, एवं दूसरा किसी तरह के धार्मिक विधि–विधान। अभी–अभी पौलुस ने पहले गलत साधन को दूर किया है और अब वह धार्मिक रीतिरिवाज या धर्म के नियम पर मूर्खतापूर्ण निर्भरता को दूर हटाते हैं। वास्तव में, वह इस गलत बात से निपटने के लिये योग्य थे कि अपनी धर्मनिष्ठा पर भरोसा न रखा जाये। वह अपने परिवर्तन से पहले के दिनों के बारे में बोल सकते थे, ''मैं... अपने बहुत से जातिवालों से जो मेरी अवस्था के थे, यहूदी मत में अधिक बढ़ता जाता था'' (गला 1:14)। इससे भी बढ़कर, यहूदी धर्म ही ऐसा ''धर्म'' था, जिसे दिव्य या आलौकिक अनुमोदन प्राप्त था।

फिर पौलुस धर्म के रीतिरिवाजों पर (1) भरोसा रखने की अज्ञानता को दर्शाते हैं (4:9–12)। वह फिर से अब्राहम के बिन्दू पर लौट आते हैं कि धार्मिक विधि–विधान उद्धार नहीं दिला सकते हैं और वह यहूदियों के सबसे मुख्य रीत या संस्कार खतना पर ध्यान केंद्रित करते हैं। वह इस पर जोर देते हैं कि जब अब्राहम का संस्कार (खतना) हुआ, और यह विवाद में सबसे महत्वपूर्ण बिन्दू है। ''तो यह धन्य वचन, क्या खतनावालों ही के लिये है या खतनारहितों के लिये भी? हम यह कहते है, अब्राहम के लिये उसका विश्वास धार्मिकता गिना गया। तो वह कैसे गिना गया? खतने की दशा में या बिना खतने की दशा में? खतने की दशा में नहीं परन्तु बिना खतने की दशा में'' (पद 9–10) खतना, वास्तव में, अब्राहम की वाचा का चिन्ह था (उत्पत्ति 17:7–14)। पौलुस के दिनों में कई यहूदी मसीहियों ने इस बात को बरकरार रखा कि इस रीति या संस्कार के बिना उद्धार असम्भव था (प्रेरितों के काम 15:1–29; गलातियों 2:1–14) और चाहते थे कि सभी परिवर्तित अन्यजाती भी खतना करवाएँ। आजकल लोग यह सोचते हैं कि कलीसियाई रीतिरिवाजों का पालन किये बिना उद्धार असम्भव है। यहाँ पौलुस का मुद्दा यह है कि ऐसे विचार को विलुप्त कर देना चाहिए। अब्राहम खतना होने के 14 वर्ष पूर्व भी धर्मी पुरूष था (उत्पत्ति 15:6; 17:10)। अतः रीति या संस्कार का उसके छुटकारे से कोई लेना–देना नहीं था।

अगला बिन्दू पौलुस ने उठाया कि तो फिर अब्राहम को क्यों संस्कार दिया गया। यह धार्मिकता देना नहीं है, सिर्फ उसे निश्चित करता है जो कि अब्राहम के पास पहले से थी। खतना एक यहूदी के लिये उसकी राष्ट्रीयता का प्रण थी, लेकिन वह उससे भी अधिक थी। पौलुस कहते हैं कि अब्राहम को संस्कार दिये जाने के पीछे दो कारण थे। वो इसलिये दी गई थी ''पहले तो उसने खतने का चिन्ह पाया कि इस विश्वास की धार्मिकता पर छाप हो जाए, जो उसने बिना खतने की दशा में रखा था, जिससे वह उन सबका पिता ठहरे जो बिना खतने की दशा में विश्वास करते हैं, ताकि वे भी धर्मी ठहरें, और उन खतना किये हुओं को पिता हो, जो न केवल खतना किये हुए हैं, परन्तु हमारे पिता अब्राहम के उस विश्वास की लीक पर भी चलते हैं, जो उसने बिन खतने की दशा में किया था'' (पद 11–12)। {2} ''पौलूस ने यहूदियों के घमण्ड को उथल–पुथल कर दिया। अब अन्यजाति को उद्धार के लिये यहूदी खतने के लिये आने की जरूरत नहीं; बल्कि यहूदी को अन्यजातिय विश्वास के पास आने की जरूरत है, ऐसा विश्वास जो अब्राहम में खतना कराने के भी बहुत पहले था।'' {3}

इस बात के बाद की धार्मिक रीतों पर विश्वास करना अज्ञानता या मूर्खता है, आगे पौलुस बताते हैं कि धर्म के नियमों पर भी (2) विश्वास रखना अज्ञानता है (4:13–15)। पापी स्वर्ग जाने के लिये अपने धर्म के नियमों का पालन करने के लिए कठिन परिश्रम कर प्रयास करता है। पौलुस यह बताते हैं कि उद्धार पाने के लिए केवल एक ही मान्य नियम है और वह विश्वास का नियम है, वह व्यवस्था की मानसिक क्रिया और प्रभु की प्रतिज्ञा के बीच का भेद बताते हैं। अब्राहम की व्यवस्था पर आस्था होने के बावजूद भी

परमेश्वर की प्रतिज्ञा संदिग्ध नहीं है। यह कैसे हो सकता है? जबकि अब्राहम की मृत्यु के सदियों बाद भी व्यवस्था नहीं दी गई थी? ''क्योंकि यह प्रतिज्ञा कि वह जगत का वारिस होगा, न अब्राहम को न उसके वंश को व्यवस्था के द्वारा दी गई थी, परन्तु विश्वास की धार्मिकता के द्वारा मिली'' (पद–13)। जबकि बाईबल की बहुत सी प्रतिज्ञाएँ शर्त के साथ हैं, वो अब्राहम एवं उसके वंश के साथ बिना शर्त के दी गई और परमेश्वर की विश्वासयोग्यता के द्वारा निश्चित की गई, न कि मनुष्य की विश्वासयोग्यता के द्वारा (गलातियों 3:17–18; रोमियों 4:13–18)।

नियमावली एवं आवश्यक बातें बाद में यहूदियों को मूसा की व्यवस्था में दिये गये हैं, अतः ये असल में बिना शर्त की प्रतिज्ञाओं को प्रभावित नहीं करता है। मूसा की व्यवस्था का छुटकारा या उद्धार पाये लोगों के व्यवहार से नाता था, जो कि परमेश्वर के साथ वाचा के रिश्ते में थे, जिन्हें लक्ष्य बनाया था कि परमेश्वर के लोगों के रूप में स्वस्थ, प्रसन्न एवं पवित्रता में सुरक्षित रहें। पौलुस पहले ही इस बात को स्पष्ट कर चुके हैं कि अब्राहम के सच्चे वंशज वे ही हैं जो अब्राहम के पदचिन्हों पर चलते हैं एवं अब्राहम के समान विश्वास में बने रहते हैं (पद 12)। हम समान्तरता को यहाँ ला सकते हैं। मसीहियों के लिये जो पत्रियाँ हैं उनकी आज व्यवहारिक जरूरत है, जो कि आज उद्धार से जोडी नहीं जाती हैं। उन्हें या तो हमारी शान्ति, समृद्धि एवं परमेश्वर की सन्तान होने के नाते सामर्थ के लिये काम में लाना चाहिये।

भेद में परमेश्वर की प्रतिज्ञा व्यवस्था की विचारधारा है। पौलुस ने इसके उपर दो बहुत ही गम्भीर निरीक्षण किये। पहला, व्यवस्था विश्वास को नष्ट कर देती है। ''क्योंकि यदि व्यवस्था वाले वारिस हैं, तो विश्वास व्यर्थ और प्रतिज्ञा निष्फल ठहरी'' (पद–14)। दूसरे शब्दों में, यदि यहूदी स्वयं के प्रयत्न से प्रतिज्ञा पा सकता हैं, तो वह, मूसा की व्यवस्था के पालन करने के द्वारा होगा, तब परमेश्वर की बिना शर्त की प्रतिज्ञा वैद्य नहीं ठहरती है। या तो कोई प्रतिज्ञा बिना शर्त के है या वह है ही नहीं; यहाँ बीच की कोई जगह नहीं है। यद्यपि उद्धार ''प्रयत्न'' के आधार पर है तो ''विश्वास'' के आधार पर नहीं। लेकिन यह तो विश्वास है, कर्म नहीं; अनुग्रह है, व्यवस्था नहीं; विश्वास है, व्यवहार नहीं, यही परमेश्वर द्वारा दी जाने वाली सब बातों का आधार है।

व्यवस्था केवल विश्वास ही को नष्ट नहीं करती है, बल्कि असफलता को भी रेखांकित करती है। ''व्यवस्था तो क्रोध उपजाती है, और जहाँ व्यवस्था नहीं, वहाँ उसका उल्लंघन भी नहीं (पद–15)। मूसा की व्यवस्था का व्यवहारिक परिणाम दोष लगाना है, न कि उद्धार, क्योंकि यह सिर्फ इतना बताती है कि एक व्यक्ति कितना परमेश्वर के स्तर से नीचे आ गया है। एक प्राण जो व्यवस्था की गर्जन सुनकर उठ गया है उसे निश्चय ही प्रतिज्ञा की ओर फिर से लौट जाना चाहिये, न कि सिनाई के पास की आग के कम्पन को नापने की कोशिश करनी चाहिए।

तो फिर, पौलुस ने ऐसे लोगों के पाँव के नीचे की जमीन को ही उखाड़ फेंका है जो उद्धार पाने के लिए प्रयत्न करते पर जोर देते हैं। उनके पास परमेश्वर को ग्रहण होने योग्य कोई धार्मिकता नहीं है। धार्मिक कर्मकाण्ड निरर्थक है, क्योंकि धर्म को न तो रीत और न ही नियम बचा सकते हैं, जैसे कि पौलुस पहले ही इस बात को घोषित कर चुके हैं और अन्ततः प्रमाणित करते हैं कि उद्धार केवल विश्वास और विश्वास ही के द्वारा है।

II. उद्धार के लिए भरोसा करने पर प्रश्न (4:16–25)

अब पौलुस इस बात को जोर से हथौड़ा मारकर बताते हैं कि उद्धार केवल विश्वास ही के द्वारा है।

क. हमें विश्वास के सिद्धान्त की व्याख्या दी गई है (4:16)

सबसे पहले (1) विश्वास हमें परमेश्वर के पक्ष में लाता है, जबकि यह मानवीय प्रयास से नहीं हो सकता है, अतः निश्चय ही उद्धार के लिए कोई दूसरा रास्ता होना चाहिए। ''इसलिए यह विश्वास पर आधारित है'' पौलूस कहते हैं, ''कि अनुग्रह की रीति पर हो'' (पद 16क)। हम पहले ही देख चुके हैं कि अनुग्रह अनुचित पक्ष है। यह विश्वास है जो हमें अनुग्रह से जोड़ता है, परमेश्वर के अनुचित पक्ष से। ये विश्वासरूपी हाथ हैं जो अदृश्य लोक में पहुँचते हैं, जो कि परमेश्वर के फैले हुए दयालु हाथों को पकड़े हुए हैं। विश्वास वास्तव में छटी इन्द्री के रूप में दर्शाया जा सकता है। इसका काम आत्मिक संसार की विविधताओं को वास्तविक एवं स्पर्श करने योग्य बनाता है। विश्वास के द्वारा हम उन लाभों एवं आशीषों को पाने योग्य होते हैं जो परमेश्वर हमें देगा। जैसे कि इब्रानियों की पत्री का लेखक इसे बताता है, ''अब विश्वास आशा की हुई वस्तुओं का निश्चय और अनदेखी वस्तुओं का प्रमाण है'' (इब्रानियों 11:1)

फिर (2) विश्वास हमें परमेश्वर के परिवार में लाता है। पौलुस कहते हैं, ''इसी कारण प्रतिज्ञा विश्वास पर आधारित है कि अनुगृह की रीति पर हो, कि वह सब वंशजों के लिये दृढ़ हो, न कि केवल उसके लिये जो व्यवस्था वाला है, वरन् उनके लिये भी जो अब्राहम के समान विश्वास वाले हैं; वही तो हम सबका पिता है'' (पद–16)। वे सब जो विश्वास करते हैं, चाहे वह यहूदी हो या अन्यजाति, वे अब्राहम की आत्मिक सन्तान एवं परमेश्वर के परिवार के सदस्य हैं।

विश्वास के लिये कुछ भी अनिश्चित नहीं हैं। वह व्यक्ति जो अपने उद्धार के लिये सुनिश्चित नहीं है वह मसीह के सम्पूर्ण या सिद्ध कार्य को अपनी विश्वास की आँखों से नहीं देख रहा है, वह अपने कार्यों – और जो वह कर सकता है, उनकी ओर शंका से देख रहा है। पौलुस कहते हैं कि यह विश्वास पर आधारित होता है कि प्रतिज्ञा का निश्चय हो सके। क्योंकि प्रतिज्ञा आलौकिक है, और उसके उपर विश्वास की पकड़ होती है।

अब्राहम एवं याकूब का जीवन इस बात को बताता है कि जब सुरक्षा की जिम्मेदारी मनुष्य के बजाय परमेश्वर के हाथ में होती है, तब सुरक्षा में कितना अन्तर होता है। उत्पत्ति में हमें बताया गया है कि अब्राहम ने परिवार हेतु कब्रिस्तान के लिये जमीन का हिस्सा खरीदा। जब बातचीत हो ही रही थी, हम पढ़ते हैं, ''इस प्रकार वह भूमि गुफा समेत जो उसमें भी, हित्तियों की ओर से कब्रिस्तान के लिये अब्राहम के अधिकार में पक्की रीति से आ गई'' (उत्पत्ति 23:20)। वह लेन–देन एवं प्रमाणिकता कितनी निश्चित थी। कुछ सालों बाद, कुछ समय बाद, अब्राहम के पोते याकूब को फिर से उसी कब्रिस्तान को खरीदना था (उत्पत्ति 33:19; प्रेरितों के काम 7:16)। हमारा उद्धार मनुष्य की अनिश्चित प्रतिज्ञा पर निर्भर नहीं करता है, बल्कि परमेश्वर की सशक्त प्रतिज्ञा पर निर्भर करता है। इसे देखकर विश्वास अति प्रसन्न होता है।

ख. हमें विश्वास की सिद्धान्त का अर्थ स्पष्टता से बताया गया है – (4:17–22)

पौलुस अगला बिन्दू यह उठाते हैं कि कैसे अब्राहम ने परमेश्वर का वचन पाया और उस पर विश्वास किया। ध्यान दें (1) कैसे अब्राहम ने परमेश्वर का वचन पाया। पौलुस फिर उत्पत्ति 17 अध्याय और अब्राहम की वाचा पर जाते हैं। ''जैसा लिखा है, कि मैं ने तुझे बहुत सी जातियों का पिता ठहराया है, उस परमश्वर के साम्हने जिस पर उस ने विश्वास किया और जो मरे हुओं को जिलाता है, और जो बातें हैं ही नहीं, उन का नाम ऐसा लेता है, कि मानो वे हैं। उस ने निराशा में भी आशा रखकर विश्वास किया; इसलिये कि उस वचन के अनुसार कि तेरा वंश ऐसा होगा वह बहुत सी जातियों का पिता हो'' (पद 17–18)।

हमारा ध्यान अब्राहम के प्रवीणतापूर्ण विश्वास की ओर लाया गया। उसका विश्वास एक ऐसे परमेश्वर पर था जो मुर्दों को ''शीघ्रता'' से (जीवित) कर सकता है। उसने परमेश्वर के सर्वशक्तिशाली स्वभाव को समझ लिया। उत्पत्ति 15 अध्याय हमें यह बताता है कि इससे पहले की यह प्रतिज्ञा दी गई'' तेरा वंश ऐसा ही होगा'', परमेश्वर ने अब्राहम के ध्यान को अनगिनत तारों की ओर निर्देशित किया था। एक ऐसा परमेश्वर, जिसने इस दुनिया में इतनी लाखों, करोड़ों वस्तुओं की रचना की, उसके लिये कुछ भी असम्भव नहीं है। अगर अब्राहम ने अपने मृत शरीर की ओर देखा होता तो, उसके लिये विश्वास करना असम्भव हो गया होता। लेकिन उसने उपर तारों की ओर देखा, जिसने कुछ नहीं से में तारों को बनाया एवं मृत्यु को आदेश दिया कि जीवन में प्रारम्भ हो जाए, उसका विश्वास बुद्धिमानी से भरा था।

हमारे ध्यान आगे अब्राहम के विश्वास की तीव्रता की ओर लाया गया, क्योंकि आशा के विपरीत अब्राहम ने आशा में विश्वास किया। मानवीय रूप में कहा जाए तो, उसकी स्थिति आशाहीन थी, लेकिन उसका मामला कुल मिलाकर मानवीय हाथों से ले लिया जा चुका था। तो अब यह परमेश्वर के हाथों में था, अब्राहम के धुन्धले पड़े जीवन में फिर से आशावादिता की महिमान्वित छाया की आशा को जोडा जा सका।

फिर अब्राहम ने मार्ग के लिये बहुतायत से परमेश्वर का वचन पाया। अब पौलुस और गहराई में खोदते हैं और हमें दिखाते हैं (2) कि कैसे अब्राहम ने परमेश्वर के वचन पर विश्वास किया। उसने परमेश्वर के वचन पर दो तरह से विश्वास किया। पहला, परमेश्वर की प्रतिज्ञा पर विश्वास करने के द्वारा। ''वह जो एक सौ वर्ष का था, अपने मरे हुए से शरीर और सारा के गर्भ की मरी हुई की सी दशा जानकर भी विश्वास में निर्बल न हुआः और न अविश्वासी होकर परमेश्वर की प्रतिज्ञा पर सन्देह कियाः पर विश्वास में दृढ़ होकर परमेश्वर की महिमा की,'' (पद 19–20)। उसने मानवीय असम्भावना को (एक पिता बनने की) दिव्य असम्भावना (कि परमेश्वर अपने वचन को तोड़ेगा) के विरोध में तौला और तय किया कि यदि परमेश्वर परमेश्वर था, तो कुछ भी असम्भव नहीं था। उसका विश्वास सिर्फ इसलिए मजबूत नहीं था कि उसने परमेश्वर की प्रतिज्ञा पर विश्वास किया, बल्कि उसने परमेश्वर की सामर्थ पर भी विश्वास किया। ''और निश्चय जाना कि जिस बात की उसने प्रतिज्ञा की है, वह उसे पूरा करने में भी समर्थ है। इस कारण यह उसके लिये धार्मिकता गिना गया'' (पद 21–22)।

जबकि विश्वास का सिद्धान्त हमें स्पष्टता से बताया गया है। यह सरल सी बात है कि परमेश्वर के वचन गृहण करें एवं परमेश्वर को हर परिस्थिति पर परमेश्वर होने दें।

ग. हमने विश्वास के सिद्धान्त का अनुभव किया है (4:23–25)

पौलुस विश्वास के द्वारा उद्धार पर इस महान चर्चा को यह कहते हुए समाप्त करते हैं कि हमें इस सत्य को अपने जीवन में लागू करना है। वह इस सिद्धान्त को आज के समय के अनुसार व्यवहारिक एवं अर्थपूर्ण बनाते हैं, क्योंकि विश्वास के द्वारा उद्धार का सिद्धान्त अब्राहम के मामले में बहुत प्रभावशाली है, हमारे द्वारा भी अनुभव होना है। उसी उद्देश्य के लिये। ''और यह वचन, 'विश्वास उसके लिये धार्मिकता गिना गया,' न केवल उसी के लिये लिखा गया, वरन् हमारे लिये भी जिनके लिए विश्वास धार्मिकता गिना जाएगा,'' (23–24क)। लेकिन हमारे लिये भी! अब्राहम को उद्धार देने एवं धर्मी ठहराने के लिये परमेश्वर का जो तरीका है वही हमारे लिये भी है। अब्राहम को एक ऐसी स्थिति में रखा जहाँ सिर्फ विश्वास ही उपलब्ध हो सकता था, और वही हमारी भी स्थिति है।

इस सिद्धान्त का अनुभव हमारे द्वारा सिर्फ इसी उद्देश्य के लिये नहीं किया गया, लेकिन उसी प्रक्रिया के द्वारा भी। पौलुस कहते हैं कि यह हमारे लिये भी है ''अर्थात् हमारे जो उसे पर विश्वास करते हैं, जिसने हमारे प्रभु यीशु को मरे हुओं में से जिलाया'' (पद 24ख)। अब्राहम का सामना जीवन में रूपान्तरित होती हुई मृत्यु की असम्भावना से हुआ, फिर भी उसने आन्दोलनकारी विश्वास किया कि यह कुछ भी परमेश्वर के लिये असम्भव नहीं था। मूलतः हमारा भी उसी ''असम्भावना'' से सामना हुआ है, क्योंकि हमें यह विश्वास करना हैं कि परमेश्वर ने यीशु को मुर्दों में से जिलाया (रोमियों 10:9)। जब एथेन्स में पौलुस ने

इस सिद्धान्त का प्रचार किया, विश्व सांस्कृतिक एवं बुद्धिमत्ता की राजधानी में, उसका ठट्ठा उड़ाया गया (प्रेरितों के काम 17:32)। इस दिन बहुत से लोगों ने विश्वास करने से इन्कार किया कि यीशु मसीह आलौकिक रूप से मुर्दों में से जी उठे थे। फिर भी यह विश्वास का मुख्य बिन्दू था। हमने यह विश्वास किया और परमेश्वर मसीह की वापसी में इसे हमारे लिये धार्मिकता गिनते हैं (रोमियों 10:9)।

अन्ततः इसी सिद्धान्त पर उद्धार हमारे लिये अच्छा ठहराया गया है। परमेश्वर का उद्धार जैसे नये नियम के समय में हैं वैसा ही पुराने नियम के समय में भी वास्तविक था। वह भी विश्वास के सिद्धान्त पर ही आधारित था। पौलुस प्रभु यीशु के बारे में कहते हैं कि वह ''हमारे अपराधों के लिये पकड़वाया गया, और हमारे धर्मी ठहरने के लिये जिलाया भी गया'' (पद 25)। अब्राहम ने भी उसी तरह उद्धार पाया, जिस तरह हमने पाया। उसने पहले ही विश्वास की आँखों से मसीह के पूर्ण होने वाले कार्य को देखा था। यीशु ने अपने दिनों के अविश्वासी यहूदियों से कहा, ''तुम्हारा पिता अब्राहम मेरा दिन देखने की आशा से बहुत मगन था, और उसने देखा और आनन्द किया'' (यूहन्ना 8:56) हम पीछे मुड़कर विश्वास से मसीह के पूर्ण कार्य को देखते हैं और उसी उद्धार का आनन्द लेते हैं, जिसका हम अभी लेते हैं।

जबकि हमने दोनों तरीकों की तुलना एवं भेद किया है – प्रयत्न के द्वारा उद्धार एवं भरोसा रखने के द्वारा उद्धार। जो अब्राहम ने पाया, जो दाऊद ने पाया, पौलुस ने पाया, और हमें भी जरूर पाना चाहिये। उद्धार विश्वास के द्वारा और सिर्फ विश्वास के द्वारा।

उद्धार हमेशा के लिये है

5:1–21

I. परमेश्वर ने हमें कैसे ऊपर उठाया है (5:1–5)

- क. जैसे कि हमारी पदवी या स्थान है (5:1–2)
    1. हमारे पास स्वीकृति है (5–1)
    2. हमारे पास समीप जाने का साधन है (5–2)
- ख. जैसे कि हमारी अवस्था है (5:3–5)
    1. किस तरह की परिपक्वता हमारे द्वारा दर्शायी गयी है (5:3क)
    2. किस तरह की परिपक्वता हमारे भीतर बढाई गई है (5:3ख–5क)
    3. किस तरह की परिपक्वता हमारे लिये निर्धारित की गई है (5:5ख)

II. परमेश्वर ने हमें कैसे प्रेम किया है (5:6–11)

क. परमेश्वर के प्रेम का प्रमाण (5:6–8)

1. यह बिना शर्त का प्रेम है (5:6)
2. यह अतुल्य प्रेम है (5:7–8)

ख. परमेश्वर के प्रेम का प्रावधान (5:9–10)

1. मसीह ने हमारे लिये अपना जीवन दिया (5:9–10क)
2. मसीह अपना जीवन हमें देते हैं (5:10ख)

III. कैसे परमेश्वर ने हमें खो दिया (5:12–21)

क. पाप की समस्या को निर्दिष्ट किया गया है (5:12–14)

1. पाप की उपस्थिति (5:12क)
2. पाप का दण्ड (5:12ख)
3. पाप की शक्ति (5:13–14)

ख. पाप की समस्या का अध्ययन किया गया है (5:15–21)

1. इसका समाधान परमेश्वर के उपहार में है (5:15–19)
2. इसका समाधान परमेश्वर के अनुग्रह में है (5:20–21)

जब कि विश्वासी की अनन्त सुरक्षा का सिद्धान्त बहुत से गम्भीर मसीहियों के विपक्ष में है, और जबकि यह रोमियों 5 अध्याय का विषय है, तो इस विषय पर पहले ही कुछ बातों को ध्यान रखने की जरूरत है। पहला, यह कि कोई भी इस बात से इन्कार नहीं करेगा कि नये नियम में चेतावनी देने वाले बहुत से अंश पाये जाते हैं जो इस बात को दर्शातें है। कि उद्धार खोने सम्भावना मोजुद हैं। ये अंश मुख्यतः गैर – पौलूस पत्रियों में और विशेषकर इब्रानियों की पत्री में पाये जाते हैं। एक ऐसी पत्री जो किसी तरह से रोमियों की पत्री का साथी हिस्सा है। इन अंशों पर तसल्ली देने वाला एक स्पष्टिकरण है कि ये सच्चे विश्वासीयों पर लागू नहीं होता है बल्कि झूठे मसीही शिक्षकों पर होता है। इस विषय पर आयरनसाईड की एक छोटी–सी पुस्तक में इन अंशों पर पूर्ण चर्चा पायी जाती है। ये अंश पौलूस के द्वारा लिखे गये सु–समाचार रोमियों की पत्री में नहीं पाये जाते हैं।

दूसरा, कुछ गंभीर बाईबल शिक्षकों का यह मानना है कि अनन्त सूरक्षा के सिद्धान्त में कुछ तो स्वाभाविक है और वह कभी–भी उसे नहीं खोएगा, वे उसे बनाए रखते हैं, और सब तरह की बातों के लिये आजादी एवं खराब जिन्दगी के लिये द्वार खुला रहे।

जबकि यह विशेष बात रोमियों 6 का एक महान विषय है, जो इसे अगले अध्याय में ध्यान दिया जाएगा ।

तीसरा, इस बात को पहचानना चाहिए कि बाईबल में एक व्यक्ति की मसीही होने के नाते स्थिति और मसीही होने के नाते अवस्था में भेद बताया गया है । हमारी स्थिति या पदवी सिद्ध है, परमेश्वर के वचन के द्वारा, मसीह के कार्य और पवित्र आत्मा की गवाही के द्वारा गणना योग्य एवं सुनिश्चित है । हमारी अवस्था अपूर्ण या असिद्ध, परिवर्तनशील और एवं बहुत बड़े मापदण्ड में हम पर निर्भर करती है । परमेश्वर के सामने हमारी पदवी या स्थिति अध्याय 5 में है; और हमारी अवस्था अध्याय 6–8 का विषय है ।

ए. **कैसे परमेश्वर ने हमें ऊंचा उठाया है** (5 : 1–5)

पौलूस एक बार में इस सत्य के साथ शुरू करते हैं कि मसीह के कार्य के द्वारा हमारा परमेश्वर से मेल–मिलाप हुआ है । शांति या मेल का सीधा सा मतलब है कि युद्ध समाप्त हो गया है; विद्रोह के हथियार नीचे डाल दिये गये हैं; परमेश्वर की दोषियों को क्षमा करने वाले नियम को स्वीकार किया जा चुका है ।

अ – **हमारी स्थिति पर एक पूर्व दृष्टि** (5 : 1–2)

यहां दो शब्द हैं जिहोंने पौलूस की शिक्षाओं को अपने संग्रह कर लिया है – ''स्वीकृति'' और ''प्रवेश'' । पहले स्थान में; तब, हमारे पास हैं (1) स्वीकृति । ''अतः जब हम विश्वास से धर्मी ठहरे, तो अपने प्रभु यीशु मसीह के द्वारा परमेश्वर के साथ मेल रखें'' (पद–1) पौलूस यहां सरलता से कहते हैं कि मसीह के पूर्ण किये गये कार्य के दृष्टिकोण से िकवह हमारा प्रतिनिधित्व करता है (4:24–25), हम परमेश्वर के सामने अपनी स्थिति के लिये पूर्ण निश्चित हो सकते हैं । विश्वास धर्मी ठहराया गया है। यह शब्द मूल में अनिश्चित काल–सूचक भूतिकालिक क्रिया में हैं और उस निश्चित समय की ओर ईशारा करता है जिस पर हर एक विश्वसासी, विश्वास का अभ्यास करने से, परमेश्वर की दृष्टि में धर्मी ठहराया गया था । (2) वह परमेश्वर के साथर शांति या मेल से है । वह आगे को उद्धार पाने के लिये भूखा की तरह नहीं होगा और आगे को विद्रोह और स्वयं ईच्छा पर संघर्ष नहीं करेगा । वह धर्मी ठहराया गया है । उसके पास कुछ ऐसा है जो संसार उसे दे नहीं सकता और ना ही उससे हो सकता है–परमेश्वर के साथ शांति या मेल–मिलाप ।

II. परमेश्वर ने हमसे कैसा प्रेम किया (5:6–11)

ये परमेश्वर का प्रेम है जो हमारी अनन्त सुरक्षा को पक्का करता है। वही प्रेम हमारे छुटकारे की योजना है जो बहुत पुरानी अनन्तता तक पहुँचती है, जो प्रभु यीशु को प्रेम के कारण इतना दबाता है की

क्रूस की मृत्यु इधर–उधर दूर–दूर तक हाथ पैर पटकती रह गई, और अन्त में महिमा का द्वारा उसके निवास में हमारा स्वागत करता है।

क. परमेश्वर के प्रेम का परिमाण (5:6–8)

परमेश्वर के प्रेम का परिमाण सदैव उसके वरदानों में है। '' परमेश्वर में जगत से ऐसा प्रेम किया कि उसने अपना इकलौता पुत्र दे दिया। (युहन्ना 3:16)'' ''मसीह कलीसिया से प्रेम करता है, और अपने आपको इसके लिए दे दिया'' (इफ. 5:25)। '' वह मुझसे प्रेम करता है और स्वयं को मेरे लिए दिया '' (गला 2:20) बाइबिल चाहे संसार के लिए परमेश्वर के प्रेम के बारे में बताए, कलीसिया के लिए या मेरे लिए। उसके प्रेम का नाम और प्रगटीकरण सदैव एकरूप होता है। मसीह का दान और परमेश्वर के प्रेम का प्रमाण सदा के लिए है। पौलुस हमे दिखलाता है कि (1) परमेश्वर के प्रेम में कोई शर्त नही। ''क्योंकि जब हम निर्बल ही थे, तो मसीह ठीक समय पर भक्तिहीनों के लिए मरा।(वचन 6)

मसीह भक्तीहीनों के लिए मरा। एक पुरानी कविता जो ये व्याख्यान करती है, एक जवान के बारे में उसकी पंक्तियॉ ऐसा बताती है कि उसने एक कटु स्त्री से प्रेम किया। जिसने उससे उसके प्रेम के प्रमाण स्वरूप उसकी (लड़के की) मॉ का दिल मांग। ताकि वह अपने कुत्ते को खिला सके। जवान ने छुरा लिया, मॉ को लेटा दिया उसे फाड़कर उसका दिल निकाल लियां जब वह अपनी मॉ कादिल लेकर दौड़ा जाता था कि उसे प्रमाण दे, उसे ठोकर लगी वह लड़खड़ा कर गिर पड़ा उसके हाथों से उसकी मॉ का दिल भी छूट गया और जैसे वह इधर उधर लुडक रहा था उस दिल ने अपने बेटे के सिसकने की आवाज सुनी और तुरंत उस दिल ने धीरे से पुछा'' बेटे क्या तुझे चोट लगी, कही चोट तो नही लगी? (5) मसीह भक्तीहीनों के लिए मरा। यदि एक मॉ के प्रेम का ऐसा चित्र है तो कलवरी पर उस परमेश्वर के प्रेम का प्रगटिकरण कैसा होगा। वह क्रूसित मसीह जिसके हाथों में रोम की वह लोहे की कीले छेदी गई थी, वह क्रोध की आंधी भी बन सकता था। वह संसार भर में अपनी पुकार सुना सकता था स्वर्ग के परिकोट से बारह पलटन जो की चमकती ज्वाला में तलवार लिए हुए बेडे से उतर आ सकते थे। इसके अलावा वह प्रेमी जवान पुरूष चितलाता है, पिता इन्हें क्षमा कर क्योंकि ये नही जानते कि क्या करते है। मसीह भक्तिहीनों के लिए मरा। ये परमेश्वर के प्रेम का प्रमाण है। इसमें कोई शर्त नही।

वैसे भी 2. परमेश्वर का प्रेम अतुल्नीय है ''किसी धर्मी जन के लिए कोई मरे ये तो दुर्लभ है। परंतु हो सकता है किसी भले मनुष्य के लिए कोई मरने का साहस भी करे, परंतु परमेश्वर अपने प्रेम की भलाई इस रीती से प्रगट करता है कि जब हम पापी ही थे तभी मसीह हमारे लिए मरा (वचन 7,8) जब हम पापी ही थे यीशु ने कहां, मैं धर्मियों को नही परंतु पापियों को बुलाने आया हूॅ (मत्ती 9:13) ''मसीह यीशू पापियों का उद्धार करने के लिए जगत में आया। (1:15) ये ऐसा नही कि हम परमेश्वर के उद्धार और उसकी

मदद के लायक है। क्योंकि हम तो उसके कभी खत्म न होने वाले क्रोध और अनंत दण्ड के भागी है। देखे की पाप ने उस उत्तम और प्रेमी संसार में, उस संसार पर जिस पर उत्पत्ती के समय परमेश्वर की आशीष का वचन मण्डराता था। (उत्पत्ति 1:31) पाप परमेश्वर क्रोध दिलाता और स्वर्ग और पृथ्वी को दूषित कर दिया। पहले जहां वह राज्य करता था वहां उसे भगौड़ा और बलवई घोषित किया गया। संसार दुष्ट आत्माओं से, बिमारीयों से और मृत्यु और कब्रस्थान, अस्पतालों, जेलों और मानसिक आरोग्यालयों से ग्रासित दिखाई पड़ता है। ये घठियापन और गंदगी, दुर्दशा और नफरत, युद्ध और आकाल, अभिशाप और महामारी, मृत्यु और सडाहट से बर्बाद है और ये सब पाप के उत्पाद है और मनुष्य पाप में, दस्ताने में हाथ की तरह है। जब परमेश्वर ने अपने पुत्र को उनके उद्धारकर्ता के रूप में भेजा। मनुष्य ने यीशू के मुहॅ पर थूका, कोड़ों से उसकी पीठ छलनी कर दी। उसे नंगा काठ पर ठोंक दिया और उसकी वेदना का मखॉल उडाया, जब तक कि सूर्य की दोपहर की चमक शर्मनाक होकर छुप नही गई, पृथ्वी भय से कंपित हो गई और भीतरी चट्टाने जब तक तड़क न गई। फिर भी सबके पश्चात् परमेश्वर ने मसीह के लहु के द्वारा शांति का निर्माण किया (कुलु 1:20)। निश्चित परमेश्वर के वचन में सबसे अधिक आश्चर्यजनक वाक्या। हम ये समझ सकते है यदि हम ऐसा पढ़ते कि परमेश्वर ने उस बहुमूल्य बहाए हुए लहु के लिए युद्ध छेड़ा और उस क्रूस को श्राप दिया, इसके बजाय हम ये पढ़ते है कि परमेश्वर ने उस लहू से शांति का निर्माण किया। परमेश्वर का प्रेम अतुलनीय है।

बी. परमेश्वर की प्रेम की व्यवस्था (5:9–10)

परमेश्वर का प्रेम हमारे उद्धार के लिए उपलब्ध कराई गए है, पौलुस बताता है कि हमारे लिए यीशु ने कैसा जीवन दिया (वचन 9–10) ''अतः जब कि हम अब उसके लहू के कारण धर्मी ठहरे, तो उसके द्वारा परमेश्वर के क्रोध से क्यों न बचेंगे? क्योंकि बैरी होने की दशा में उसके पुत्र की मृत्यु के द्वारा हमारा मेल परमेश्वर के साथ हुआ, तो फिर मेल हो जाने पर उसके जीवन के कारण हम अक्षर क्यों न पाएॅगे? (वचन 9–10)। हम दोनों धर्मी और मेल मिलाप पाए है। ''बाइबल में एक बार भी नही है कि परमेश्वर कहें कि मेल मिलाप करें। केवल दुश्मनी हो हमारी भाग रहा है।

परमेश्वर कभी भी दोबारा दम नही मागता,

पहले मेरे उद्धारकर्ता के खून बहेते हाथ और अब दुबारा मेरे।

इस महान अध्याय में ''अधिक'' जो बार–बार अभिव्यक्ति होता है। उस पर निशान लगा लें। आदम ने जो खो दिया उसे पुर्नस्थिति करने की अपेक्षा मसीह का अधिक काम करना था। इस तथ्य के अधीन अपेक्षित है कि पा करने वाला मूसा की व्यवस्था के अधीन है। यह अनिवार्य था कि पाप करने वाला अपने सताया हुआ वास्तविक हानि के प्रति अच्छे ही नही पर अपने सताया जन को एक पांचवी प्रत्यास्थापना जोड़ना कर

दे। इस प्रकार घायल दल एक पाने वाला हो गया। कलवरी पर मसीह का कार्य केवल परमेश्वर की ही अनंत महिमा नही पर एक पापी जो विश्वास करता है उसे भी बड़ा लाभ पहुंचता है। यह संभव मनुष्य आदम की वाटिक में अनिश्चिता और अनभिज्ञता में रहे और केवल आदम का ही बना रहे। फिर भी करवरी के कारण, हम परमेश्वर के पुत्र बना गए और जा आदम ने परमेश्वर की उपस्थिति का हर्ष उठाए हम उसे अधिक परमेश्वर के साथ संबंध का हर्ष उठते है।

मसीह ने अपनी जिंदगी हमारे लिए दि। हम उसके लहू के द्वारा धर्मी ठहरगऐ और उसके क्रोध से बच गए। हमार परमेश्वर के साथ ''मेल मिलाप'' हुआ उसके पुत्र की मृत्यु के कारण पर इसे में इससे ओर अधिक है। पौलुस बताता है कि (2) मसीह ने हमारे लिए अपना जीवन दिया। ''मेल मिलाप के द्वारा हम उसके जीवन से उद्धार पाते है'' (वचन 10बी) दूसरे शब्दों मे, जब हम पाप में ही थे तब परमेश्वर का प्रेम पहले से पहुंच गए अब और कितना अधिक होगा जब हम उसके पुत्र के साथ जोडगए है। हमारी सहभागती निर्तरा उद्धार और आनेवाली चरम महिमा का आश्वासन है। मसीह ने अपना जीवन देने के द्वारा हमे पाप के दण्ड से बचाए, मसीह ने अपना जीवन देने के द्वारा हमे पाप की सामर्थ्य से बचाए , जैसे वह एक दिन हमे पाप की उपस्थिति से भी बचाएगा।

स. परमेश्वर के प्रेम का उत्पाद (5:11)

मानव अनुभव में पाप का प्रथम फल परमेश्वर और संगती से विमुखता था। आदम और हवा वर्जित फल खाने के बाद परमेश्वर की आवाज सुनाकर अपने आप को छुपा लेते है। इसके विपरीत उद्धार का प्रथम फल इसके विपरीत है– यह परमेश्वर में उठाया जाना है. पौलुस कहता है, ''परंतु हम अपने प्रभु यीशु मसीह के द्वारा, जिसके द्वारा हमारा प्रायश्चित हुआ है, परमेश्वर में आनन्दित होते है। (वचन 11) प्रायश्चित शब्द यह पर मेल मिलाप के लिए है वचन 10 एक कल्पना कर देखे कि उडाय पुत्र दूर देश से वापस आता है और मेल और पुर्नस्थापित किया जाता है। वह अपने पिता को ऊंचा उठाता है '' रूके और देखे, वह जब भी किसी को यह कहानी सुनाता होगा तो जोर से कहता होगा, रूको और देख कोई पिता है मेरे पिता जैसा।'' कितना अधिक हमें परमेश्वर को ऊंचा उठाना चाहिए।

प्प्. हमे परमेश्वर ने कैसे मुक्त कराया (5:12–21) उद्धार सदा के लिए है। पाप के फल पर कार्यवाही करते हुए और (उसका अपराधा और उसका कार्य जीवन के अंदर), पौलुस इसकी जड़ से निपटने के लिए आगे बढ़ाता है। वह पाप के मूल में वापस जाता है आदम और गिराने में। वह आदम को मानव के तबाह प्रतिनिधि के रूप में देखता है और यीशु से उसकी तुलना करता हैः आखरी आदम, मुक्त मानवता के प्रतिनिधि। आदम में सब मानव पापी है, और मसीह में वे संत है। आदम के परिवार पर मृत्यु राज्य करती है। और मसीह के परिवार पर छुटकार राज्य करता है। आदम के मामले में परमेश्वर उसके उल्लंघन पर

जोर देता है, यीशु के मामले में परमेश्वर आज्ञाकारीता पर जोर देता है। मसीह में, परमेश्वर पाप की जड़ और डालियॉ पर कार्यवाही कर इस बात का मतलब की खोज करता है कि एक विश्वासी को आदम के परिवार से लेकर परमेश्वर के परिवार में रखना।

डा.आर.ई.डी क्लार्क, विकास के खिलाफ खेदसूचक रूप है, इसमे एक रोचक अध्याय है जिसका शीर्षक है '' मनुष्य मनुष्य में। अध्याय ''पूर्वगठन'' से संबंध रखता है'', एक विचार इसे समझाने का प्रयास करता है कि कैसे एक मानव या अन्य प्राणी कैसे अण् में से जन्म ले सकते है।

डा. क्लार्क कहते है, पूर्वगठन जल्द ही धर्मशास्त्र और दर्शन में अपना स्थान पा लाते है। ूउउमतकंउ उंसमइतंदबीम के द्वारा दिये गये सुझाव के परिणामस्वरूप मूल पाप को समझाने के लिए इस्तमाल किया। उन्होनें कहा यदि हम अपने माता–पिता के अंदर मौजूद होते, तब जब उन्होंने पाप किया तो उसका हिस्सा होने के कारण पाप हमारे अंदर उसका अनुकरण करता, यहां तक कि उन्होंने पूर्वगठन के लिये बाइबल से एक स्वच्छ उत्पादन के प्रमाण तक पहुंच गए। इब्रानियों 7:9–10, लेटी ने थी, जो दसवां अंश लेता है, अब्राहम के द्वारा दसवां अंश दिया। क्योंकि जिस समय मलिकिसिदक शलेम के राजा ने उसके पिता से भेंट की , उस समय वह अपने पिता की देह में था।

वास्तव में इसे शाब्दिक करने के लिए अच्छी धर्मशास्त्रों आधार है (रोम 3:23, 5:12) परमेश्वर के वचन में पाप के अनुवांशिक रूप की गहराई के सिद्धांत लिखे है। जहां तक मानव जाति का संबंध है, आदम में पाप बढ़ा और उसे अपनी भावी पीढ़ी अपने द्वारा देता है। विकास का सिद्धांत बाइबल के सिद्धांत पर कठोर प्रतिक्रिया करते है बहुत से लोग समझते है कि मसीही विश्वासी के ह्रदय के बहुत करीब है। आदम को इस योजना से निकला दे और रोमियों 5 को परमेश्वर के वचन से फड़ा दे और स्वभाव और पाप के परिणाम बिन्दु पर बाइबल की शिक्षा को भी फड़ा दे।

अ. पाप की समस्या को कहा जाता है (5:12–14)

चिंता की समस्या (1) पाप की उपस्थिति पौलुस कहता है, ''एक व्यक्ति के द्वारा पाप संसार में आया'' (वचन 12)। आदम और हवा की कहानी कोई पौराणिक कथा था लोक साहित्य नही पर मानव इतिहास में वास्तविक स्थिति है। वचन आदम के कंधों पर मानव के पापों का पूर्ण दोष डालता है, आदम जो कि मानव जाति का पिता है। सारे मानव की अजन्में उत्पत्ति बोलते है जब आदम गिरा। आध्यात्मिक जान इसे संधवादी और विचारगोष्ठी कहते है'' आदम हमको दोनों को दिखता है और अपने में थी बनाएं रखता है। वो परमेश्वर के रूप और समानता में बनाए गए है (उत्पत्ति 1:26–27) फिर भी, जब आदम पाप के बाद अपने परिवार को सुरू करता है, हमे यह बताई गई की आदम को उसके समान और उसके रूप में पुत्र हुआ (उत्पत्ति 5:3) आदम की पीड़ी परमेश्वर का रूप और सामनता नही रखता पर गिरे हऐ आदम का रूप और सामनता रखता है। तो फिर वहॉ (2) पाप के दंड की समस्या है '' एक मनुष्य के द्वारा पाप जगत

में आया और पाप के द्वारा मृत्यु आई, (वचन 12) परमेश्वर के स्पष्ट वचन ''तू अवश्य मर जाएगा (उत्पत्ति 2:17) सर्प का जबरदस्त झूठ'' ''तुम निश्चय न मरोगे'' (उत्पत्ति 3:4) जिस क्षण आदम ने पाप किया वो आत्मिक रूप से मर गया, इस प्रकार सालो बाद शारीरिक रूप में भी मर गया। ''तू मिट्टी तो है और मिट्टी ही में फिर मिल जाएगा'' (उत्पत्ति 3:17) भयभीत आदेश ने सारे मानव जाति को अपने गले से लगा लिया। '' इस रीति से मृत्यु सब मनुष्यों में फैल गई, क्योंकि सब ने पाप किया'' (वचन 12) मौत तुरंत आदम से उसके प्रत्येक व्यक्ति के वंशज को अध्यारोपित किया गया। सब ने आदम में पाप किया और तुरंत और सीधे आदम से मृत्यु प्रत्येक व्यक्ति को अध्यारोपित किया गया था।

अत में पौलुस हमें (3) पाप की शक्ति की याद दिलाता है ''व्यवस्था के दिए जाने तक पाप जगत में तो था, परंतु जहां व्यवस्था नही वहां पाप गिना नही जाता, तो भी आदम से लेकर मूसा तक मृत्यु ने उन लोगों पर भी राज किया, जिन्होंने उस आदम, जो उस आने वाले का चिन्ह है, के अपराध के सामान पाप न किया (वचन 13–14)। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि हालांकि सदियों के लिए दुनिया में पाप था, जब तक मूसा नही आया यह औपचारिक रूप से मनुष्यों के खातों में आरोप नही लगाया गया थ, क्योंकि यह अब तक व्यवस्था नही दिया गया था फिर भी मानव मरा वे इसलिए मरे क्योंकि आदम ने पाप किया था न कि उन्होंने। जबकि पाप का आरोप उनके खाते में नही लगाया था। तो बात करने के लिए, लोगों ऐसे ही मरने लगे और आदम इस भयभीत मामलों के लिए जिम्मेदार था। एक शिशु की मौत के लिए पर्याप्त सबूत है कि मौत एक ''निदौष'' शिशु पर भी राज्य करती है। इस तरह आदम ने अपनी पीड़ी को पाप की शक्ति का परिचय दिया। यहां तो पाप की समस्या है, आदम गिरने के बाद अभी तक अजन्में पाप के घातक वायरस के रूप में अपनी पीड़ी की परिचय देता है। हम इसलिए पापी नही क्योंकि हमें पाप किया, हम पापी है इसलिए पाप करते है। और क्योंकि हमने आदम में पाप किया है, हमें मौत के लिए अध्यारोपित है, इसलिए हम मर जाते है। कुछ छोटे, कुछ पुराने, लेकिन अभी या बाद में हम मर जाते है।

पाप की समस्या का अध्ययन

क्या पाप की समस्या का कोई समाधान है? अवश्य है– दुसरा मनु य अंतिम आदम उत्तर है, वह प्रथम आदम के द्वारा परमेश्वर की आज्ञा के विरूद्ध जानबूझकर किये गये विद्रोह की सारी भरपाई अपने आज्ञा पालन द्वारा सारी भर पाई कर सकता है। समाधान दो प्रकार के होता है। (1) परमेश्वर का वरदान। ''पर जैसी अपराध की दशा में वैसी ही अनुग्रह के वरदान की दशा नहीं, क्योंकि जब एक मनु य के अपराध से बहुत लोग मरे तो परमेश्वर का अनुग्रह और उसका जो दान, एक मनु य के अर्थात यीशु मसीह के अनुग्रह से हुआ बहुत से लोगों पर अवश्य ही अधिकाई से हुआ (पद 15)। यह हमं बताता है कि परमेश्वर का वरदान हमें दिवालिए पन से छुटकारा देता है। इस विचार को फिलिप्स के अनुवाद में उत्तम

ढ़ग से बताया गया है जहां हम इस प्रकार पढ़ते हैं ''पर परमेश्वर का वरदान यीशु मसीह के द्वार बहुत ''भिन्न व्याख्या'' करता है जो आदम के पाप के वि ाय में बताता है, क्योंकि जैसी एक मनु य के पाप के स्वाभाविक परिणाम स्वरूप मृत्यु बहुतेरे लोगो पर आया, कि परमेश्वर की कृपा से एक मनु य यीशु मसीह के द्वारा मुफ्त अनुग्रह देता है, कि सब मनु यों के लाभ के लिए परमेश्वर का प्रेम बहुतायत से बढ़ाया गया। ''भिन्न व्याख्या'' अंतर स्प ट करता है, परमेश्वर का वरदान हमें पुत्र बनाता है और मसीह के साथ संगी वारिस बनाता है।

साथ ही परमेश्वर का वरदान हमें दो ा से मुफ्त करता है। ''जैसा एक मनु य के पाप करने का फल हुआ, वैसा ही वरदान की दशा नहीं, क्योंकि एक ही कारण दण्ड की आज्ञा का फैसला हुआ, परन्तु बहुत से अपराधों के कारण ऐसा वरदान उत्पन्न हुआ कि लोगधर्मी ठहरे (पद 16) यहां पर फिलिप्स का अनुवाद फिर सहायता करता है''

याने परमेश्वर का वरदान हमें बंधन से स्वतंत्र करता है, और वह है मृत्यु के दासत्व से स्वतंत्रता'' क्योंकि जब एक मनु य के अपराध के कारण मृत्यु ने उस एक ही के द्वारा राज्य किया तो जो लोग अनुग्रह और धर्म रूपी वरदान बहुतायत से पाते हैं वे एक ही मनु य के, अर्थात यीशु मसीह के द्वारा अवश्य ही अनन्त जीवन में राज्य करेंगे। (पद 17) फिर जे.बी.फिलिप्स इस प्रकार अनुवाद करता है ''क्योंकि यदि एक मनु य का अपराध का अर्थ सब मनु यों के लिए सारे जीवन पर्यन्त मृत्यु का दास बनना पड़ता है तो उससे भी अधिक बढ़कर दुसरे मनु य अर्थात यीशु–मसीह के द्वारा हुआ कि जो लोग धर्म और अनुग्रह रूपी वरदान बहुतायत से पाते है वे अपने जीवन भर राजाओं के समान जीवन विताऐं'' (10) अतः पौलुस परमेश्वर के वरदान के सुसमाचार की व्याख्या तेजोमय ाब्दों में करते है, मसीह के पूर्ण किये गये कार्य द्वारा अपराध और दासत्व से मुक्ति जिसे हमें पाप के दिवालिए पन ने दिया है।

परन्तु हमारे पूर्ण उद्धार का यह संदेश इस कथन में विश्वास करने में बहुत ही भला प्रतीत होता है अतः पौलुस परमेश्वर के वरदान के ाुभ संदेश को दोहराता है। ''इसलिए जैसा एक अपराध सब मनु यों के लिए दण्ड की आज्ञा का कारण हुआ वैसा ही एक धर्म का काम भी सब मनु यों के लिए जीवन के निमित्त धर्मी ठहराए जाने का कारण हुआ। क्योंकि जैसा एक मनु य के आज्ञा न मानने से बहुत लोग पापी ठहरे, वैसे ही एक मनु य के आज्ञा न मानने से बहुत लोग धर्मी ठहरेंगे। (पद 18, 19)। परमेश्वर की स्तुती हो। समाधान समस्या जैसा ही व्यापक है उसने न केवल हमें प्रेम किया और ऊंचा उठाया उसने हमें पापों से मुक्त किया है और पूर्ण रूप से एक बार मे सर्वदा के लिए, मुफ्त में ''बिना धन और मूल्य के किया है।''

यद्यपि पाप की समस्या का समाधान केवल परमेश्वर के वरदान पर ही आधारित नहीं है पर परमेश्वर के अनुग्रह पर आधारित है के इस महत्वपूर्ण अध्याय को समाप्ति पर लाते हुए पौलुस हमें कुछ

दिखाता है। ;द्ध परमेश्वर के अनुग्रह की बहुतायत आपूर्ती। जब परमेश्वर ने अंत में व्यवस्था दिया वह ऐसा था कि पाप की भयंकरता स्प ट हो सके पर तुरंत उसने अपने अनुग्रह को अयोग्य पापियों पर प्रगट किया ''व्यवस्था बीच में आ गई कि अपराध बहुत हो, परंतु जहां पाप बहुत हुआ वहां अनुग्रह थी उससे भी कहीं अधिक हुआ'' (पद 20)। जिन्होंने बहुत दु टता पूर्वक पाप किया है वे इस बात को बहुत अच्छी तरह समझते है कि परमेश्वर के अनुग्रह के बहुतायत से आपूर्ती का क्या अर्थ है। जॉन बनयान ने अपने ''अबाउंडिन ग्रेस'' और जान न्युटन ने जो एक समय दासो का दास था अपना अतुल्यनीय गीत ''अमेजिग ग्रेस'' लिखा है।

परमेश्वर का अनुग्रह कभी समाप्त न होने वाला वि ाय है साम डन्कानान एक सामान्य और कुछ ही योग्यता वाला मनु य था जिसमें प्रभु के लिए कुछ करने की महान इच्छा थी। अतः उसने कार्ड और पत्रिकाओं में चित्रों को काट काट कर उन चित्रों के नीचे उपयुक्त पदों और कविताओं को चिपकाने का कार्य किया और उन साधारण दानों को उन्हें दिया जिन्हे वह समझता था कि वे आशी ा पायेंगे। एक दिन साम ने नियाग्रा जल प्रपात के चित्र को पाया, तब उसने लंबे समय तक उस चित्र के लिये उपयुक्त कविना नहीं पाया, फिर उसने सेंकी को एक गीत गाते सुना तो साम डेन्कानान ने तुरंत जान लिया, कि यह गीत एकदम उपयुक्त है जिसके लिए वह लंबे समय से इंतजार कर रहा था। सेंकी का वह गीत इस प्रकार से था।

क्या तुमने प्रभु पर विश्वास किया है?
अभी भी उसके पीछे चलने वाले बहुत अधिक बाकी है
क्या तुमने उसके अनुग्रह से पाया है?
अभी भी उसके पीछे चलने वाले बहुत अधिक बाकी है

ओह पिता ने अनुग्रह दर्शाया है
अभी भीक उसके पीछे चलने वाले बहुत अधिक बाकी है
उसका अनुग्रह मुफ्त दिया गया है
अभी भी उसके पीछे चलने वाले बहुत अधिक बाकी है।

अधिक और अधिक और अधिक और अधिक
अभी भी उसके पीछे चलने वाले बहुत अधिक बाकी है
ओह उसका असीम प्रेम
अभी भी उसके पीछे चलने वाले बहुत अधिक बाकी है

साम ने अपने नियाग्रा जल प्रपात के चित्र के नीचे इन पदों को उपयुक्त ाी ाक के साथ लिखा ''अभी भी पीछे चलने वाले बहुत बाकी है'' परमेश्वर के अनुग्रह के बहुतायत से आपूर्ती के लिए इसमें बढ़कर क्या और कोई उत्तम उदाहरण हो सकता है। जहां पाप अधिक हुआ वहां अनुग्रह भी उससे अधिक हुआ।

विजय का मार्ग का अध्ययन

6:1 – 7:25

I- मृत्यु के राज्य से छुटकारा (6:1–11)

A. मसीह के साथ हमारी मृत्यु की वास्तविकता (6:1–5)

1. इसकी सच्चाई (6:1–2)
2. इसका विजय (6:3–5)

B. मसीह के साथ हमारी मृत्यु का कारण (6:6–7)

1. जीवन में पाप का गढ़ (6:6अ)
2. जीवन पर पाप का गढ़ (6:6ब–7)

C. मसीह के साथ हमारी मृत्यु का परिणाम (6:8–11)

1. मसीह के विजय की प्रशंसा (6:8–11)
2. मसीह के विजय की प्रशंसा (6:11)

II- पाप के राज्य से छुटकारा (6:12–23)

A. पाप का पुराना अधिश्वर अब हराया गया है (6:12–14)

B. पाप का पुराना स्वामी अब हराया गया है (6:15–23)

1. एक नई स्वतंत्रता (6:15–18)
2. एक नई राज्य भक्ति (6:19–20)
3. एक नई बड़ी आयुज्य (6:21–23)

III- व्यवस्था के मांग से छुटकारा (7:1–25)

A. व्यवस्था और आत्मिक मनु य (7:1–6)

1. वह जानता है कि व्यव्स्था की सामर्थ मृत्यु में समाप्त होता है (7:1–3)
2. वह दिखाता है कि व्यव्स्था की सामर्थ मृत्यु में समाप्त होता है (7:4–6)

B. व्यवस्था और स्वाभाविक मनु य (7:7–13)

1. व्यवस्था पाप के गुप्त स्वभाव को प्रगट करता है (7:7–9)
2. व्यवस्था पाप के कुरूप स्वभाव को प्रगट करता है (7:10–13)

C. व्यवस्था और ाारिरिक मनु य (7:14–25)

यद्यपि रोमियों 5 और रोमियों 6 अध्याय के बीच के तर्क में कोई बदलाव नहीं है पहले अध्याय का तर्क दूसरे अध्याय में लगातार बिना रूकावट जारी रहता है। पौलुस अभी भी पापों (बहुवचन में) के वि ाय के बदले पाप (एक वचन में) के वि ाय में कार्य कर रहा है, पर अब वह दिखाने जा रहा है कि कलवरी पर मसीह का विजय हमें न केवल पाप के दण्ड से पर पाप के सामर्थ से स्वतंत्र करता है। हमारी सुरक्षा हमको पाप में बने रहने का बहाना नहीं देता है। (6:1) पर इसके विरूद्ध जब हम एक समय ''पाप में मरे हुए थे अब ''पाप के लिए मर'' मर गये हैं। यह विश्वासी के अनन्त सुरक्षा की शिक्षा से एकदम भिन्न है जो परिणाम स्वरूप पाप से स्वतंत्र है, यह वास्तव में हमारे सामने पाप से स्वतंत्रता को रखता। रोमियों 6 में ''पाप से स्वतंत्र'' अभिव्यक्ति तीन बार आता है। रोमिया 6:7, 18, 22)

I. मुत्यु के राज्य से छुटकारा (6:1–11)

पौलुस के अनुसार विजय के जीवन में रूकावट के लिए अज्ञानता प्रमुख पुंजी है। अभिव्यक्ति ''क्या तुम वही जानते'' पभी के इस भाग में तीन बार आया है (6:3, 16, 7:1) और हमे इस भाग को प्राकृतिक भागों को विभाजित करने के लिए सहायता प्रदान करता है। अभिव्यक्ति ''हमारे प्रभु यीशु मसीह के द्वारा'' एक अन्य मुख्य अभिव्यक्ति है जो इसके प्रत्येक मांगो में एक–एक बार आता है (6:11, 23, 7:25) अज्ञानता का प्रथम क्षेत्र जिस पर पौलुस कार्य करता है वह मृत्यु के राज्य से संबंध रखता है। मृत्यु जो एक समय हमारा ात्रु था पर अब वास्तव में विश्वासियों की सेवा करने के लिए, कब्र के उपर मसीह के विजय के लाभों को देता है।

A. मसीह के साथ हमारी मृत्यु की वास्तविकता (6:1–5)

विश्वासी पहले से ही मरा हुआ है यह विचार कितना क्रांति कारी है कि पौलुस दृढ़ घो ाणा से आरंभ करता है (1) इसके सच्चाई को ''तो हम क्या कहें? क्या हम पाप करते रहे कि अनुग्रह अधिक हो? कद्यापि नहीं! जब हम पाप के लिए मर गये तो आगे को उसमें जीवन क्यों कर बिताएं (पद1–2) उत्तर देने के लिए कुछ भी इतना उपयुक्त नहीं होगा कि एक व्यक्ति जो पाप के लिए मरा हुआ है। कल्पना कीजिए कि कोई लाश प्रतिक्रिया देने का प्रयत्न कर रहा हो! उसे स्पर्श किया जाता, आज्ञा दिया जाता है या लात मारा जाता है और कोई प्रति उत्तर नहीं आयेगा, क्योंकि कारण सरल है क वह इस प्रकार के उत्तेजना के लिए मरा हुआ है, परमेश्वर मानता है कि विश्वासी इस प्रकार पापों के लिए तत्पर होने के लिए मरा हुआ है।

किसी कलीसिया में एक संकीर्ण धर्मान्ध डीकन था जो पुराने रूढ़ीवाद से विवाहित था और किसी नये बात के लिए ांकालु था। वह सूखे पुराने रूढ़ीवाद के न्याय आसन पर आसीन था जो वचन के दृ टी कोण से चलने का इंकार करता था जो तेज स्वभाव का और बंजर आत्मा का था।क हम उसको मकादम नाम रख कर पुकार लेते है। उस कलीसिया में एक नव युवक परमेश्वर के अभि ोक के ताजे ओस के साथ आता है वह युवक दर्शन, वरदान, आक ार्क, वचन का विलक्षण समझवाला और कुशाग्र युवा है। उस युवक की सेवा परमेश्वर द्वारा आत्माओं के उद्धार से ओर बहुतेर परमेश्वर के लोग जागृत किये गये। पर अवश्य ही संभवतः उसके विचार उस पुराने ाासन करने वाले डीकम से सहमत न हो। क्योंकि व ाों से इस डीकन ने युवाओं को निरूत्साहित विरोध औश्र आलोचना करने में कोई कमी नहीं किया था इसका अपना पूरा सामर्थ उपयोग किया था। एक दिन इसी कलीसिया का एक अन्य सदस्य इस युवक से पूछता है कि वह कैसे इस डीकन से सामंजस्य स्थापित करेगा? ''विलियम'' उसका चौकाने वाला उत्तर था, ''मैं मकादंम के लिए पांच व र्ा पहले से मर चुका हूं।'' इस युवक ने मसीह के साथ विश्वासी के मृत्यु को समझ लिया था। आइये हम इस सच्चाई के वास्तविकता को समझे, हम जो पाप के लिए मर चुके हैं उसमें किस प्रकार जीवन विताएँ? हमारे जीवनों में मसीह के साथ मृत्यु के वास्तविकता का ऐसा अनुभव होना चाहिए कि हमारी ओर से पाप को कोई प्रतिउत्तर न मिले।

पौलुस दुसरा इसके विजय की दृढ़ घो ाणा करता है और अपने वि ाय को पूरा करता है, वह दो उदाहरण देता है ''क्या तुम नहीं जानते कि हम सब मसीह यीशु का बपतिस्मा पाने में हम उसके साथ गाड़े गये ताकि जैसा मसीह पिता की महिमा द्वारा मरे मुर्दों में से जिलाया गया, वैसे ही हम भी नये जीवन की सी चाल चलें।

व्युएस्ट ने इस पद का सहायता करने वाला व्याख्या किया है ''यहां ाब्द बपतिस्मा लिया का अनुवाद युनानी भा ाा से नहीं किया है पर अंग्रेजी भा ाा के ाब्दों से किया है यहां उच्चकोटि के लोहार के ाब्द का प्रयोग किया है जो गर्म लोहे के टुकड़े को पानी में डूबाता है, उसे कड़ा करने के लिए यूनानी सैनिक भी अपनी तलवारो के धार को रखता है और जंगली अपने भाले की नोक को खून भरे कटोरे में इस ाब्द का उपयोग उपर के उदाहरणों में हैं ाब्द डुबाना (बपटिजो) के परिभा ाा के समान है'' कि व्यक्ति या वस्तु को नये वातावरण मे रखना या किसी अन्य के साथ संयुक्त किये जाने की जैसी दशा या संबंध में फेर बदल करना जिस वातावरण में वह पहले था। अ बवह इसका उपयोग रोमियों 6 में करता है। यह परमेश्वर के कार्य को विश्वास करने वाले पापी को यीशु मसीह के साथ महत्वपूर्ण संयुक्तता में संदर्भ करता है जिसमें पापी अपने पापपूर्ण स्वभाव के लिए टूट जाता है और उसमें ईश्वरीय स्वभाव जोड़ दिया जाता है, यीशु मसीह के साथ उसके मृत्यु में गाड़े जाने और जी उठने में तुल्य बना दिया है। इस प्रकार पापी की

दशा और संबंध को उसके पहले ही स्थिति और संबंध में फेरबदल करता है उसे परमेश्वर के राज्य के (1) नये वातावरण मे ले आता है।

अन्य ाब्दों में इस जीवन कहानी के उदाहरण में पौलुस हमारे बपतिस्मा को मसीह में संदर्भित करता है। यद्यपि यह कुछ वह बात है जो हमारे परिवर्ततन में होता है जिसका संबंध हमारे अनुभव से संबंधित है। जैसा और कोई दूसरे बताते है कि यह पानी के बपतिस्मे को संदर्भ मे है न कि आत्मा के बपतिस्मे के 1(2) चाहे किसी भी दृ ि टकोण से लिया हो पर तथ्य बना रहता है कि पौलुस मसीह के साथ मृत्यु के वास्तविकता को वास्तविकता, सटीक, व्यक्तिगत अनुभव की ओर इशारा करने के द्वारा पूर्णता पर ले आता है।

दुसरा उदाहरण इसके वृद्धी से है ''क्योंकि यदि हम उसकी मृत्यु की समानता में उसके साथ जुट गये है तो निश्चित ही उसके जी उठने की समानता में जुट जाऐंगे। यहां ाब्द ''जुट गये है'' ाब्दिक रूप से ''एक साथ संयुक्त होना है'' व्युवेरूट बताता है कि इस ाब्द को ''स्यामी जुड़वा'' के समान उपयोग किया जा सकता है। सैंडी इसे इस प्रकार व्याख्या करता है ''वृद्धी द्वारा संयुक्त होना'' और आगे बताता है ''शब्द एक दम सही रूप में कार्य विधि को दर्शाता है जिसमें हम कलम बांधे जाने के कार्य विधि में वृक्ष के जीवन के साथ संयुक्त हो जाते है। अतः मसीही को मसीह में जोड़ा जाता है हम उसमे साथ तत्व के रूप में संयुक्त होते हैं और उसके जीवन के सहभागी होते हैं :–

इन दो उदाहरणों में एक जीवनी और धर्म विज्ञान और दूसरा जीव विज्ञान से है, पौलुस यहां मसीह के मृत्यु के सच्चाई को कि वह हमारी मृत्यु थी, उसका गाड़ा जाना हमारा गाड़ा जाना, उसका जी उठना हमारा जी उठना था, उसे बाटना चाह रहा है। वह न केवल मेरे लिए मरा पर वह मेरे स्थान पर मरा। जहां तक परमेश्वर से संबंध है वह पहले ही कब्र के पुनरूत्थान की ओर पहले से ही था, पर यह केवल हमारे लिए बच जाता है कि हम इस तथ्य को महसूस करें और इस सत्य को प्रतिपादन करें और विजय निश्चय है।

(ब) मसीह के साथ हमारी मृत्यु का कारण (6 : 6–7)

यद्यपि हमारा मसीह के साथ हमारी तुल्यता (पहचान) इस प्रकार अद्वितीय अद्भुत रीति से है, परमेश्वर ने पापों के गढ़ को तोड़ दिया है। ''यह जान कर'' पौलुस कहता है ''कि हमारा पुराना मनुष्यत्व उसके साथ क्रूस पर चढ़ाया गया है'' (पद 9 अ) अभिव्यक्ति ''पुराना मनुष्यत्व'' इफिसियों 4 : 22 और कुलुसियों 3 : 9 और यहां पर भी आया है'', जिसका अर्थ हमेशा पुराना मनुष्य, बिगड़ा हुआ मानवीय स्वभाव हर मनुष्य में जन्मजात बुराई को बताता है। रोमियों 6 : 6 यह स्वाभाविक मनुष्य स्वय है, उसका मार्ग इफिसियों 4 : 22 और कुलुसियों 3 : 9 में है। स्थिति के रूप में परमेश्वर की गणना में पुराना मनुष्यत्व क्रूस

पर चढ़ाया गया और विश्वासियों को समझाया गया है कि इसे एक अच्छा अनुभव बनाए, यह निश्चय जान कर कि ''पुराना मनुष्य उतार दिया गया है, और नया मनुष्य को पहन लिया गया है'' (4)

तब पुराना मनुष्य, वह पुराना मनुष्य है जो हम परिवर्तन से पहले थे। पुराने मनुष्य के विषय में कुछ बात है जिसे हमे जानना चाहिए, अब यह मर गया है, वह मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ा दिया गया है। क्रूस पर चढ़ाये जाने का चित्र अद्‌भुत है, कोई मनुष्य अपने आपको क्रूस पर नहीं चढ़ा सकता है, क्रूस पर चढ़ाये जाने में दूसरे के हाथ का होना आवश्यक है कलवरी के क्रूस पर परमेश्वर ने हमारे आपा के उपर कार्यवाही किया, साथ ही साथ पाप के प्रश्न पर हमें मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ा कर कार्य किया। इसे हमें जानने की आवश्यकता है क्योंकि इसे जाने बिना जो हम स्वाभाविक जन्म से है उससे छुटकारे की अनुभव करने की आशा कभी नहीं कर सकते हैं।

(2) आगे मसीह के साथ हमारी तुल्यता के पहचान द्वारा परमेष्वर ने जीवन में पाप के गढ़ को ढा दिया है। यह ''जानते हुए कि हमारा पुराना मनुष्यत्व उसके साथ क्रूस पर चढ़ाया गया कि पाप का देह नष्ट हो जाय कि हम आगे पाप की सेवा न करें (पद 6–7)। पाप का देह को परिभाषित किया गया है ''जो पाप की आज्ञाओं को पूरा करने के लिए औजार है।'' डब्ल्यु.ई.वाइन कहता है कि शब्द सोमा ''देह को स्वाभाविक जीवन के लिए नैसर्गिक (इंद्रिय) औजार के रूप में बताता है, इसे यहां पर रूपक के रूप में कि इसके महत्वपूर्ण सार को ..... वाक्यांश ''पाप का देह, तब पाप एक सुव्यवस्थित सामर्थ के रूप में देह के अंगों द्वारा कार्य करता है, यद्यपि पाप का बैठका इच्छा में होता है।'' (5) विश्वासी को अपने देह को मरा हुआ जानना है जो पाप करने के लिए औजार का कार्य करने संबंध में मरा हुआ है।

अब देह पाप के लिए मृतक महसूस नहीं करता है पर यह एकदम अलग बात है कि परमेश्वर इसे ऐसा कहता है एक पापी जो उद्वार की खोज कर रहा है उसे सीखना आवश्यक है कि उद्वार हमारे महसूस करने पर आधारित नहीं होता है पर निश्चित तथ्य पर आधारित रहता है, जो मसीह के कार्य और परमेश्वर के वचन पर आधारित रहता है। इन तथ्यों पर विश्वास करना आवश्यक है और मसीह को विश्वास से ग्रहण करना आवश्यक है। तब परमेश्वर के वचन के अधिकार से पापी जान सकता है कि उसके पाप क्षमा किये गये हैं कोई बात नहीं कि यह इस विषय में कैसा महसूस करता है। ठीक ऐसा संतों के साथ भी है हमें इस सत्य को स्वीकार करना है कि परमेश्वर ने कलवरी पर हमें ''पाप के देह'' पर कार्यवाही कर दिया है और एक विश्वासी को रोमियों 6 : 6 में परमेश्वर कहता है उस पर उसे विश्वास करना चाहिए। महसूस करना एक दम गौण और अनावश्यक है।

किसी मनुष्य को 6 बजे उठने की आदत थी कि सात बजे वाली सुबह के ट्रेन को पकड़ सके, उसकी पत्नी बहुधा उसे काम में जाते देखती थी, पर एक सुबह छोटे बच्चे विशेष परेशान थे और उसकी पत्नी गहरी निद्रा में थी, तब घड़ी का अलार्म बजा। ओह प्रिय, वह बड़बड़ाता है क्या 6 बज गये हैं ? जब

उसके पति ने उससे कहा, वह कहती है ''ऐसा नहीं लगता कि 6 बज गये हैं'' अब यहां पर मुद्दा है। नहीं लगता कि 6 बज गये हैं पर सूर्च, चन्द्रमा और तारें और पृथ्वी चक्र में घूम रहे हैं और आकाश के सारे मशीनरी ने घोषणा कर दिया कि 6 बज गये हैं, पर ऐसा नहीं लगता कि 6 बज गये हैं। इसी प्रकार से बाइबल के इस महान सच्चाई के विषय में भी है कि विश्वासी मसीह में मरा हुआ है। वह मरा हुआ महसूस न करे, पर यह मुद्दे से अलग बात है। परमेश्वर कहता है कि वह है और छुटकारे की संपूर्ण मशीनरी घोषणा करता है कि यह सत्य है।

हम इस आधारभूत सच्चाई को ग्रहण करने में कितने धीमे हैं जो हमारे लिए मसीही विजयी जीवन के महिमावान के द्वार को खोल देता है। दो आइरिस मनुष्य की कहानी – पेट और माइक, जिन्होंने एक बहुत विलक्षण कछुआ पाया, इस जन्तु का सिर पुरी तरह कठोर देह के अंदर था पर फिर भी कछुआ आसपास चल फिर रहा था कि कुछ हुआ ही न हो, पेट सोचता था कि वह मरा हुआ है पर माइक ने पुर जोर इंकार किया और बहस बहुत तेज होता गया, जब तक ओ. ब्रेन न आ गया। और ओ. ब्रेन ने उस कछुवे को देख कर कहा ''यह मरा हुआ है पर मैं यह विश्वास नहीं करता हूं'' ठीक यही समस्या बहुतेरे मसीहियों का है वे मरे हुए हैं पर वे विश्वास नहीं करते हैं। यह दुःखद है पर इस पद की सच्चाई को पूर्ण रूप से विश्वास किया गया है कि यह जीवन में पाप के गढ़ को ढा देता है जो इस पर एक बार विश्वास कर लेता है।

(स) मसीह के साथ मृत्यु का परिणाम (6 : 8–11)

परमेश्वर ने मृत्यु को हमारे लिए काम करने दिया था। यह हमारे लिए विजय के द्वार को खुला कर देता है, वैसे ही जैसे जब तक प्रभु नहीं आता है महिमा का द्वार खुला हुआ रहता है। यीशु मसीह का मृतकों में से पुनरूत्थान स्वतंत्र करने वाला सत्य है। हमें मसीह के विजय की प्रशंसा करना चाहिए। ''अब यदि हम मसीह के साथ मर गये हैं तो हम विश्वास करते हैं कि हम उसके साथ जीऐंगे भी। क्योंकि यह जानते हैं कि मसीह मरे हुओं में से जी उठकर फिर मरने का नहीं, उस पर मृत्यु की प्रभुता नहीं होने की (पद 8–9) पौलुस चाहता है कि हम मसीह के महत्वपूर्ण मृत्यु और पुनरूत्थान को समझे। वह तर्क में स्थिर रहता है और तर्क देता है यदि हम उसकी मृत्यु की समानता में जुट जाते हैं तो हम उसके पुनरूत्थान में भी जुट जायेंगे। ये दोनों साथ–साथ चलते हैं वही महान सामर्थ जिसने मसीह को मृतकों में से जिलाया, आज विश्वासियों के जीवन में कार्य कर रहा है (1 : 4)। यह कथन प्राथमिक रूप से उसके विजयी आगमन के संदर्भ में नहीं है परंतु यह अभी के विश्वासी में निवासरत् पवित्रात्मा के वर्तमान उपयोग को दर्शाता है जो हमने मसीह के पुनरूत्थान के फायदे और आशीषों का सेवा देता है। पौलुस अपने विषय में रोमियों 6 में वापस आता है।

पौलुस चाहता है कि हम मसीह के पुनरूत्थान के महत्व को ही न जाने पर उसके सत्यता को भी जाने ''मसीह जो मरे हुओं में से जी उठकर फिर मरने का नहीं उस पर कि मृत्यु की प्रभुता नहीं होने की।'' यह बहुत सी कलीसियाओं की एक बड़ी भूल है कि उनके पास मसीह का अपूर्ण विचार है। उनका वर्तमान मसीह या तो बच्चे` रूप में माता की गोद में है या अभी तक क्रूस के उपर है। पर मसीह पालने में नहीं है न ही मसीह अब कुआरी की बाहों में है, न क्रूस पर, न कब्र में, वह हमेशा के मुर्दो में से लिए जी उठ गया है। सत्य यह है कि पौलुस के तर्क के अनुसार जैसा मसीह पर मृत्यु का राज्य नहीं है हम पर पाप का राज्य नहीं है। ''क्योंकि वह जो मर गया तो पाप के लिए एक बार ही मर गया, परंतु जो जीवित है तो परमेश्वर केलिए जीवित है'' (पद 10) यदि आप विजय का आनंद पाना चाहते हैं तो आपको पहले मसीह के विजय की प्रशंसा करना चाहिए।

(2) तब हमें मसीह के विजय की प्रशंसा करनी चाहिए ''ऐसे ही तुम भी अपने आपको पाप के लिए मरा परंतु परमेश्वर के लिए मसीह यीशु में जीवित समझो'' (पद 11) जानना एक बात है (पद 9) पर ''व्यवहार करना दूसरी बात है।'' बहुत से लोगों के पास इस अध्याय के सच्चाई का सामान्य ज्ञान है पर वे कभी भी इसके अच्छाई में प्रवेश नहीं करते हैं क्योंकि वे इसको सच में अनुभव करने में असफल रहते हैं। शब्द समझने का अर्थ गणना करके अपने खाते में जमा करना होता है। समझना शब्द गणना की भाषा में जानना है, जो आपको पौलुस के कथन को समझने में सहायता करेगा।

उदाहरण के लिए एक व्यापारी अपने खजांची से कहता है ''इस माह के तनख्वाह में कुल कितने रकम की आवश्यकता है?'' कुछ गणना करने के बाद उसका खजांची बताता है, 20,000 रूपए, महोदय पर अभी बैंक में केवल कुल 5000 रूपए है। ''धनादेश तैयार रखो'' व्यापारी कह सकता है, पर मुझसे पूछे बिना धनादेश का वितरण मत करना। फिर व्यापारी बैंक को फोन करता है, कि उसके लिए 30,000 रूपये का कर्ज का प्रबंध कर दे फिर वह अपने खजांची से कहता है ''जब तुम धनादेश को वितरण कर सकते हो। क्योंकि बैंक के पास इस माह के तनख्वाह से अधिक रकम है। फिलहाल पहला कर्मचारी को तनख्वाह धनादेश लेने के लिए बुलाया जाता है। खजांची कहता है, माफ करना, तुम तनख्वाह का धनादेश तुरंत नहीं ले सकते हो, माह का कुल तनख्वाह 20,000 रूपए बनता है और बैंक में केलव 5000 रूपए जमा है। यहां आप खाते को देखकर स्थिति को जान सकते हैं, जिसको खजांची करने में असमर्थता दिखा रहा है? वह उसका गणना करने में असफल हो रहा है कि तनख्वाह से अधिक रकम का प्रबंध किया जा चुका है, इस तथ्य से अनजान है। और हां वह गणना करने में असफल है तो वह अपने नियोक्ता का निरादर करेगा और अपने को भ्रामक स्थिति में रखेगा।

कलवरी के क्रूस पर परमेश्वर ने पापियों के लिए पर्याप्त प्रबंध कर दिया है, उसने पाप की समस्या के विषय में हमेशा के लिए पूर्ण कार्य कर दिया है और हमें इस प्रकार जान लेना है। हमें परीक्षा की घड़ी

में यह जान लेना है। परमेश्वर कहता है कि विश्वासी पाप के लिए मरा हुआ है। वह हमें आश्वस्त करता है कि मसीह के मृत्यु में और हमारे उसके साथ हमारी तुल्यता में पर्याप्त प्रबंध किया जा चुका है किसी उठने वाले समस्या के लिए। इस प्रकार हमारे प्रभु यीशु मसीह के द्वारा हमें मृत्यु के राज्य से छुटकारा दिया जा चुका है अब जैसे पौलुस प्रमाणित करने जा रहा है, जिसके साथ हम भी पाप के राज्य से छुटकारा पा चुके हैं।

(2) पाप के राज्य से छुटकारा (6 : 12–23)

इस अध्याय के बचे हुए पदों में वह हमारे सामने दो आकृति द्वारा उदाहरण प्रस्तुत करता है। वह पुराने अधिश्वर के साथ तुलना करता है, पर वह पुराना अधिश्वर जिसे अब पराजित किया है, और इसे एक पुराने स्वामी के चित्र से तुलना किया गया है, पर वह पुराना स्वामी जो अब दफन किया जा चुका है।

(अ) पाप, पुराना अधिश्वर, अब हरा दिया गया है (6 : 12–14)

जब हम पाप के राज्य से हमारे छुटकारे के विषय में सोंचते हैं तो हम तीन सिद्धांतों को पाते हैं (1) पहला है जिसमें भौतिक सिद्धांत संलग्न है। ''इसलिए पाप तुम्हारे नश्वर शरीर में राज्य न करे कि तुम उसके लालसाओं के आधीन रहो।'' (पद12) पाप अपने आपको देह के अंगों के द्वारा प्रगट करता है और इसके जरिए स्वाभाविक मनुष्य और शारीरिक मनुष्य दोनों राज्य करते हैं यद्यपि इस प्रकार के क्रियाकलाप की स्थिति विश्वासी का स्वभाव नहीं है, क्योंकि इसके देह को पाप के राज्य से स्वतंत्र किया गया है। विजय के आनंद को उठाने के लिए विश्वासी को परमेश्वर के साथ सहयोग करना चाहिए और निश्चय करना चाहिए कि परमेश्वर के अनुग्रह से पाप राज्य न करे। पौलुस इस बात को कुरिन्थियों की पत्री में इस प्रकार दर्शाता है ''हरेक मनुष्य सब प्रकार का संयम करता है तो वे एक मुरझाने वाले मुकुट के लिए यह सब करते हैं, परंतु हम तो उस मुकुट के लिए करते हैं, जो मुरझाने का नहीं। इसलिए मैं तो इसी रीति से दौड़ता हूं, परंतु लक्ष्यहीन नहीं, मैं भी इसी रीति से मुक्कों से लड़ता हूं परंतु उसके समान नहीं, जो हवा पीटता हुआ लड़ता है। परंतु मैं अपनी देह को मारता कूटता और वश में लाता हूं ऐसा न हो कि औरों को प्रचार करके मैं आप ही किसी रीति से निकम्मा ठहरू। एक पहलवान अपने देह को अपनी इच्छा के आधीन करता है कि युद्ध लड़े और दौड़े, क्या विश्वासी को पाप के उपर विजय पाने के लिए कुछ कम कार्य करना चाहिए ?

(2) शारीरिक सिद्धांत के साथ नैतिक सिद्धांत संबंधित है– ''और न अपने अंगों को अधर्म का हथियार होने के लिए सौंपो (पद 13अ) इस अध्याय को संक्षिप्त में करने के लिए तीन महान शब्द है कि विजय के सिद्धांत के रहस्य को व्यवहारिक जीवन में लाए, ये शब्द है ''जानना'', ''समझना'' और समर्पित करना पौलुस हमें बताता है कि हम अपने आपको पाप को न सौंपे। हमें अपनी आखों को वासना से देखने लिए अनुमति नहीं देना चाहिए, अपने कानों को गपशप के लिए, अपने जीभों को गंदी और असत्य बातों के लिए

अनुमति नहीं देना चाहिए। यहां पर इस विषय में इच्छा का कार्य होना चाहिए क्योंकि एक नैतिक प्रतिनिधि रूप में हम अपने देह के अंगों को उपयोग करने के लिए जिम्मेदार हैं।

(3) तब एक आत्मिक सिद्धांत संलग्न है, एक दृढ़ संकल्प करना काफी नहीं है कि अंग पाप को नहीं सौंपेगे। बहुत लोगों ने जीने के इस तरीके को थोड़ा या बिना सफलता के उपयोग में लाया है, क्योंकि विजय हमारे नैतिक संकल्प पर पूर्ण आधारित नहीं होता है पर आत्मिक सिद्धांत पर आधारित रहता है। ध्यान दें कि सिद्धांत को व्यवहार में बदलने के लिए तीन कदम संलग्न रहता है। हमें परेश्वर की इच्छा में समर्पित होना चाहिए ''पर अपने आपको जी उठा हुआ जानकर परमेश्वर को सौंपो और अपने अंगों को धर्म के हथियार होने के लिए परमेश्वर को सौंपो (13 ब)। जब हम अपने आपको परमेश्वर को सौंपेगे कि हमें विजय मिले। थोड़े समय के लिए हम याकूब के पत्री का बहुत गलत उद्धृत पद पर कुछ क्षण मनन करें : शैतान का सामना करो और वह तुम्हारे सामने से भाग निकलेगा (याकूब 4 : 7) इस प्रकार इस पद को उद्धृत करना यह पद इस प्रकार नहीं है। शैतान हमारे सामने से भाग नहीं निकलेगा, वह हमसे थोड़ा भी नहीं डरता है, तब वह हमारे लिए बराबरी का जोड़ ढूढने चला जाएगा। यह सचमुच सिखाता है कि ''अपने आपको परमेश्वर के अधीन करो, शैतान का सामना करो, वह तुम्हारे सामने से भाग निकलेगा।'' यह बहुत भिन्न है, यह तब जब हम सौंपते हैं जब हम परमेश्वर के आधीन हो जाते हैं, तब हम उसके सामर्थ उण्डेले जाने के लिए द्वार को पूरा खोल देते हैं। हर विश्वासी में उसका आत्मा निवासरत् है, पर जब हम उसके आधीन होते हैं तब वह हमें पाप के जंजीर से स्वतंत्र करता है।

यहां पर एक बहुत महत्वपूर्ण सिद्धांत है। हम इस प्रकार बनाये गये है कि जब हमारी परीक्षा होती है तो हमें समपर्ण करना चाहिए, पर यह ध्यान दे कि हमें परीक्षा को समर्पण नहीं करना है पर बदले में परमेश्वर को समर्पण करना है। और इस सौंपे जाने के कार्य में पाप के सारे सामर्थ पर पूर्ण विजय मिलेगी।

और दूसरा आत्मिक सिद्धांत है कि परमेश्वर के वचन को थामे रहें। क्योंकि पाप तुम पर राज्य नहीं करेगा। (पद 14 अ) यह परमेश्वर का वचन है – ''और पाप तुम पर राज्य नहीं करेगा। आप इसका दृढ़ समझ रखे। परमेश्वर की मौलिक योजना थी कि मनुष्य के पास अधिकार हो (उत्त 1:26) परंतु जब उसने अपने सर्व सत्ता को अदन के बाग में शैतान को समर्पित कर दिया, तो उसने अपने आपको शैतान के गुलामी में दे दिया यद्यपि उसके बाद प्रभु यीशु मसीह मनुष्य के कार्यो के क्षेत्र में प्रवेश किया और कूस पर हमारे पुराने शत्रु को पकड़कर लाया और हमारे खोये अधिकार को वापस किया ..... ''मैं तुमसे सच सच कहता हूं'' प्रभु यीशु ने कहा जो कोई पाप करता है वह पाप का दास है'' .... इसलिए यदि पुत्र तुम्हें स्वतंत्र करेगा, तो तुम सचमुच स्वतंत्र हो जाओगे। युहन्ना 8:34, 36 । हमें उसके इस स्पष्ट वचन को थामे रहना है। ''तुम पर पाप की प्रभुता नहीं होगी।''

पाप, पुराना अधिश्वर अब दफन हो चुका है, इस सत्य को महसूस करने के लिए एक और कदम है। हमें परमेश्वर के रास्ते पर चलना है। क्योंकि तुम व्यवस्था के आधीन नहीं पर अनुग्रह के आधीनहो (पद 14 ब)। अन्य शब्दों में विश्वासी छुटकारे के लिए लगातार विजय पाना उसके स्वयं के प्रयास पर निर्भर नहीं करता परंतु परमेष्वर के अनुग्रह के बहुतायत से आपूर्ती पर निर्भर करता है, जो हर आवष्यकता के लिए पर्याप्त है।

आ.व्यवस्था और प्राकृतिक आदमी(7:7–13)

यदि आत्मिक मनुष्य व्यवस्था के द्वारा छुड़ाया गया है,जो प्राकृतिक मनुष्य व्यवस्था के द्वारा दोषी ठहरा। इस बात पर अत्यधिक बहस की गयी है कि पौलुस इस खण्ड में एक पराजित सन्त के अनुभवों केा प्रस्तुत कर रहा है या भूलताल में एक दण्डाज्ञा पाये हुए पापी के अनुभवों को। क्योंकि यह वाक्य भूतकाल को प्रस्तुत कर रहा है इसलिए यह अनुमान लगाया जा सकता है किवह अपने प्रभु में आने से पहले के दिनों के बारे में चर्चा कर रहा है। पद 14–25 में क्रिया वर्तमान काल में है और पौलुस के वर्तमान विश्वास में आने के बाद के अनुभवों के बारे में बताते हैं। उसके प्रभु को स्वीकार करने से पहले वह व्यवस्था के व्यर्थ कामों में उद्धार को खोज रहा था। व्यवस्था ने हमेशा उसे दोषी ठहराया। फिर उसके जीवन में एक ऐसा समय आया जहां पर वह अपने आप और अपने सारे प्रयासों से हार गया, और सम्पूर्ण रूप में अपने आप को मसीह के समर्पित कर दिया। इन्ही अनुभवों केा वह पद 7–13 वचन में बयान करता है। जो तस्वीर वह पद 14–25 के अन्दर बनाने का प्रयास करता है वह –एक विश्वासी होने के नाते स्पष्ट है, कि यदि वह विजय को प्राप्त करना चाहता है तो उसे अपने प्रयासों भरोसे को छोड़ देना होगा।

एक प्राकृतिक और एक पापी मनुष्य के रूप में,उसने जाना कि, व्यवस्था छुपे हुए पाप के स्वभाव को प्रगट करती है और वह भी दो तरीकों से। सवप्रर्थम वह उसके पापमय स्वभाव को प्रगट करते है। ''तो हम क्या कहें? क्या व्यवस्था पाप है? कदापि नहीं !वरन बिना व्यवस्था के मैं पाप को नहीं पहचानताः व्यवस्था यदि न कहती,कि लालच मत तो मैं लालच को न जानता। मूसा की व्यवस्था का सबसे बड़ा काम पाप को प्रगट करना है। मनुष्य पाप को ढॉपना, उसके प्रति बहाना बनाना, और उसके प्रति छल करना चाहता है। वे उसके आदरयोग्य नाम देते हैं। एक व्यक्ति पियक्कड़ नहीं, मदिरा पान करने वाला है; मदिरापान करना कोई पाप नहीं है,वह एक बिमारी है। एक व्यक्ति कोई झूठा नहीं,वह एक छलकपट करने वाला,या फिर जिस प्रकार से किसी ने सुझावित किया है कि''वह रोमांचक कल्पनाओं के साथ एक बहिर्मुखी''है! मनुष्य लोगों के बारे में ऐसे बोलता है जैसे कि वह उलझा,डरा हुआ या फिर रोका गया है। वे एक किताब के बारे में ऐसे बात करते हैं जैसे वह अतिसाहसिक हो;परमेश्वर उसे कूड़ा कहेगा। वे कहेंगे कि उस व्यक्ति का

''प्रेम प्रसंग'' चल रहा है; परमेश्वर कहता है कि उसने व्यभिचार किया है। यह एक खेल है जो मनुष्य खेलता है और यह मौत का और अति भयानक खेल है। यह एक उच्च कोटि की मूर्खता होगी यदि कोई व्यक्ति एक दराज से एक बोलत उतारकर उसका बेकार दिखने वाला लेबल जिसमें खोपड़ी और हडिडयों का निशान बना था और ''जहर''लिखा था हटा देता है,और उसके ऊपर एक बहुत ही आकर्षक बिल्ला लगा देता है जिसमें लिखा होता है ''पिपरमेन्ट का रस''। यह केवल बोतल के अन्तर्वस्तु को छुपायेगा और जो उसे नहीं पहचान पायेगें उन्हे पीने और फिर मरने के लिए आमन्त्रित करेगा; फिर भी आधुनिक मनुष्य इन्ही बातों को अभ्यास करता है ज बवह पाप की गन्दगी से भरी सच्चाईयों का सामना करता है। व्यवस्था का काम पाप को उसका उचित नाम देना और जिस लिये वह किया गया उस स्थिती को उसे प्रगट करना है। पौलुस कहता है'' वरन बिना व्यवस्था के मैं पाप को नहीं पहिचानता! व्यवस्था यदि न कहती,कि लालच मत कर तो मैं लालच को न जानता।''शायद एक फरीसी के रूप में उसके प्रभु को ग्रहण न किये हुए दिनों में पौलुस को परमेश्वर की दस आज्ञाओं में से प्रथम नौ को मानने में थोड़ी ही परेशानी रही होगी। क्योंकि वह कह सका था कि'' मेरी जवानी के दिनों से ही मैं उनकी मानता आया हूँ।'' परन्तु दसवी आज्ञा को सम्बन्ध अन्दरूनी इच्छाओं से है, और पौलुस यह भली प्रकार से जानता था कि उसकी अन्दरूरी इच्छाऐ ज्यादातर गलत थी। अगर कामों में नहीं तौभी अपनी सोच में पापी ठहरा था और व्यवस्था के श्राप का हकदार हो गया था।

व्यवस्था ने उसके पापमय स्वभाव को प्रगट करने से भी अधिक किया; उसने उसके पापमय स्वभाव को पुर्नजीवित किया। ''परन्तु पाप ने अवसर पाकर आज्ञा के द्वारा मुझ में सब प्रकार का लालच उत्पन्न किया,क्योंकि बिना व्यवस्था पाप मुर्दा है। मैं तो व्यवस्था बिना पहले जीवित था,परन्तु अब आज्ञा आई तो पाप जी गया,और मैं मर गया(पद 8–9)। व्यवस्था के आने से पहले दोष लगाने वाले विवेक से आजादी थी, जो परमेश्वर से अलग होने पर भी झूठी शान्ति की दिलासा देती थी। लेकिन व्यवस्था के आने से सबकुछ बदल गया। उसकी सीधी धार मानवीय प्रवृति की घूर्तता को प्रकट करती है और वह इससे भी आगे बढ़कर मनुष्य के सारे गुप्त विद्रोहों का खुलासा करने का प्रयास करती है। जिस प्रकार से सूरज की रौशनी खाली जमीन पर पड़कर भूमि को गर्म कर देती है,जिससे छुपे हुए बीजों से जीवन फूट निकलता है, और वह खाली भूमि अनाज से भर जाती है, ठीक उसी प्रकार,परमेश्वर की व्यवस्था भी मनुष्य के ह्रदय पर पड़कर पाप के गुप्त बीज को अंकुरित होकर बाहर निकालती है। इसकी सच्चाई पर्याप्त मात्रा में प्रमाणिक है। क्या यह चेतावनी कि ''हरी धास से बचकर चले'' क्या हमारे मन में उतावनी उत्पन्न नहीं करता, कि चलो कम से कम मना किये गये स्थान में पैर रखकर तो देखें कि क्या होता है? क्या गति सीमा का चिन्ह 'गति सीमा 20 मील प्रतिधण्टा '' हमारे मन में जिज्ञासा को उत्पन्न नहीं करता कि हम '30 मील प्रतिधण्टा गाड़ी चला कर देखें? क्या यह चेतावनी ''कि रडार के द्वारा गति की नापा जा रहा है'' हमारे भीतर एक

गुस्से की भावना को उत्पन्न नहीं करता है कि अब हम मजाक में भी नियमों को सफलता पूर्वक नहीं तोड़ सकते।? व्यवस्था पाप के छुपे हुए स्वभाव को बेनकाब करती है।

एक धनी जमीन के मालिक ने एक बार अपने माली को आदम को जंगली धांस और झाड़ियों के लिए जिससे भूमि खराब हो जाती है और अपने भौहों को पसीने से भीगने के लिए कोसते हुए देखा। हाय आदम! वह माली दिन की भरी धूप में काम करते हुए चिल्लाया। उस धनी व्यक्ति ने उससे उसकी बात को समझाने के लिए कहा। माली ने कहा ठीक है,''यह सब आदम की गलती है।यदि आदम ने पाप नहीं किया होता तो मुझे बीमार करने के लिए यह झाड़ी न होती, क्या यह सच नहीं है? उसके मालिक ने कहा कि अगर वह माली भी आदम की जगह पर होता तो शायद वही करता, परन्तु इस बात पर मानने को उस मजदूर ने मानने से इनकार कर दिया।

ठीक कहा,श्रीमान,'' आज शाम का आप भोजन करने के लिए मेरे घर आईये,और आगे की बात हम वहां करेगे।''बाद में दिन के समय में ही माली वहॉ पहुच गया,और उसे भोजन कक्ष तक ले जाया गया जहां पर एक बड़ी मेज बिछी हुई थी और उस हर किस्म का भोजन रखा हुआ था जो कोई भूखा व्यक्ति खाना पसन्द करेगा। सिर्फ एक चीज को छोड़कर, सारे व्यंजन खुले थे, सारा खाना गर्मागरम था और उनकी सुगन्धित और मुॅह में पानी लाने वाली खुशबू से वह स्थान महक रहा था। मेज़ के बिचाबीच एक बड़ा बर्तन ढक्कन से ढका हुआ रखा था।

माली और उसका मालिक खाने के लिए बस बैठने ही वाले थे कि उसका एक सेवक उसके पास फोन लेकर आया। मालिक ने अपने मेहमान से कहा 'क्या आप मुझ कुछ समय के लिए क्षमा करेगें''मैं चन्द मिनटों में वापस आता हूॅ। आप भोजन करना क्यों नहीं शुरू करते? आप उस ढकी हुई भोजन वस्तु को छोड़कर सब कुछ खा सकते हैं। यह भोजन वस्तु मेरे लिए आरक्षित की गयी है और मैं नहीं चाहूॅगा कि आप उसे छुएं भी। यह मेरी आज्ञा है।

बहुत देर नहीं हुई थी ि कवह माली उस भरी मेज पर से खाना खाते खाते उस ढकी हुई रहस्यमय प्लेट के लिए जिज्ञासु हो गया । उसने सोचा ''उसके भीतर तो जरूर कोई गजब का पकवान बना होगा''। पता नहीं क्यों मुझे उसे खाने के लिए मना कर दिया। मैं तो जरूर थोड़ा सा उसमें से चखकर देखता हूॅ।

मालिक को वापस आने में काफी समय लग रहा था। और आखिरकार वह माली अपनी जिज्ञासा को और ज्यादा नियन्त्रित नहीं कर सका। मेज के पास जाकर उसने उस बर्तन के ढक्कन को कम से कम यह देखने के लिए उठाया, कि उसमे क्या रखा है। उसने ढक्कन को पकड़कर खींचा और सैकड़ों पख ईधर उधर मेज के चारों ओर उड़ने लगे। और उसी समय वह धनी व्यक्ति आ गया। और उसने मुस्कुराते हुए कहा! ''हाय आदम''।

एक स्वाभाविक मनुष्य के समान,पौलुस पाता है कि व्यवस्था पाप के छुपे हुए स्वभाव को प्रगट करता है और वह इस काम को फिर से दो तरीकों से करता है। सर्वप्रथम वह पाप की गम्भीरता को प्रगट करता है। ''और वही आज्ञा जो जीवन के लिए थी,मेरे लिये मृत्यु का कारण ठहरी।क्योंकि पाप ने अवसर पाकर आज्ञा के द्वारा मुझे बहकाया और उसी के द्वारा मुझे मार भी डाला(पद10–11)।' क्योंकि व्यवस्था के अन्दर निर्देश और दण्ड दोनों पाये जाते है। उसके भीतर पाप को प्रगट करने की सामर्थ्य तो लेकिन पापों को दूर करने की नहीं,यहॉ तक कि मूसा की प्रणाली का बलिदान भी एक छाया मात्र था। व्यवस्था हमें आज्ञाओं को रखने के कारण कोई प्रतिफल नहीं देती है; परन्तु वह हमें व्यवस्था तोड़ने पर दण्ड जरूर देती है। कौन ऐसा व्यक्ति है जिसे किसी ट्रैफिक पुलिस वाले ने रोक कर कहा हो कि वह कम से कम एक बार पुलिस स्टेशन में जाकर तमीज से गाड़ी चलाने के लिए,गति का ख्याल रखने और निर्देशित स्थान में सही से रोकने के लिए ईनाम पाने के लिए बताये। यह व्यवस्था का नैतिक कार्य नहीं है कि जो लोग नियम के अनुसार चलते हैं, वे उन्हे बधाई दे बल्कि, उनका काम केवल नियम को उल्लंधन करने वालों को पकड़ना,उन पर दोष लगान और उन्हे दण्डित करना है। परमश्वेर की व्यवस्था गम्भीरता से दण्ड देती है। पुराने नियम का ध्यानपूर्वक अध्ययन बताता है कि दस आज्ञाओं के साथ ही जुड़ी थी या फिर उसके तोड़े जाने के साथ। परमेश्वर की निगाहों में पाप इतना गम्भीर मामला है। इसका परिणाम इस जीवन में मृत्यु और आने वाले जीवन अनन्त दण्ड होता है।

मान लीजिये कि एक गर्म मिजाज जी आई किसी संगी सैनिक को बेरिक रूम में मारने वाला था। अतः शान्ति को भंग करने के जुर्म में उसे शायद कुछ दिन उसे कैद में रहना पड़े। यदि वह किसी सार्जेन्ट को प्रहार कर देता तो उसकी सजा कम से कम तीन हफ्ते की कैद होती, और अगर यह प्रहार किसी अधिकारी पर होता तो सजा लगभग तीन महीने की होती। परन्तु यदि हम युनाईटेड स्टेट के राष्ट्रपति पर प्रहार करने का प्रयास करते तो उसके अंग रक्षक उसे उसी समय मौत के घाट उतार देते। इन सारे मामलों में किया गया काम तो समान ही होता– किसी व्यक्ति पर प्रहार करना। परन्तु जैसे जैसे प्रहार किये जाने वाले लोगों की गरिमा और उनका रैंक बढ़ता चला गया, उसी तरह से उनके जुर्म करने की गम्भीरता का अनुपात भी बढ़ता चला गया। अब,सारे ही पाप परमेश्वर के विमुख हैं(भजन 51:4,लूका 15:18,21) और इसलिए यह एक ऐसा गम्भीर कार्य है जिसका परिणाम अनन्त मृत्यु है। व्यवस्था का एक मुख्य कार्य पाप की गम्भीरता को प्रगट करना है।

पौलुस को यही भी पता चला कि व्यवस्था छुपे हुए पापों के स्वभाव को प्रगट करने के दौरान न केवल उसकी गम्भीरता को प्रगट करता है परन्तु उसकी पापमयता को भी प्रगट करता है। ''इसलिए व्यवस्था पवित्र है,और आज्ञा भी अच्छी है। तो क्या वह जो अच्छी थी,मेरे लिए मृत्यु ठहरी? कदापि नही!परन्तु पाप उस अच्ठी वस्तु के द्वारा मेरे लिये मृत्यु का उत्पन्न करने वाला हुआ कि उसका पाप हाना प्रगट हो,और

आज्ञा के द्वारा पाप बहुत ही पापमय ठहरे।(पद 12–13)।'' पुराने नियम में पाप के लिए करीब पन्द्रह इब्रानी शब्द हैं, जिनके भीतर मनुष्य द्वारा परमेश्वर के खिलाफ किये जाने वाले सारे गलत स्वभाव समा जाते हैं। इसके अलावा नये नियम में यूनानी भाषा में भी बहुत से शब्द हैं, जो पाप से सम्बन्धित सारे विचारों जैसे,दुष्टता,बुराई,अईश्वरीयता,अनाज्ञाकारिता,अपराध,अतिक्रमण,गलती या द्वेष इत्यादि। दोनों ही नियमों में एक विशाल शब्दकोष उन सारे पहलुओं को प्रगट करता है जो परमेश्वर पाप के बारे में सोचता है। यह अति पापमय है। व्यवस्था के द्वारा मांग किया गया पवित्र और उच्च व्यवहार का स्तर पापी को खुला, खोया हुआ और सुरक्षाहीन छोड़ देता है। व्यवस्था किसी का उद्धार नहीं कर सकती – यह अनुग्रह का परमअधिकार है। पौलुस ने एक पापी के स्वरूप में यह पाया कि उसके कितने भी उत्तम प्रयास उसके लिए उद्धार को हासिल नहीं कर सकते हैं। उसका सामना एक व्यवस्था से हुआ था जो'' पवित्र,धर्मी और भली थी'' एक ऊँचा शिखर जिस पर वह कभी नहीं चढ़ सका। बल्कि उसकी आग और बिजली ने उसके मन को आतंकित कर दिया।

इ. व्यवस्था और शारिरिक मनुष्य (7:14–25)

यदि आत्मिक व्यक्ति व्यवस्था के द्वारा छुटकारा पाता है और प्राकृतिक मनुष्य उस व्यवस्था के द्वारा दोषी ठहरता है,उसी व्यवस्था से शारिरिक मनुष्य पराजय को पाता है। जो व्यवस्था मॉग करती है और जो शरीर मुहैय्या करा सकता है उसके बीच में एक गहरी खाई है।''हम जानते हैं कि व्यवस्था ता आत्मिक है,परन्तु मैं शारिरिक और पाप के हाथ बिका हुआ हूँ (पद 14)।शब्द बंतदंस अर्थात शारिरिक किसी उद्धारहीन व्यक्ति के बारे में बताने के लिए इस्तेमाल नहीं किया गया है,परन्तु एक मसीही को दर्शाने के लिए जो उद्धार पा चुका है परन्तु वह अभी भी शरीर की बन्धुआई में हैं। व्यवस्था आत्मिक है। व्यवस्था और उस व्यक्ति के बीच में जो शारिरिक है के बीच बहुत अधिक नैतिक समायोजन का अभाव होता है। पतरस पानी पर अपने चलने के प्रयास में डूबने लगा, क्योकि वह मनुष्य पर शक करने का आदि हो चुका था। शारिरिक मसीही उस तरह से व्यवहार कर ही नहीं सकता जिस तरह से परमेश्वर उससे अपेक्षा करता है उसका साधारण सा कारण है, िकवह गुलामों के बाजार से निकली हुई भाषा का इस्तेमाल करने वाला बन गया है, अर्थात ''पाप के हाथों बिक गया है।''

ध्यान देने के लिए अगली बात यह है कि,कितनी सावधानी के साथ इस खाई का निरिक्षण किया गया है। तीन बार दोहराये गये शब्द ''क्योंकि'' पर ध्यान दें। यह खाई सबसे पहले विरोधात्मक क्षमताओं के क्षेत्र में प्रगट होती है। ''जो मैं करता हूँ उसको नहीं जानता; क्योंकि जो मैं चाहता हूँ वह नहीं किया करता, परन्तु जिससे मुझे धृणा आती है वही करता हूँ, तो मैं मान लेता हूँ कि व्यवस्था भली है। यहॉ पर क्षमताओं का संधर्ष है जो एक बड़ी सच्चाई है। हर एक सच्चे विश्वासी के दो स्वभाव हैं। उसके पास एक पुराना स्वभाव है,जो कि आदम का स्वभाव है,ऐसा स्वभाव जिसके साथ वह पैदा हुआ था, जो कुछ भी ठीक नहीं

कर सकता(पद 18 को देखें); और उसके पास एक नया स्वभाव भी है,जो परमेश्वर का स्वभाव है,जो कुछ भी गलत नहीं कर सकता(1यूहन्ना 3:9)। ये दोनों स्वभाव लगातार आपस में लड़ते रहते हैं(गला0 5:17),जिसके सरल से कारण है कि वे परस्पर विरोधी और मेल मिलाप कराने योग्य नहीं हैं।

यह खाई ज्यादातर संधर्ष के उददेश्य से विद्यमान होती है। '' क्योंकि मैं जानता हूँ कि मुझ में अर्थात मेरे शरीर में कोई अच्छी वस्तु वास नही करती। इच्छा तो मुझमें है परन्तु भले काम मुझ से बन नहीं पड़ते। क्योंकि जिस अच्छे काम की मैं इच्छा करता हूँ,वह तो नहीं करता,परन्तु जिस बुराई की इच्छा नहीं करता, वही किया करता हूँ। इच्छा तो मुझमे बहुत है परन्तु भले काम मुझसे बन नहीं पड़ते। क्योंकि जिस अच्छे काम की मैं इच्छा करता हूँ, वह तो नहीं करता, परन्तु जिस बुराई की इच्छा मैं नहीं करता, वही किया करता हूँ। अतः यदि मैं वही करता हूँ जिस की इच्छा नहीं करता, तो उसका करनेवाला मैं न रहा, परन्तु पाप जो मुझ में बसा हुआ है(पद 18–20)। इस पत्री के एक प्रारम्भिक भाग में,पौलुस पहले ही उस तस्वीर को बना चुका है कि ''कोई भी भलाई करने वाला नहीं है,एक भी नहीं। जिन बातों के विषय में मनुष्य प्रशंसा करता है कि ''अच्छा'' है वही कतई अच्छा नहीं है,क्योंकि उस जीवन से निकलने वाली कोई भी चीज सच में अच्छी नहीं हो सकती जो परमेश्वर से अलग हो। एक शारिरिक मसीही अपने आप को हमेशा चौराहे पर खड़ा हुआ पाता है, वह हमेशा ही एक ही समय पर जीवन की दो गुणवत्ताओं को चाहता है।

आगे यह गुफा हम विरोधी सिद्धान्तों के बीच पाते हैं। ''इस प्रकार मैं यह व्यवस्था पाता हूँ कि जब भलाई करने की इच्छा करता हूँ तो बुराई मेरे पास आती है। क्योकि मै भीतरी मनुष्यत्व से तो परमेश्वर की व्यवस्था से बहुत प्रसन्न रहता हूँ। परन्तु मुझे अपने अंगों में दुसरे प्रकार की व्यवस्था दिखाई पड़ती है जो मेरी बुद्धि की व्यवस्था से लड़ती है। और मुझे पाप की व्यवस्था के बन्धन में डालती है जो मेरे अंगों में है। मैं कैसा अभागा मनुष्य हूँ!मुझे इस मृत्यु की देह से कौन छुड़ायेगा(पद 21:24)। पौलुस यहां पर दो आत्मिक व्यवस्थाओं या अधिकारों कार्य करते हुए देखता है। यहॉ पर है जिसे हम सिनै की व्यवस्था,परमेश्वर की व्यवस्था कह सकते हैं। यह व्यवस्था पवित्र,धर्मी और भली है,यह उसक स्वर्ग की ओर ले जाती है। यह उससे व्यवहार के स्तर में सिद्धता को चाहता है,क्योंकि सिद्धता परमेश्वर की सबसे छोटी मांग है जो खुद उसकी पवित्रता के साथ में लगातार बनी रहे।

फिर उसके बाद एक और विपरीत व्यवस्था है जिसे पौलुस पाप की व्यवस्था कहता है। जब आदम अदन की बाटिका में पाप में गिर गया, उसने सम्पूर्ण मानव जाति को इस व्यवस्था के अधीन लाकर खड़ा कर दिया । पॉलुस इसको ''पाप और मृत्यु की व्यवस्था भी कहता है(8:2)। मानवीय व्यवहार सम्बन्धी कोई भी विज्ञान जो पाप की व्यवस्था को नजरअन्दाज करता है, अवश्य ही आशाहीन सत्य से दूर भटकता रहेगा। फिर भी हमारे स्कूल और विश्वविद्यालय हर एक उस व्यवस्था की शिक्षा देते है जो विज्ञान जानता है,सिवाय

पाप की व्यवस्था के । अतः वह तथ्य बना रहता है,कि यह पाप की व्यवस्था है जो वर्णन करती है कि जो लोग करते हैं तो वे क्यों करते हैं। यह मनुष्य के सारी व्यवहारिक समस्याओं की जड़ है। पौलुस महसूस करता है कि जब सिनै की व्यवस्था उसे स्वर्ग की और ले जाती है तो, पाप की व्यवस्था उसे नरक की ओर खीचती है। यह नैतिक क्षेत्र में ठीक उसी प्रकार काम करती है जैसे शारिरिक क्षेत्र में गुरूत्वाकषर्ण बल कार्य करता है। वह नीचे की ओर खींचता है।

पौलुस आगे उन दो सिद्धान्तों के बारे में चर्चा करता है जो उसे अपने भीतर कार्य करती हुई नजर आती हैं। पहले वह है जिसे वह *मन की व्यवस्था कहता है।* यह व्यवस्था व्यवहारिक तौर पर पद 22 में पायी जाने वाली परमेश्वर की व्यवस्था से सम्बधित है। किसी भी मामले में यह परमेश्वर की व्यवस्था का पक्ष लेती है, क्योंकि पौलुस कहता है कि,'' क्योंकि मैं बुद्धि से तो परमेश्वर की व्यवस्था का सेवन करता हूॅ(पद 25)।दूसरे शब्दों में उसका भीतरी मनुष्य परमेश्वर की व्यवस्था से प्रसन्न रहता है। हर एक सच्चा विश्वासी जानता है कि पौलुस यहां पर क्या बात कर रहा है। हम परमेश्वर की व्यवस्था केा बुद्धि से सहमति प्रदान करते हैं। हम पहाड़ी उपदेशों को पड़ते हैं और कहते हैं कि'' हॉ अवश्य ही मुझे इस प्रकार का जीवन जीना चाहिये।'' हम यीशु के जीवन के बारे में पढ़ते हैं और कहते हैं,''हॉ,मैं यीशु के समान बनना पसन्द करूॅगा।'' जहां तक आचरण का सवाल आता है दिमागी तौर पर हर एक विश्वासी परमेश्वर की तरफ होता है।

परन्तु यहां पर एक विपरीत व्यवस्था है जिसे पौलुस मेर शरीर के अंगों की व्यवस्था कहता है(पद 23)। यह व्यवस्था पाप की व्यवस्था के साथ में जुड़ी हुई नज़र आती है। बल्कि पौलुस कहता है कि ''मेरे अंगों मे पाप की व्यवस्था है(पद 23)। यह पाप की व्यवस्था विश्वासियों की देह में प्रवेश कर रही है जिसके कारण न चाहते हुए भी आखें अभिलाषा पूर्ण ढंग से देखती हैं, जीभ से चुगली होती है,हमारे कान उन बातों को सुनने के लिए भागते हैं जो अशुद्ध और अनुचित होती हैं।

जो व्यवस्था मॉग करती है और जो हमारा शरीर प्रयोजन कर सकता है उनके बीच की खाई वास्तव में बहुत बड़ी है। क्योकि विपरीत क्षमताओं,उददेश्यों,ओर सिद्धान्तों के साथ में विश्वासी खिन्न हो जाता है। वह चिल्लाता है ''मैं कैसा अभागा मनुष्य हूॅ, मुझे इस मृत्यु की देह से कौन छुड़ायेगा।

कुछ लोग सामान्यमुनान लगाना पसन्द करते है। कुछ विशेष अपराधियो को रोमियों के द्वारा अलग प्रकार की बर्बरता के साथ में दण्ड दिया जाता था। यदि किसी व्यक्ति ने कभी किसी का कत्ल कर दिया हो तो, उसे हाथ पॉव से बॉधकर, उसके द्वारा मारे गये व्यक्ति के साथ में भूमध्यसागर की गर्मी में खुले सूरज के नीचे छोड़ दिया जाता था। जैसे जैसे वह लाश सड़ती चली जाती थी, उसकी मृत्यु जीवित व्यक्ति के जीवन को खा जाती है, और वह भी खत्म हो जाता है, यह बहुत ही कड़ी सजा है ''जिसे मौत के हवाले करना'' कहते हैं। ''पौलुस देखता है कि शारिरिक व्यक्ति पुराने स्वभाव से जकड़ा होता है और सच में

एक दुर्दशा में पड़ा हुआ व्यक्ति है। मान लीजिये कि किसी जीव वैज्ञानिक को यह लक्ष्य दे दिया जाये कि वह एक मधुमक्खी में एक परीक्षण को करके उसकी बढ़ती हुई अवस्था में उसके भीतर मकड़े के लक्षण को प्रवेश करा दे, परन्तु वह इस कार्य को कुद इस तरह से करे जिससे वे दोनों मिलकर एक जीव बन जाये और फिर बड़ा हो। यह मिश्रण कितना अजीब होगा। उस जीव का एक हिस्सा तो आकाश की रौशनी और उसके खजाने के लिए तरसेगा,जबकि दूसरा अन्धकार की अभिलाषा करेगा और खून का प्यासा होगा। इस प्रकार के जीव के साथ में क्या किया जा सकता है? केवल उसका अन्त करने के अलावा कुछ नहीं।एक तरीके से देखा जाये,तो शैतान ने अदन की बाटिका में दुष्ट तरीके से मानव जाति के भीतर इस शल्यचिकित्सा को कर डालां। अगर शब्दों में कहें तो उसने अपने व्यक्तित्व को उनके भीतर रूपान्तरित कर दिया, और इस मिलाप का परिणाम ''शरीर'' हुआ। परमश्वेर इस शरीर के साथ केवल एक ही काम कर सकता है,और वह है इसे खत्म कर देना। उसने हमें मसीह की मृत्यु की समानता में प्रदर्शित करने के द्वारा यही काम किया है। हमारा शरीर पूरी तरह से भ्रष्ट है और कुछ भी ऐसा उत्पन्न नहीं कर सकता जो परमेश्वर के सम्मुख ग्रहणयोग्य हो। हमारी आशा केवल यह है कि जिस तरह से परमेश्वर ने ठहरा रखा है हम इससे बच सकें। वही रास्ता, असल में रोमियों 6 और 8 का मुख्य विषय है। आखिरी चीज इस बात पर ध्यान देना है कि किस तरह से इस खाई को पूरी तरह से भर दिया गया है। पौलुस का अन्तिम जवाब क्या है? वह आखिरकार पूरी तरह से अपने अन्त पर पहुॅच जाता है,वह उद्धार के उस रास्ते को देखता है। ''हमारे प्रभु यीशु मसीह के द्वारा परमेश्वर का धन्यवाद हो''(पद 25)। जिस प्रकार से अनन्त जीवन ''हमारे प्रभु यीशु मसीह के द्वारा है' अतः मृत्यु से बचने का काम भी उसके द्वारा है। क्रूस पर प्रभु यीशु मसीह ने न केवल पाप की समस्या के साथ बल्कि शैतान की समस्या के साथ भी प्रभावशाली ढंग से निपटारा किया, वरन उसके साथ अहम की समस्सा से भी छुटकारा दिया। अगले अध्याय में पौलुस दर्शाता है कि कैसे उस यह विजय का ,जिसका वर्णन हमने 6 और 7 अध्याय में देखा है, अनुभव किया जा सकता है।

विजय को अनुभव करने का तरीका

8:1—39

प्प नयी व्यवस्था (8:1—4)

अ. पाप के लिए कोई दोष नहीं(8:1)

आ.पाप के द्वारा कोई नियन्त्रण नहीं(8:2)

इ.पाप की कोई नियमितता नही (8:3—4)

प्प्प नया परमेश्वर (8:5—13)

अ.पवित्र आत्मा मनों को नियन्त्रित करता है(8:5—7)

आ.पवित्र आत्मा उददेश्यों को नियन्त्रित करता है (8:8–9)

इ.पवित्र आत्मा हमारे अंगों को नियन्त्रित करता है (8:10–13)

प्प्प्नया जीवन (8:14–39)

अ.वारिस होने पर अधिका जोर(8:14–27)

1.परिवार में गोद लिया जाना (8:14–17)

2.परिवार के लिये योग्य बनाना (8:18–27)

1.क्योंकि इससे सृष्टि को असर पड़ता है(8:18–22)

2.क्योंकि इससे मसीहियों को फरक पड़ता है(8:23–25)

3.क्योंकि इससे हमारे सहायक को फरक पड़ता है(8:26–27)

आ.सुरक्षा पर ज़ोर (8:28–39)

1.विश्वासी पहले से ही महिमा के लिए नियुक्त किये गये है(8:28–30)

2.विश्वासी को महिमा के लिए सुरक्षित रखा गया है(8:31–39)

1.इस आशा की बुनियाद(8:31–32)

2.इस आशा की परिपूर्णता(8:33–34)

1.हमारे शत्रु की सम्पूर्ण पराजय (8:33)

2.हमारे वकील का सिद्ध बचाव(8:34)

3.उसकी आशा का निष्कर्ष(8:35–39)

1.कोई शत्रु हमें डरा नहीं सकता(8:35–37)

2.कोई भय हमारे पास आ जा नहीं सकता(8:38–39)

पौलुस ने अभी अभी आत्मिक व्यवस्था के बारे में बताया जो शारिरिक मसीहियों को पाप और अंहम के बन्धन में बॉध कर रखती है। वह हमें ईशारा करता है कि नियमित संधर्षों से बचने का एक रास्ता ''हमारे प्रभु यीशु मसीह से होकर जाता है'। अब वह हमें बतायेगा कि कैसे वह रास्ता हमारे जीवन की व्यवहारिक सच्चाई बन सकता है।

प्प नयी व्यवस्था(8:1–4)

इस नयी व्यवस्था के अनुसार विश्वासी के लिए पापों के दण्ड और उसकी सामर्थ्य से छुटकारा है।

अ. पाप के लिए कोई दोष नहीं(8:1)

रोमियों की पुस्तक का आठवां अध्याय ''कोई दण्डआज्ञा नहीं'' से शुरू होता है और ''कोई अलग नहीं कर सकता'' से खत्म होता है। ''अतः अब जो मसीह यीशु में हैं उन पर दण्ड की आज्ञा नहीं (पद 1)।ये वचन कि''क्योंकि वे शरीर के अनुसार नहीं वरन आत्मा के अनुसार चलते हैं'' कुछ ऐसे वचन हैं जैसे

सॅन्डे कहते हैं, इस पद में अन्तर्वेशित हैं। ऐसा लगता है कि इन वचनों को पद 4 से उठाकर 1 में लाया गया है जो वहॉ पर भी पाये जाते हैं। यहॉ पर हमारी दण्ड से आजादी के लिए कोई भी शर्त नही रखी गयी है,अनुग्रह हमारे लिए बिना शर्त का जामिन बनता है।

यह भाव ''मसीह में''पौलुस का पसन्दीदा भाव है। यह पौलुस की सारी ही पत्रियों में पाया जाता है और एक नये नजरिये को प्रदान करता है जिसके द्वारा एक विश्वासी का मन परिवर्तित हो जाता है। एक दृष्टान्त के बिना ''मसीह में ''होने की धारणा को समझ पाना आसान नहीं है;और यहॉ पर पुराना नियम हमारी सहायता करता है,क्योंकि पुराने नियम का एक सबसे बड़ा काम विस्तारपूर्वक ढंग से नये नियम पर प्रकाश डालना है। शायद धीरज के साथ खोज बीन करने पर प्रत्येक बड़ी शिक्षा या नये नियम का मतलब पुराने नियम में बखान किया हुआ पाया जा सकता हैं । अतः'मसीह में' सुरक्षित होना भी कोई अपवाद नहीं है।

उदहारण के लिए मूसा के मामले को ही लें। जब जहाज के बनने का काम खत्म हो गया और ईंश्वरीय क्रोध से बचने का मार्ग प्रशस्त हो गया, लोगों के लिए आमन्त्रण भेजा गया''तू अपने सारे धराने समेत जहाज में जा''(उत्पत्ति 7:1)। अबवह नाव तक जाने का मार्ग ठहरा दिया गया, उस ''मार्ग में या उस मार्ग से बाहर' यह काफी रूचिकर है कि, ''उस मार्ग'' के लिए जो इब्रानी शब्द का इस्तेमाल किया गया है, वह दूसरी जगहों पर ''प्रायश्चित ''करके भी इस्तेमाल किया जाता है। जहाज में बचे लोगों और न्यायरूपी पानी में नाश होने वालों के बीच यह रास्ता और तख्ते रखे हुए थे। एक बार जब नूह और उसका परिवार सुरक्षित रूप में जहाज के भीतर प्रवेश कर गये तो हम पढ़ते हैं कि'परमेश्वर ने उसे भीतर बन्द कर दिया(उत्पत्ति 7:16)। यह सम्पूर्ण सुरक्षा थी। जहाज के बन जाने पर,परमेश्वर ने नूह से यह नहीं कहा था, ''अब,नूह, मैं चाहता हूॅ कि तू आठ गुलमेक ले और उन्हे जहाज के बाहर से ठोक दे। जब तक तू और तेरा परिवार उस कील को थामे रहोगे तुम बचे रहोगे,परन्तु जैसे ह ीवह तुम्हारे हाथों से छूटती है तुम्हारा नाश हो जायेगा। नही!परमेश्वर ने उसे जहाज के भीतर बन्द कर दियां । नूह के लिए जो मतलब ''जहाज में होने'' का था,वैसा ही हमारे लिए ''मसीह में होना'' मायने रखता है।उसमें होकर परमेश्वर ने हमें स्थान में रखा है जहॉ पर उसका क्रोध हम तक नहीं पहुॅच सकता और हम सुरक्षित हो सकते हैं जैसा कि मसीह हमें सुरक्षित कर सकता है। और पाप के लिए कोई दण्ड की आज्ञा नहीं है।

आ.पाप के द्वारा नियन्त्रित होने की कोई आवश्यकता नहीं(8:2)

यहॉ पर नई व्यवस्था प्रवेश करती है। पौलुस कहता है,''क्योंकि जीवन की आत्मा की व्यवस्था ने मसीह यीशु में मुझे पाप की और मृत्यु की व्यवस्था से स्वतन्त्र कर दिया''(पद2)। जमीन की ओर गिरते हुए एक सिक्के की कल्पना करें,जो गुरूत्वाकर्षण के बल के कारण नीचे खिचता है। अपने आप में वह सिक्का गुरूत्वाकर्षण बल से बाहर आने में असमर्थ है। उसका नीचे गिरना प्राकृतिक है। परन्तु उसके जमीन पर

गिरने से पहले ,कोई अपना हाथ बढ़ाकर,उस सिक्के को मजबूती से पकड़ लेता है,और उसे ऊँचाई की ओर उस शक्ति के खिलाफ उठाने लगता है। उस व्यक्ति का हाथ जीवन की आत्मा की व्यवस्था है जो गुरूत्वाकर्षण की शक्ति पर जय पाती है। इसका मतलव यह नहीं है कि गुरूत्वाकर्षण की शक्ति खत्म हो गयी, परन्तु इसका अर्थ है कि उससे भी ताकतवर शक्ति अपने बल के साथ प्रवेश कर चुकी है। हम स्वभाव ही से पाप करने वाले हैं,हम मानव पतन के शिकार हैं, और पाप करना पतित मनुष्य का स्वभाव है। परन्तु ''मसीह के अन्दर'' एक बड़ी शक्ति कार्य करती है,''जीवन की आत्मा की व्यवस्था'' और यह व्यवस्था हमें कम बल वाली पाप और मृत्यु की व्यवस्था से आजाद करती है। सिक्के के दृष्टान्त में निश्चय ही यह सीमा है कि उसमें आत्म इच्छा नहीं होती है,जबकि हम में होती है। यह सम्भव हो सकता है कि हम अविश्वास और अनाज्ञाकारिता के कारण पाप के नियन्त्रण से छुटकारे का आनन्द न मना पायें।

इ.पाप की कोई नियमितता नहीं होनी चाहिये (8:3–4)

मूसा की व्यवस्था को बनाये रखने के लिए हमारे किये जाने प्रयासों के द्वारा हमे कभी भी पाप के नियन्त्रण से छुटकारा प्राप्त नहीं हो सकता है। ''क्योंकि जो काम व्सवस्था शरीर के कारण दुर्बल होकर न कर सकी,उसको परमेश्वर ने किया,अर्थात अपने ही पुत्र को पापमयशरीर की समानता में और और पापबलि होने के लिए भेजकर,शरीर में पाप पर दण्ड की आज्ञा दी। इसलिए की व्यवस्था की विधी हममें जो शरीर के अनुसार नहीं आत्मा के अनुसार चलते है पूरी की जाए।(पद 3–4)।शरीर के कारण ''व्यवस्था कमजोर थी''। ऐसा नहीं था कि परमश्वेर ने मनुष्य से बहुत ज्यादा बातों की मॉग की हो,क्योंकि वह सिद्धता को छोड़ और किसी चीज से सन्तुष्ट नहीं कराया जा सकता। परन्तु असली बात यह है कि मनुष्य परमेश्वर की व्यवस्था के स्तर पर जीवन नही व्यतीत कर सका और नहीं वह ऐसा कर सकता है।

लेकिन उसके बाद यीशु ने हमारे समान शरीर को धारण किया,सिवाय इसके कि उसका शरीर पापरहित था, पतन से बेदाग था। वह लगभग इस संसार में करीब तैंतीस सालों तक एक बार भी पापों के विचार के कब्जे में आये बिना,बिना कोई गलत शब्द बोले हुए,या फिर किसी अनुचित कार्य को किये बिना जीवित रहा। उसका जीवन ''पापमय देह के लिए''दण्डआज्ञा था। जो लोग ऐसा सोचते हैं कि यीशु मसीह का जीवन हमारे लिए महज एक आदर्श होने के लिए रखा गया था, तो वे बड़ी भारी गलती करते है। यह हमें बुरी तरह दोषी ठहराता है। मन्दिर में परदे के समान यह हमें,परमेश्वर की उपस्थिती से अलग रखते हैं, और जैसे वह मन्दिर का पर्दा दो भागों में बट गया था,उसी प्रकार कलवरी पर मसीह की देह को भी चिरना था। उसके निष्कलंक जीवन का मकसद छुटकारे की योजना को पूरा करना था, उसका जीवन हमें नहीं बचाता पर,उसकी मृत्यु हमें बचाती है। चारों सुसमाचार मसीह की मृत्यु पर पर गहरा जोर देते हैं।उसके जीवनकाल के दौरान ,प्रभु यीशु मसीह ने सम्भवताओं को प्रगट किया कि किस प्रकार मनुष्य के जीवन में परमेश्वर की व्यवस्थाओं को पूरा किया जा सकता है,वह जीवन जो शरीर में व्यतीत किया

जाता है;जो देह है। मसीह के विश्वासी के भीतर वास करने के चमत्कार के द्वारा,वह जीवन जो यीशु ने व्यतीत किया वह उसकी आत्मा के द्वारा हम में उत्पन्न हो सकता है। वह हमारे द्वारा उत्पन्न नहीं होता, बल्कि हम में होता है यदि हम'' आत्मा के चलाये नहीं वरन आत्मा के चलाये चलते हैं।''

प्प्प नया परमेश्वर (8:5–13)

रोमियों की पत्री में अध्याय 7 दर्शाता है कि कितना ज्यादा यह अध्याय 'मैं' 'मेरे' और 'मुझे' शब्दों से भरा हुआ है। उसके विपरीत अध्याय 8 में पवित्रआत्मा का जिक्र अधिक आता है, जो इस अध्यास में कम से कम उन्नीस बार पाया जा सकता है। विश्वासियों के जीवन में नया परमश्वेर,खुद परमेश्वर का पवित्र आत्मा है।

अ.पवित्र आत्मा विश्वासियों के मनों को नियन्त्रित करता है(8:5–7)

''क्योंकि शारिरिक व्यक्ति शरीर की बातों पर मन लगाते हैं; परन्तु आधात्मिक आत्मा की बातों पर मन लगाते हैं। शरीर पर मन लगाना तो मृत्यु है परन्तु आत्मा पर मन लगाना जीवन और शान्ती है। क्योकि शरीर पर मन लगाना तो परमेश्वर से बैर रखना है।,क्योंकि न तो परमेश्वर की व्यवस्था के अधीन है,और न हो सकता है।''(पद 5–7)

विश्वासियों के जीवन में कार्यरित शारीरिक मन का सबसे अच्छा उदहारण हम इसहाक के जीवन में पा सकते हैं। उत्पत्ति 27 में ''मृगमांस'',''स्वादिष्ट मांस '' और ''खाना ''जैसे शब्द बीस बार सामने आते हैं। इसका संकेत हमें आने वाले अध्याय में मिलता है जहाँ पर लिखा है कि''इसहाक एसाव के अहेर कामांस खाया करता था इसलिए वह उससे प्रीति रखता था''(उत्पत्ति 25:28)। हम वहाँ पर यह नहीं पढ़ते हैं कि इसहाक ने एसाव को इसलिए प्रेम किया क्योंकि वह परमश्वेर पवित्र जन था। तो बात ही कुछ और होती। परन्तु हम इस प्रकार के वाक्य को वहां पर नहीं पाते हैं। एसाव परमेश्वर का जन नहीं था; बल्कि उसने स्वादिष्ट भोजन की आड़ में अपने पिता पर कब्जा कर रखा था।

शारीरिक दिमाग की गलतियों का उत्पत्ति 27 में लिखी इसहाक की उत्तराधिकारी गलतियों में देखा जा सकता है। पहले तो उसने यह सोचा कि अब वह मरने पर है(उत्पत्ति 27:2),जबकि वह उसके बाद में भी चालीस और भी वर्षों तक जीवित रहा। उसके सूझने की शक्ति धीरे धीरे कम हो रही थी। वह लगभव अन्धा था। उसके स्वाद की पहचान ने उसे धोखा दे दिया,क्योंकि उसे मृगमांस और बकरी के मीट में फरक महसूस नही हुआ। उसके हाथों का एहसास, जब बकरी की खाल में लिपटा हाथ उसके सामने प्रस्तुत किया गया,उसने गलत कहा कि वह वह एसाव के रौए दार हाथों को महसूस कर रहा था। उसने याकूब के अन्दर मिट्टी की सुगन्ध को महसूस किया और सोचा िकवह एसाव है। केवल उसके कानों ने उसको धोखा नहीं दिया,परन्तु उसने उसकी बात को नही सुना।

शारीरिक मन की शत्रुता इसहाक द्वारा एसाव को पुरखाओं की आशीषों को देने की ज़िद की घटना के अन्दर सामने आती है,जबकि वह जानता था कि यह परमेश्वर की इच्छा है कि याकूब उन आशीषों को पाय(उत्प0 25:23–26; 27:1–4,24–33)। ''क्योंकि शरीर पर मन लगाना परमेश्वर से बैर करना है''।

शरीर पर मन लगाने के द्वारा परमेश्वर से बैर करने के वचनों में सैकड़ों उदहारण हैं। अब्राहम के हाजिरा से विवाह के बारे में सोचिये;लूत का सदोम को चुनना; मूसा द्वारा मिस्री को मारना;यहोशू का गिवोनियों के साथ समझौता करना; शाऊल द्वारा अमालेकियों के मवेशियों को जीवित बचाये रखना;सुलैमान की राजनीतिक शादियां;योना का तर्शिश से भागना;पतरस का मलखुस पर वार। ये और इनके अलावा और भी बहुत से उस सिद्धान्त के बारे में बताते हैं। शारीरिक मन के द्वारा की गयीं गलतियों से बचने का केवल एक ही तरीका है और वह ''मसीह के मन का होना है''(फिलि.2:5; 1 कुरि.2:16)। मसीह के मन का हासिल करने का केवल एक ही तरीका है कि मसीह की आत्मा को अपने जीवन में काम करने नियन्त्रण दें।

आ.पवित्र आत्मा द्वारा विश्वासियों उददेश्यों को नियन्त्रित करना (8:8–9)

''शरीर में होना'' और ''आत्मा में होने'' के बीच में एक बहुत बड़ा फरक है। पौलुस इस बात को आगे दर्शाता है:'' और जो शारीरिक दशा में हैं, वे परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते। परन्तु जब कि परमेश्वर का आत्मा तुम में बसता है,तो तुम शारीरिक दशा में नहीं परन्तु आत्मिक दशा में हो। यदि किसी में मसीह का आत्मा नही ंतो वह उसका जन नहीं(पद 8–9)।शरीर में होने का अर्थ शारीरिक इच्छाओं द्वारा प्रेरित होना है। यह अनुच्छेद उद्धार पाये हुए व्यक्ति और बिना उद्धार पाये हुए व्यक्ति के बीच फर्क को बताता है।

पवित्र आत्मा के प्रति समर्पित होना ही इस बात की पूरी गारन्टी है कि हमारा मकसद परमेश्वर को प्रसन्न करेगा,जैसा कि यिर्मयाह कहता है,'' मन तो सब वस्तुओं से अधिक धोखा देनेवाला होता है उसमें असाध्य रोग लगा होता है,उसका भेद कौन समझ सकता है?मैं यहोवा मन को खोजता और हृदय को जॉचता हूॅ..... (यिर्मयाह 17:9–10)। यहाँ तक कि अति उत्तम उददेश्य चालित विश्वासी भी अपने मकसद का मूल्यॉकन नहीं कर सकता, जब तक परमेश्वर को आत्मा उनके विवेक पर अपने वचन का प्रकाश न चमकाये। हमें इस प्रकार प्रार्थना करने की आवश्यकता है:

हे मेरे परमेश्वर,मेरे सारे कामों को जॉच ,
और मेरा जीवन प्रगट हो जाए
जैसे तेरी निगाहें के द्वारा खोजा गया हूॅ
मेरे रास्तो साफ बनाने के लिए उन्हे खोद डाल।
मेरी चेतना की खोज,और मेरे हृदय को जान ले
केवल आप ही इसे जान सकते हैं

और मेरे मन की गहराई ,और इसकी गुप्त बातें
मुझे पूरी तरह दिख जायें।
अन्धकार मय काशिकाओं में ऐसा प्रकाश डाल दे
कि जुनून दौड़ने लगे
मेरी आत्मा को उस हद तक जिला
कि मैं पाप की धृणित तस्वीर को पहचानने पाऊँ
मेरे सारे विचारो को जॉच,उन सारी गुप्त भावनाओं को,
वे मकसद जो कब्जा करते है,
वह कक्ष जहॉ पर दूषित बातें
मेरे प्राण पर प्रभुता करती हैं।

इ.पवित्र आत्मा द्वारा विश्वासियों के अंगों को नियन्त्रित करता है (8:10–13)

पौलुस ने रोमियों 7 में मन की व्यवस्था और अंगों की व्यवस्था पर चर्चा की है। अ बवह प्रगट करता है कि किस प्रकार से परमेश्वर का आत्मा विश्वासियों की आत्मा को कैसे मृतकों में से उठाता है और अकस्मात, विश्वासी के अंगों पर नियन्त्रण करके उसे इस क्षेत्र में विजय प्रदान करता है। ''यदि मसीह तुम में है,तो देह पाप के कारण मरी हुई है परन्तु आत्मा धर्म के कारण जीवित है। यदि उसी का आत्मा जिसने यीशु की मरे हुओं में से जिलाया,तुम में बसा हुआ है,तो जिसने मसीह को मरे हुओं में से जिलाया वह तुम्हारी नश्वर देहों को भी अपने आत्मा के द्वारा जो तुम में बसा हुआ है जिलाएगा। इसलिए हे भाइयों हम शरीर के कर्जदार नही कि शरीर के अनुसार दिन काटें। क्योंकि यदि तुम शरीर के अनुसार दिन काटोगे तो मरोगे,यदि आत्मा से देह की क्रियाओं को मारोगे तो जीवित रहोगे(पद 10–13)।

शब्द 'नश्वर'' और 'अविनाशी'' हमेशा हमारे शरीर को दर्शाते हैं। यह हमारा ''नश्वर शरीर'' है जो पुररूत्थान के दिन अविनाशता को पहन लेगा(1कुरि 15:53–54)। शरीर अब भी पाप के कारण मृत्यु के अधीन उसी प्रक्रिया में बना हुआ है। नये जन्म के दौरा पवित्र आत्मा के द्वारा हमारा आत्मा जीवित हो जाता है। पुनरूत्थान के दिन हमारे यह शरीर भी अविनाशी जीवन को पहन लेगे।

'' यीशु''का नाम (पद 11)फायदे के लिए है, केवल एक और जगह पूरी पत्री में है जहां पर यीशु का नाम अकेले लिया गया हो 3:26। नाम 'यीशु''निश्चय ही मसीह को मानवीय नाम है। पौलुस हमारे ध्यान को इस बात की ओर खींचना चाहते हैं कि एक समय यीशु अपने जीवन के कमजोर महसूस कर रहा था,परन्तु परमेश्वर ने उसे अपनी आत्मा के द्वारा मृतकों में से जीवित किया। वही आत्मा जिसने मसीह को मृतकों में से जीवित किया है वह अब हमारे भीतर वास करता है। जबकि ये आयते सबसे पहले आने वाले पुनरूत्थान के बारे में बाते करती हैं,लेकिन यह ये भी बताती है कि पवित्र आत्मा हमें अभी भी हमारे अंगों की व्यवस्था

पर हमें विजय प्रदान कर सकता है। इस पत्री में बाद में,पौलुस आग्रह करता है कि विश्वासी लोग अपने शरीरों को आत्किम बलिदान के रूप में दे(12:1)। विजयी जीवन प्राप्त करने के लिए आत्मसमर्पण करना एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य है। विश्वासियों की देह पवित्र आत्मा का मन्दिर है(1कुरि03:16–17;6:19–20), और वह इस मन्दिर पर पूर्ण अधिकार करना चाहता है। एक बार विश्वासी अपने शरीर का नियन्त्रण उसके हाथ में सौप दे ंतो, परमेश्वर को आत्मा पाप के ऊपर विजय को प्रदान कर सकता है जिसके अन्तर्गत शरीर के अंगों को इस्तेमाल आता है।

नया जीवन (8:14–39)

पापमुक्त नया जीवन प्राप्त करने ; नया परमेश्वर प्राप्त करने के बाद जो और कोई नहीं बल्कि खुद त्रिएक परमेश्वर का तीसरा व्यक्ति है, यह एक सामान्य सी बात है हमारे भीतर एक नया जीवन प्रवाह करना चाहिये।

अ.वारिस होने पर अधिक जोर(8:14–27)

यह सुसमाचार की एक बुनियादी सच्चाई है कि इससे पहले कि एक व्यक्ति परमेश्वर की सन्तान कहलाये उसे नया जन्म लेना जरूरी है(यूहन्ना 1:11–13;3:3–8;1पतरस 1:23:25;1यूहन्ना 3:0;4:7; 5:1,4,18)। नये जन्म के चमत्कार के द्वारा परमेश्वर के परिवार में जन्म लेना एक बात है,परन्तु एक प्रौढ़ पुत्र बन जाना दूसरी बात है। पौलुस नये जन्म की बाद करते हुए परिवर्तन को उसका मतलब नही बताता,परन्तु वह आत्मिक पुत्र और परिपक्वता के बारे में काफी बात करता है।

पौलुस सबसे पहले परमेश्वर के परिवार में हमारे स्वीकार किये जाने के सवाल पर बात करता है। कानूनी तौर पर परिवार में गोद लिया जाना यहूदियों या यूनानियों से ज्यादा रोमियों की धारणा है।ऐसा प्रतीत होता है कि रोमि लोग पूरे आंकडों के साथ में गोद लेने का काम किया करते थे। पवित्र आत्मा परमेश्वर के परिवार में विश्वासियों को व्यस्क पुत्रों के रूप में रखता है। इस सच्चाई के साथ में तीन विचार जुड़े हुए है। जो लोग स्वीकार किये गये हैं, वे आत्मा के चलाये चलते हैं,क्योंकि पौलुस कहता है,''जितने लोग परमेश्वर की आत्मा के चलाये चलते हैं वे परमेश्वर के पुत्र कहलायेगें(पद14)। ईश्वरी परिवार में पुत्र बन जाने का एक प्रमाण यह होता है कि विश्वासी परमेश्वर की आत्मा की अगुवाई और उसके मार्गदर्शन के साथ में सहयोग करता है। इसमें कोई शक की बात नहीं है कि परमेश्वर अपने बच्चो की अगुवाई करने में प्रसन्न होता है। पुराने नियम में मरूस्थल में से होकर जाते समय उसने इस्राएलियों की अगुवाई को करने के लिए एक आग के खम्बे और बादल के खम्बे का इन्तजाम किया। उनकी अगुवाई बिल्कुल स्पष्ट,नियमित और साफ थी,यहॉ तक एक छोटा सा बच्चा भी बता सकता था कि कब और कहॉ वह बादल का खम्बा गया। आज विश्वासियो को अगुवाई करने के सिद्धान्त आज बिल्कुल अलग हैं,लेकिन वे फिर भी स्पष्ट हैं। बहुत से विश्वासी अपने जीवन में परमेश्वर की स्पष्ट अगुवाई के बोध का अभाव है। हो सकता है

कि नियमित रूप में परमेश्वर की आवाज को न सुन पाने में सबस बड़ी बाधा परमेश्वर के साथ बिताये जाने वाले एकान्त समय का अभाव हो सकता है। परमेश्वर हमसे कैसे बात कर सकता है यदि हम उसके वचनों पर मनन नहीं करते? दूसरी सबसे बड़ी बाधा है कि जब आत्मा की अगुवाई प्रगट हो जाती है तो हम मानने से इनकार कर देते हैं।

जो लोग परमेश्वर के द्वारा उसके परिवार में गोद लिये जाते हैं वे न केवल परमेश्वर की आत्मा के चलाये चलते हैं बल्कि वे परमेश्वर के द्वारा प्रेम भी किये जाते हैं। ''क्योंकि तुमको दासत्व की आत्मा नहीं मिली कि फिर भयभीत हो,परन्तु लेपालक पन की आत्मा मिली है,जिससे हम हे पिता और हे अब्बा कहकर पुकारते हैं। और आत्मा आप ही हमारी आत्मा के साथ गवाही देता है, कि हम परमेश्वर की सन्तान हैं (पद 15–16)।'' यह पुकार ''अब्बा'' ''पिता'' बहुत ही रूचिकर है। डब्ल्यू.ई वाईन कहते हैं कि ''अब्बा'' ज्ञान से बढ़कर 1एक दुध पीते हुए बच्चे की,एक साधारण,निसंकोच विश्वास की असहाय पुकार,एक अपने पन का एहसास है। यह एक अरामिक शब्द है जिसे अग्रेजी में पापा कहा जाता है। यह एक इस प्रकार का उपनाम है जो यहूदियों में उनके सेवकों या गुलामों द्वारा अपने मालिक को इस नाम से बुलाने की मनाही थी। ''फादर'' (ग्रीक और लैटिन भाषा का शब्द) ''अब्बा' का अनुवाद नहीं है। यह पिता कहने का दूसरा भाव है। यह उस व्यक्ति के द्वारा रिश्ते का ज्ञान है जो इस शब्द का इस्तेमाल करता है,एक पुत्र सम्बन्धी शब्द,भरोसेमन्द, संगति और आज्ञाकारिता,जवाब मिलने का ,अपने भावनाएं व्यक्त करने का,परमेश्वर पिता के आत्मसन्तुष्ट कर देने वाले प्रेम को प्रगट करने वाला शब्द है। दो भाव एक साथ बच्चे के प्रेम व बुद्धिपूर्ण भरोसे को प्रगट करते है।

गतसमनी के बाग में यीशु ने इस प्रकार के भाव को इस्तेमाल किया था, ''अब्बा,हे पिता''(मरकुस 14:36)। नये जन्म के चमत्कार के द्वारा,हम अपने स्वर्गीय पिता की धनिष्ट संगति में आ गये हैं, ऐसी धनिष्टता जिसका आनन्द प्रभु यीशु मसीह खुद उठाया करते थे। इस सन्दर्भ में ''आत्मा की गवाही'' बहुत महत्वपूर्ण हैं । परमेश्वर की आत्मा का यह काम नये नियम में तीन बार इस्तेमाल किया गया है। वह हमें(इब्रानियो 10:15),हम में(1यूहन्ना 5:10), और हमारे साथ (रोमियों 8:16) गवाही देता है। इन तीन पदों में तथ्य,विश्वास और एहसास प्रचुर मात्रा में देखे जा सकते हैं। यहां पर निश्चय ही, यह एहसास है,क्योंकि परमेश्वर का आत्मा हमारी आत्मा को जोश दिलाता है जिससे आनन्दमय पुकार उत्पन्न होती है,''अब्बा,पिता''।

इसके आगे,जो लोग परिवार में स्वीकार किये जाते हैं वे पुत्र के द्वारा उठाये जाते हैं। ''और यदि सन्तान हैं तो वारिस भी,वरन परमेश्वर के वारिस और मसीह के संगी वारिस हैं, कि जब हम उसके साथ दुःख उठाएँ तो उसके साथ महिमा भी पाएँ। यहां पर पाया जाने वाला 'यदि' पद 9 में पाये जाने वाले 'यदि' के समान है, एक असलियत की परिकल्पना की जा रही है, इसमें कोई शक नहीं है कि यह केवल अनुमान है।

कुद लेखकों के द्वारा कहा जाता है कि 'जब तक' या तब काफी बेहतर शब्द है। कुछ वचन जैसे 2थिस्लुनुकियों 1:10; 1कुरि0 15:23; कुलुस्सियों 3:4 और 1यूहन्ना 3:2 उस सच्चाई को सुनिशचित करते हैं कि विश्वासी मसीह के साथ ''एक साथ महीमित होंगें''।

उस वसीयत का आनन्द उठाने की शर्त केवल कष्ट नहीं बल्कि ''मसीह के साथ'' दुःख उठाना है। ऐसा प्रतीत होता है कि पौलुस को बिल्कुल निश्चित है इस शर्त को अवश्य ही ध्यान में रखा जायेगा। महत्वपूर्ण है कि नये नियम में केवल एक और ऐसी जगह है जहॉ पर इस भाव 'साथ दुःख उठाना''का इस्तेमाल मिलता है वह 1कुरि0 12:26 हैः इसलिए जब एक अंग दुःख पाता है,तो सब अंग उसके साथ दुःख पाते है। 1कुरिन्थियों में लिखे गये वचन का तात्पर्य मसीह की देह की एकता से है। दे हके भीतर दुःख होना या दर्द होना कोई चुनाव नही है, परन्तु क्योंकि हर एक अंग इस तरह से एक दूसरे के साथ रिश्ते में जुड़ा हुआ है कि ऐसा होना निश्चित व स्वाभाविक होता है। क्योंकि मसीह देह का सिर है, ऐसा होगा कि जो बातें सिर में दर्द करेगीं उन्ही से सारी देह को भी दर्द होगा। परमेश्वर के परिवार में लेपालकपन प्राप्त करने के पश्चात, पुत्र के द्वारा उठाये जाने को शामिल करता है ताकि हम दुःखों और महिमा दोनो,दर्द हौर मिरास, उसका क्रूस और उसका मुकुट दोनों को बॉट सकें।

क्योंकि परमेश्वर के परिवार में अपनाया जाना एक बेशकीमती अवसर है,इसमें अनुशासन की प्रक्रिया की आवश्यकता होती है। हमारी उच्च और पवित्र बुलाहट के हिसाब से परमेश्वर ने हमें उपयुक्त स्थान प्रदान करना चाहिये। अतः पौलुस आगे,हमें, परमेश्वर के परिवार के योग्य बनाने की बात करता है। पहले वहॉ पर गोद लिया जाना हैः और फिर तैयार किया जाना है। और क्योंकि तैयार करना एक दुःखदायी प्रक्रिया हो सकती है, ''पीड़ा'' का इस्तेमाल इस सन्दर्भ में तीन बार किया गया है। कल्पना करके देखें कि एक शहर का धनी,सज्जन एक सभ्य व्यक्ति, किसी झुग्गी झोपड़ी में रहने वाले एक लड़के के गोद लेकर अपने परिवार में रहने के लिए ले आता है। गोद लेने के बाद में तैयारी का काम की बारी आती है। वह लड़का उस घर में रहने के लिए पूरी तरह से अयोग्य था इसलिए उस व्यक्ति ने एक शिक्षक को उसे सिखाने के लिए रख दिया कि किस तरह से बोलना चाहिये और किस तरह से सभ्य समाज में व्यवहार करना चाहिये। यह प्रक्रिया उसके लिए काफी दुखदायी होगी,और हो सकता है कि उसे अपनी मन्जिल तक पहुॅचने से पहले तैयार होने में वर्षों का समय लग जाये। परन्तु उसका अध्यापक,उस लड़के के फायदे के लिए, धीरज के साथ उस लड़के की शिक्षा और अनुशासन को आगे बढ़ाता रहेगा, चाहे उसकी प्रगति थोड़ी धीमी ही क्यों न हो। यही काम परमेश्वर इस युग में हमारे साथ कर रहा है।

परमेश्वर के धर में तैयार होना एक महत्वपूर्ण बात है। पौलुस सृष्टि की पीड़ा की बात करता है(पद 18–22),जैसे कि वह इस प्रक्रिया में विकट तरीके से बन्धी हुई है–''क्योंकि हम जानते हैं कि सारी सृष्टि

अब तक मिलकर कराहती और पीड़ाओं में पड़ी तड़पती है''(पद 22)।जहॉ तक इस ग्रह का सवाल है, मनुष्य के पतन में सारी सृष्टि शामिल थी। सब्जियां उसमें शामिल थीं,क्योकि परीक्षा का मुख्य केन्द्र वह पेड़ ही था,जानवर उसमें शामिल थे क्योकि यह परीक्षा सॉप के द्वारा ही प्रस्तावित की गयी थी,ओर निःसन्देह की मानव उसमें शामिल था क्योंकि यह परीक्षा उसी पर पड़ी थी। मनुष्य के पतन के पश्चात जो श्राप आया उसमें सारी सृष्टि शामिल हो गयी। क्योंकि सृष्टि अपनी इच्छा से नहीं बल्कि अधीन करनेवाले की ओर से,व्यर्थता के अधीन इस आशा से की गयी''(पद 20)। नये नियम में 'व्यर्थ' शब्द केवल हमें यहॉ ,इफिसियों 4:17 और 2पतरस 2:18 में ही दिखाई पढ़ता है। रोमियो की पत्री के इस अनुच्छेद में इसका अर्थ ''निराशाजनक दुदर्शा'' है। यही समान शब्द सभोपदेशक की पुस्तक में 'व्यर्थता '' को प्रगट करने के लिए लगातार अनेकों बार इस्तेमाल किया गया है। यह किसी ऐसी चीज का वर्णन करने के लिए गया है जिसे जिस मकसद के लिए बनाया गया था वह उस मुकाम तक नहीं पहुॅचा। इसलिए सृष्टि कराहती है। सच में एक ऐसा भी समय था जब न तो सृष्टि कराहती थी और न ही उसे कोई पीड़ा होती थी। डा.एल. मरसन डेविस बताते हैं कि उत्पत्ति की पुस्तक को तीसरा अध्याय तीन चीजों को प्रकृति के ऊपर सामान्य श्राप के प्रतीक के रूप में रेखांकित करता है। वह कहते हैं कि ''ये सभी धरती के गर्भ में पीड़ा उत्पन्न करनेवाले हैं। उदहारण के लिए सॉप, को उसके अंगों से वंचित करके पेट के बल रेंगने का श्राप मिला;कॉटों ने शाखाओं और पत्तियों का स्थान ले लिया, और मिटटी की बिगड़ी हालत की वजह से ऊँटकटारे पैदा होना शुरू हो गये।

पौलुस कहता है कि ''क्योंकि सृष्टि आशा भरी दृष्टि से परमेश्वर के पुत्रों के प्रगट होने की बाट जोह रही है(पद 19), या जिस प्रकार से फिलिप्स इस बात को रखते हैं '' सम्पूर्ण सृष्टि अपने पैर के अंगूठो पर खड़े होकर परमेश्वर के निज पुत्रों के आने के दृश्य को देखने के लिए बेताब है''। अवश्य ही ज्योतिर्मय दिन आने वाले दिनों सृष्टि का इन्तजार कर रहे है (यशा 11:6–9; 65:25; प्रका0 22:3), क्योंकि वह समय आ रहा है जब उस पर से श्राप हट जायेगा और सृष्टि अपने प्राचीन रंग में पुनःस्थापित कर दी जायेगी। जैसा पॉलुस कहता है,''क्योंकि मैं समझता हूॅ इस समय के दुःख और क्लेश उस महिमा के सामने,जो हम पर प्रगट होने वाली है कुछ भी नहीं है(पद 18)।''उसने ठीक इसी प्रकार का अनुच्छेद कुरिन्थियों की दूसरी पत्री में भी लिखा है,''क्योकि हमार पल भर का हल्का सा क्लेश हमारे लिए बहुत ही महत्वपूर्ण और अनन्त महीमा उत्पन्न करता जाता है(2कुरि04:17)।'' जिसे पौलुस हल्का सा क्लेश कहता है वह बहुत से आधुनिक मसीहियों को हिला कर रख सकता है(2कुरि.11:23–33)।हमें यह देखने के लिए रूककर इन्ताजार करना होगा कि उस''अनन्त महीमा'' को देखने के लिए क्या क्या शामिल है, परन्तु इस तो निश्चय है कि अभी यह हमें बिल्कुल पीस डालेगा।

पौलुस आगे मसीहियों की कराहट के बारे में चर्चा करता है, और ध्यान लगवाता है मसीही लोग इसलिए कराहते हैं क्योंकि उसने अभी तक अपने महीमित देह को प्राप्त नहीं किया है।''और केवल वही नहीं पर हम भी जिनके पस आत्मा का पहला फल है,आप हीं अपने में कराहते हैं; और लेपालक होने की,अर्थत अपनी देह क छुटकारे की बाट जोहते हैं। इस आशा के द्वार हमारा उद्धार हुआ है; परन्तु जिस वस्तु की आशा की जाती है, ज बवह देखने मं आए तो फिर आशा कहॉ रही?क्योंकि जिस वस्तु को देख रहा हैउसकी आशा क्या करेगा?परन्तु जिस वस्तु को हम नहीं देखते,यदि उसकी आशा रखते हैं,तो धीरज से उसकी बाट जोहते हैं(पद 23:25)।

जब तक कि हम यह नहीं सोचते उद्धार विश्वास द्वारा है आशा के द्वारा नही ंतो यह विचार कि हम आशा के द्वारा बचें हैं हमारी ऑखों को अपनी ओर आकर्षित करने वाला जान पड़ता है। इस पद का कोई की सरोकार हमारे प्राण के उद्धार से नहीं परन्तु देह के छुटकारे से है और इसका सम्बन्ध उससे है जिसके बारे में पॉलुस कहीं कहता है''उस धन्य आशा की अर्थात अपने महान परमेश्वर और उद्धारकर्ता यीशु मसीह की महिमा के प्रगट होन की बाट जोहते रहे(तीतुस 2:13)। मसीही लोग ''आशा'' का अनिश्चिता के साथ जोड़ते है और इसका एक कमजोर शब्द मानते है। किसी व्यक्ति से पूछे जाने पर की क्या वह उद्धार पा चुका है, अगर जवाब मिले, ''मुझे ऐसी ही आशा है' **तो काफी** असन्तोष जनक होगा; इस मामले में आशा,विश्वास का स्थान ले लेती है। परन्तु खुद अपने आप अपने अभिप्राय में होकर आती है। मान लीजिये एक मॉ अपने अनाज्ञाकारी बेटे से कहती है कि जब तेरे पापा काम पर से वापस आयेगें तो तेरी पिटाई लगने वाली है। और आप यह भी कल्पना करें कि उस दिन के दौरान किसी ने उस बच्चे से यह सवाल किया हो ''क्या तुम सोचते हो कि जब तुम्हारे पिताजी धर वापस आयेंगे तो तुम्हे सजा मिलेगी?'' और शायद वह लड़का कहे,मैं विश्वास करता हूॅ ,मैं सजा पाऊँगा,'' परन्तु वह शायद ही इस प्रकार से कहे,''मैं आशा करता हूॅ , मुझे सजा मिलेगी। आशा का सम्बन्ध न केवल हमारे भविष्य से है,बल्कि इसका सम्बन्ध भविष्य की कुछ अच्छी बातों से भी है।

हमारे अनुभव के इस स्तर पर,हम देह की सीमाओं और देह की परीक्षाओं की वजह से कराहते हैं। वह दिन आते हैं जब हमारा निन्दित होने वाला यह शरीर परिवर्तित हो जायेगा''वह अपनी शक्ति के उस प्रभाव के अनुसार जिसके द्वारा वह सब वस्तुओं को अपने वश में कर सकताहै,हमारी दीन हीन देह का रूप बदल कर अपनी महिमा की देह के अनुकूल बना देगा(फिलि0 3:21)।'' यह हमारे छुटकारे का भाग है; और यद्यपि हम उसकी आशा कर रहे हों, परन्तु यह उतना ही निश्चित है जितना कि मसीह का पुनरूत्थान।

सृष्टि का कराहना और मसीहीयों का कराहना को समझना बहुत आसान है, जब उन्हे उस रहस्यमय कराहट के पास में लाकर खड़ा कर दिया जाय जिनकी चर्चा पौलुस आगे करता है– सहायक की कराहट।

रोमियों 8:26,27 को लिखें। "इसी रीति से आत्मा भी हमारी दुर्बलता में सहायता करता है। क्योंकि हम नहीं जानते कि प्रर्थना किस रीति से से करना चाहिए, परन्तु आत्मा आप ही ऐसी आहें भर भरकर, जो बयान से बाहर है, हमारे लिये विनती करता है; और मनों मनों का जाँजनेवाला जानता है कि आत्मा की मनसा क्या है? क्योंकि वह पवित्र लोगों के लिये परमेश्वर की इच्छा के अनुसार विनती करता है।" हमारे पास यीशु मसीह के मद्धयस्त है(1युहन्ना 2:1), और हमारे भीतर एक प्राण की प्रत्येक गहरी–से–गहरी जरूरत को खोल कर रखता है।

हम में से ज्यादातर लोग प्रार्थना के विषय में असहाय महसूस करते हैं। हम अपने भीतर भयपूर्ण विपरीत परिस्थितियों का सामना करते हुए प्रार्थना करते है। तकनीकी रूप से बहुत से शब्दों का इस्तेमाल करते हुए हम प्रार्थना तो करते हैं, परन्तु शायद ही हम सच में प्रार्थना कर पाते हैं। प्रार्थना में बहुत से शब्दों का उच्चारण करने से कुछ फायदा नहीं है : यहाँ तक की अन्य जातियां भी ऐसा कर सकती है। केवल एक आत्मा के द्वारा सिखाया गया विश्वासी सच में प्रार्थना कर सकता है। क्योंकि प्रार्थना की सेवकाई पूरी तरीके से आत्मिक सेवकाई है, जिसके अंतरगत गहरी जरूरतों के साथ पवित्र आत्मा के सम्मुख खड़े होते है। ताकि हमारी इस क्षेत्र में मदद कर सके।

शब्द "सहायता" जो इस अनुछेद में प्रस्तुत होता है वह इस स्थान के अलावा केवल लूका 10:40 में पाया जाता है जहाँ उसका इस्तेमाल अति प्रकाशमय है। यह मार्था और मरियम की कहानी में आता है जब यीशु मसीह उनके घर में मेहमान होकर आए। मरियम प्रभु के चरणों में बैठी थी लेकिन मार्था को रसोई घर के अन्दर बर्तनों को खड़खड़ाते हुए सुना जा सकता था। प्रमाणित तौर पर उसकी चिड़चिड़ाहत बढ़ रही थी। क्यों, उसे हि इन बरतनों के साथ काम करना है जब की उसकी बहन मेहमान कक्ष में गलीचे पर बैठी हुई है। अचानक उसके सबर का सीमा पार हो गई और वह कह उठी, "है प्रभु, क्या तुझे ख्याल नहीं है कि मेरी बहन ने मुझे अकेला काम करने के छोड़ दिया है? उसको बोल ताकि वह आकर मेरी मदद कर सके।" रोमियों 8 में इस्तेमाल किये गए शब्द का यही मायना है। प्रार्थना के अन्दर हमें सहायता – व्यवहार, जमीनी और हर प्रकार की उस सहायता की जरूरत पड़ती है जिनकी मार्था को रसोई–घर में जरूरत थी। पवित्र आत्मा के दिये जाने की प्रतिज्ञा के दौरान प्रभु यीशु ने जिस शब्द "सहायक" का इस्तेमाल किया था उसका मूल अर्थ, "एक ऐसा जन जो आपकी सहायता के लिए बुलाया गया है।" यह उस प्रकार की सहायता है जैसे एक डॉक्टर को पलंग पर पड़े हुए मरीज़ की सहायता करने के लिए बुलाया जाता है, एक

दमकल कर्मचारी को तब बुलाया जाता है जब इमारत में आग लग गई हो, एक वकील को तब बुलाया जाता है जब उसे किसी आपराधिक मामले की पहरवी करनी हो। क्या सहायता है।

यह सहायता अपने आप को, "आहे भर–भर के, जो बयान से बाहर है, विनती करने में प्रस्तुत करती है, या जैसे जे.बी. फिल्पिस अनुवाद करते है, "उसकी आत्मा हमारे भीतर होकर असल में उस व्याकुलता और बैताबी साथ में प्रार्थना करती हैं जो बयान से बाहर है।" यहाँ पर "आहे–भरना" शब्द (Stagnamous) स्टैगनामस, केवल यहाँ पर और प्रेरितों के काम 7:34 में पाया जाता है जहाँ पर स्तिफनुस सनहेद्रित के सामने अपने बचाव के तहत इस शब्द का इस्तेमाल करता है। स्तिफनुस मूसा की बुलाहट का वर्णन करते हुए उस मौके पर परमेश्वर के द्वारा इस्तेमाल किए गए वचनों को दौहरा रहा था : मैंने सचमुच अपने लोगों की जो मिस्र में हैं, दुर्दशा को देखा है और उनकी आह और उनका रोना सुना है... .....

यह कितना विचारोतेज़क है। पिसे जा रहे इस्त्राएलियों के बोझ को केवल आह शब्द से ही प्रगट किया जा सकता है, पवित्र आत्मा हमारी आत्मिक दुर्दशा से पूर्ण उसके बोझ को प्रगट करने में इसी प्रकार की आहें भर–भर के प्रार्थना करता है। ओहो वे बातें जो हमारे जीवन में पाई जाती है जो पवित्र आत्मा को शोकित करती होगी।

इसमें कोई शक की बात नहीं है कि पवित्र आत्मा की प्रार्थनाए प्रभाव–शाली है। पौलूस इसके संदर्भ में तीन कारणों को प्रस्तुत करता है। पहला, परमेश्वर हमारे ह्रदय को जांजता है और केवल वह ही ऐसा कर सकता है। दूसरा, वह आत्मा की मंसा को जानता है... "जानता है कि आत्मा की मनसा क्या है।" तीसरा, वह परमेश्वर की इच्छा के अनुसार प्रार्थना करता है। एक दिन यह कराहट हमारे लिए, जो उसके द्वारा उसके परिवार में उपयुक्त होने के लिए तैयार किया परमेश्वर की नई सृष्टि में प्रवेश करेंगे तो, वह महिमा में बदल जाऐगी।

आ. सुरक्षा पर ज़ोर दिया जाना

इस अध्याय का समापन वचन विश्वासियों की अन्नत सुरक्षा के महान विषय को बेहमर तरिके से बयान करता है। विश्वासियों कों पीलें से ही महिमा के लिए नियुक्त किया गया था(पद 28–30) इस से पूर्व नियुक्ति को बदला नहीं जा सकता जा सकता, क्योंकि इससे वर्तमान, भूतकाल, भविष्य के अगम्य और असमित पहलू छुपे हुए हैं "हम जानते है कि जो लोग परमेश्वर से प्रेम रखते है, उनके लिए सब बाते मिल कर भलाई को उत्पन्न करती है; अर्थात उन्ही के लिए जो उसकी इच्छा के अनुसार बुलाए गए है। यह एक महान वचन है जिसे ज्यादातर कष्टों के समय में इस्तेमाल किया जाता है लेकिन फिर भी इसे इसके सही प्रकाशन में होकर, देखा जाना जरूरी है। जिस प्रकार से एक पेचिदा मशीन के अन्दर बहुत से दांते कात करते है, उसी प्रकार से परमेश्वर के बुलाए गए लोगों के लिए सारी वस्तुएं इसलिए एक साथ मिलकर कार्य

करती है क्योंकि परमेश्वर का उद्देश्य व्यर्थ नहीं किया जा सकता। यद्यपि हम इस अभी न देख पाए, लेकिन एक दिन वह हमें परमेश्वर की सिद्ध योजना में उपयुक्त स्थान पर नज़र आएंगें।

याकुब की कहानी में इसे बहुत ही सुंदर ढंग से दर्शाया गया है। वह अपनी जवरनी में किए कामों की कटनी काट रहा था। युसुफ जा चुका था; रूबेन कलंकित था; यहूदा आदरहीन था; शिमोन और लेवी ने उसके दिल को तोड़ दिया था; दीना अशुद्ध हो चुकी थी; बल्कि शिमोन कैद में था; उसकी प्रिय राहेल मर चुकी थी; और आकाल के कारण उसका परिवार संघर्ष कर रहा था। तब मिस्र से यह मांग आई कि जवान छोटे बैनजामिन को महामहिम गर्वनट के पास में पेश होना है नही ंतो उन्हे कोई भोजन वस्तु नहीं मिल पाऐगीं। बूढ़ा याकूब रोया, "मुझ को तुम ने निर्वशं कर दिया, देखों, युसूफ नहीं रहा, और शिमोन भी नहीं आया, और अब तुम बिनजामिन को भी ले जाना चाहते हो। यह सब विपत्तियाँ मेरे ऊपर आ पड़ी है।" (उत्पत्ति 42:30) कितना गलत वह था! "यह सारी चीज़े" और बहुत सी गुप्त बातें रहस्यमय ढ़ंग से उसकी भलाई के लिए काम कर रही थी, जिसका प्रमाण इस कहानी का अतं प्रस्तुत करता है।"सब बातें मिलकर भलाई को उत्पन्न करती है।"

यह तथ्य कि हमें महिमा के लिए पहले से नियुक्त किया गया है जो एक और वजह से कभी नहीं बदल सकता। पूर्व नियुक्ति का संबंध न केवल मनुष्य की रोज–मरा की बातों से होता है बल्कि परमेश्वर की अन्नत बातों से भी "क्योंकि जिन्हे उसने पहले से जान लिया है उन्हे पहले से ठहराया भी है कि उसके पुत्र के स्वरूप में हो, ताकि वह बहुत भाइयों में पहिलौठा ठहरे। फिर जिन्हे उसने पहले से ठहराया, उन्हें बुलाया भी; और जिन्हे बुलाया, उन्हे धर्मी भी ठहराया है; और जिन्हे धर्मी ठहाराया, उन्हे महिमा भी दी है।" इस अनुछेद में कुछ कठिन परन्तु महत्वपूर्ण शब्द पाए जाते है जैसे "पूर्व–पहचान", पूर्वा – नियुक्ति'', ''बलाए – गए'', धर्मी ठहराए गए'', धर्मी ठहराए गए'', व महीमित किए गए''। भूतकाल की अनश्वरता वर्तमान के शीधता से भागते हुए क्षण और उस अन्नता को जो आने पर है आलिंगन करते है। वे ईश्वरीय चुनाव बनाम मानवीय स्वतंत्र इच्छा की मुश्किल समस्या को तेज प्रकाश में ले आते है, एक ऐसी समस्या जिसका ज़वाब हमारे पास महिमा के इस तरफ या विपरीत दिशा में नहीं है। कुछ लोगों का ऐसा विचार है कि शब्द ''पूर्व–ज्ञान'' सारी समस्याओं की जड़ है। सारा ज्ञान तथ्यों पर आधारित होता है, तर्क यह है; तर्थ्य ज्ञान पर आधारित नहीं होता है। एक तथ्य को प्रदर्शित होने से पहले स्थापित होना आधारित ज़रूरी होता है। मनुष्य का ज्ञान दिये गए तत्वों के ज्ञान पर आधारित होता है। परन्तु परमेश्वर का ज्ञान वहां तक सीमित नहीं होता। वह सर्वज्ञानी परमेश्वर है इसी– लिए उसे पूर्वा ज्ञान रहता है। परन्तु चाहे यह अविश–कार हो या पूर्वा–ज्ञान, ज्ञान हमेशा तथ्यों पर आधारित होता है। उदाहरण के तौर पर जौन ब्राऊन एक दिन मसीह को अपना उद्धारकर्ता करके स्वीकार करते, और अपनी आत्मकथा में लिखते है जिससे एक स्थापित तथ्य सामने आता है। उसके दोस्त और रिश्तेदार इस घटना के होने के बाद उसे जान पाते है

परन्तु परमेश्वर उस घटना को एक हफ्ता, एक महीना, एक वर्ष, एक अंनता पहले उसे जानते थे, लेकिन फिर भी, उसका ज्ञान, जैसे जौन ब्राऊन के मित्रों का ज्ञान, ब्राऊन द्वारा मसीह को ग्रहण करने के पर आधारित है। ''जिन्हे उसने पहले से जान लिया, उन्हें पहले से ठहराया भी है।''

वजह बताने की इस पंक्ति में यहां केवल एक गलती पाई जाती है। आगे वचन इस प्रकार से कहता है ''यदि इसको सरल भाषा में परिवर्तित किया जाए तो समस्या इस प्रकार सामने आती हैः क्या परमेश्वर ने मुझे इसलिए चुना है कि मैंने उसे चुना है या मैनें उसे इसलिए चुना है क्योंकि परमेश्वर ने मुझे पहले चुना है। यदि परमेश्वर ने मुझे इसलिए चुना क्योंकि अपनी पहले से जान लेने वाली योग्यता के अनुसार उसने मुझे मसीह को चुनते हुए देख लिया था, परमेश्वर से उसकी ईश्वरयता को चुरा लेता है। इसका मतलब यह होगा कि जो लोग मसीह को चुनते है उनको छोड़ उसके पास चुनने के लिए कोई विकल्प नहीं बचता उसका 'चयन हमारे चुनाव के चलाए होता है। जिसके द्वारा मनुष्य को प्राथमिकता मिलती है, परन्तु परमेश्वर सर्वश्रेष्ठ है और वह अपनी ही इच्छा के अनुसार कार्य करता है, और जैसे की पाल अपने आगाम्य अध्यायों में दर्शाता है परमेश्वर किसी का आभारी नहीं रहता (9:15–23) दूसरी तरफ अगर मैं यह कहता हूँ कि मैने मसीह का चुनाव इसलिए किया क्योंकि उसने मुझे पहले से चुन रखा था मेरी स्वतत्रं इच्छा के अधिकार (नैतिक–जिम्मेदारी) को चुराता है, और मुझे मात्र एक कटपुतली बना देता है। मनुष्य की स्वतंत्र इच्छा एक धारणा बनकर रह जाती है। क्या मनुष्य और परमेश्वर की इच्छा का मिलाप हो सकता है, या हमें ज़िन्दगी भर तक इस प्रश्न के लिए यूंही चक्कर लगाते रहना पडेगा! आम–तोर पर इसका कोई सटीक ज़वाब नहीं है। अगर होता तो इस समस्या ने सदियों से मसीहियों को विभाजित न किया होता। एक दृष्टान्त शायद आपकी यह समझने में सहायता करे कि परमेश्वर अपनी अर्वक्षेष्ठ इच्छा को पूरा करने के लिए, ज़रूरी नहीं है कि परमेश्वर की इच्छा को रद्द कर दे। मान लिजिये दो लोग शत्रंज खेल रहे है; जिसमें से एक खिलाड़ी खेल में माहिर है और दूसरा बिलकुल नौसिखया। माहिर खिलाड़ी शत्रंज को शुरू करने आगे बड़ाने, उसे समाप्त करने के सैकड़ों पैतरे जानता है, जबकि नया खिलाड़ी बिना कुछ जाने हुए पैदलियों के साथ एक–एक कदम चलता है और उसके पास सीमित ज्ञान होता है। दोनों ही खिलाड़ी अपनी मर्ज़ी से चाल चलने के लिए स्वतंत्र होते है लेकिन माहिर खिलाड़ी बिना अपने विरोधी की स्वतंत्र इच्छा का उलंधन किये हुए, बिना उस चाल को रोके हुए जो उसे कोने में धकेलने के लिए चली जाती है, अपनी चाल चलकर राजा को हासिल कर लेता है!

कुछ इसी तरह से जीवन के खेल में भी है, हममें से हर के जन के पास स्वतंत्र इच्छा है, और हम उसका हज़ारों तरीके से इस्तेमाल करते है। जो भी चुनाव हम करते है वह निर्धारित करता है कि हम अपने जीवन में कैसे बढ़ने वाले है। परन्तु हमारे चयन के ऊपर और उससे परे परमेश्वर का चुनाव होता है। वह हमारी हर एक उस चाल को मात दे देता है जो उसकी ईश्वरी इच्छा के विरोध में चलाई गई

होती है। जब एक व्यक्ति मसीह को स्वीकार करता है तो परमेश्वर उससे यह कहता है ''अब मेरे बेटे मेरी इच्छा को लेकर तुम्हे अपनी इस शत्रंज को जीत लेना है। मैं तुम्हे बताऊंगा कि तुम्हे कौन सी चाल चलनी है। और यदि तुम्हे अच्छा लगे तो तुम अपने जीवन को मेरी इच्छा के अनुसार चलाओगे।'' परमेश्वर कभी भी किसी व्यक्ति की इच्छा का विरोध नहीं करता है। यहां तक कि जब परमेश्वर एक खोई हुई आत्मा को अंधकारम्य (निन्दायुक्त) स्थान पर ठहराता है, तब भी वह अपने सिद्धान्तों को नहीं बदलता। आखिर में वह मसीह को अस्वीकार करने वाले से कहता है, ''तुम मेरे बेटे को उद्धारकर्ता नहीं बना सकते; क्योंकि तुमने प्रभु यीशु को अपने जीवन में स्थान देने से इन्कार कर दिया। अब मैं तुम्हारे चुनाव का आदर करूंगा। तुम सदा तक उसके बगैर जीवित रहोगे; तुम परमेश्वर और मसीह और आशा के बिना अंनता बिताओगें। अतः मनुष्य के पास अपनी स्वतंत्र इच्छा और परमेश्वर के पास उसकी सर्वश्रेष्ठता है।

परमेश्वर हमें अपनी बुद्धि के क्षेत्र में ले आता है वह हमें पहले से ही जानता है हमारी भलाई और (बुराई; वे सारी बातें जो उसे प्रसन्न करती है और जो उसे दर्द पहुँचाती है। इसके पश्चात वह हमें अपनी ईश्वरीय इच्छा के क्षेत्र में ले आता है। वह हमें महिमा के लिए ठहराने व अपने पुत्र के स्वरूप में बनाने के लिए तैयार है। वह हमें उसके वचनों की शान्ति में ले आता है। वह हमें (बुलाता है! उसके प्श्चात वह हमें अपने पखों की छाया में ले आता है। वह हमें धर्मी ठहराता है, वह हमें इतनी त्रुटिहीन, निष्कलंक स्थिति को प्रदान करता है, जो इतनी शुद्ध और दागरहित होती है िकइस धरती पर या नरक या स्वर्ग पर कोई भी शक्ति हमारे खिलाफ दोष नहीं लगा सकती। और इसके प्श्चात वह हमें अपने वैभव में ले आता है। वह हमें महीमेित करता है। असल में यह कृया भूतकाल में लिखी गई है। यह वचन कहता है कि जिन्हे उसने बुलाया है ''उन्हे उसने धर्मी भी ठहराया हैः और जिसको उसने धर्मी ठहराया है उन्हे उसने महिमा भी दी है''

हमें यह देखने के लिये कि हम स्वर्ग में जा रहे है या नहीं जा रहे है हमारी मृत्यु के दिन का इंतज़ार करने की आवश्यकता नहीं है। परमेश्वर के अंनत विचारों के तहत हम लोग पहले ही महिमित कर दिये गए है! एक विश्वासी महिमा के लिए ठहराया जा चुका है।

परन्तु विश्वासियों के मन परिवर्तन और उसकी मृत्यु के बीच के वर्षों के दौरान उससे कुछ ऐसी गलतियाँ हो जाऐ जिससे उसे अपने उद्धार से हाथ धोना पड़े? नहीं! क्योंकि विश्वासी न केवल पहले महिमा के लिए पहले से ठहराया गया है, परन्तु वह महिमा के लिए सुरक्षित भी किया गया है (पद 31–39)। इस अध्याय की महत्वपूर्ण आखरी आयत हर एक उस संभव क्षेत्र को दर्शाती है जो मसीह के प्रेम और उद्धार से अलग कर सकती है और प्रगट करती है कि इन सब पर परमेश्वर की महिमा का पहरा है। पौलुस इन आयतों में हमारी महिमा की आशा की बुनियाद के बारे में बताता है कि उसे कोई नहीं हिला सकता है। ''अतः हम इन बातों के विषय में क्या कहे? यदि परमेश्वर हमारी ओर है तो हमारा विरोधी कौन

हो सकता है जिसने अपने निज पुत्र को भी न रख छोडा, परन्तु उसे हम सब के लिए दे दिया, वह उसके साथ हमें सब कुछ क्यों न देगा? (पद 31,32) हमारी आशा की बुनियाद परमेश्वर का अनुग्रह और परमेश्वर का वरदान है, ''यदि परमेश्वर हमारी ओर है तो हमारे विरोध में कौन हो सकता है!'' इस वाक्य के अतंर इस्तमाल किया गया ''यदि'' किसी संदेहात्मक स्थिती को प्रगट नहीं करता है। परमेश्वर हमारे हमारे साथ है या नहीं है, इस में कोई प्रश्न नहीं उठता। इस शब्द का मतलब है क्योंकि परमेश्वर हमारे साथ है तो कौन हमारा विरोधी हो सकता है? जब हम किसी भी संभव शत्रु की ताकत के बारे में सोचते है सर्वशक्तिमान परमेश्वर की तुलना करने पर वह कमज़ोर साबित होता है।

हमारी महिमा की आशा इस बात पर आधारित है कि परमेश्वर अपने अनुग्रह के साथ हमारे साथ है और उसने अपने पुत्र को हमें दिया है। उसने अपने पुत्र को भी न रख छोड़ा। होरत्यिस बोनार, स्कौटलैंड के एक कवि प्रचारक व लेखक जिनकी कई कविताओं को सराहाया गया रोमियों 8:32 की आत्मा से प्रेरित थे।

धन्य हे प्रभु हमारे प्रभु,
जिसने हमारे लिए अपने प्रिय एकलौते पुत्र को दे दिया,
उपहारों में उत्तम उपहार, एक में ही सारे उपहार
हे प्रभु, हमारे प्रभु।
वह हमें क्या प्रदान न करेंगा!
जो बिना खरीदे ही बहुमूल्य उपहार को दिया
अनतुला,अनकहा और अनसुना,
वह और क्या हम पर न लुटायेगा?

जिसने अपने पुत्र को भी न रख छोड़ा!
यह उस शान्त व बढ़ते हुए भय को रूप है!
यह कठोर विचार को दूर करता है
उसने अपने पुत्र को भी न रख छोड़ा।
यह धर्मी ठहराने वाला परमेश्वर है।
क्या वह अपने अनुग्रह और अपनी क्षमा को वापस ले लेगा?
या जिसने दोष जी उन जंजीरों को तोड़ डाला है।
यह धर्मी ठहराने वाला परमेश्वर है।

मोरिया की पहाड़ी अब्राहम के जीवन का एक महत्वपूर्ण अनुभव था (उत्पत्ति 22) जैस इस कुलपति ने अपनी तीर्थयात्रा को परमेश्वर के साथ अपने पिता का साथ छोड़ने के द्वारा शुरू किया था और जिसका अन्त उसके पुत्र को छोड़ने पर खत्म हुआ। इन अनुभवों में दो सकंट भरे स्थानों के बीच में उसने यरदन की सीचीं गयी तराई को त्याग दिया;सोदोम के राजा के द्वारा दी गयी भेटों को त्याग दिया;मिस्री हाजिरा को त्याग दिया,और यहां तक की अपने प्रिय इश्माईल को भी त्याग दिया। और अब इसहाक को त्याग देना उसके जीवन का सबसे महत्वपूर्ण फैसला था क्योंकि खुद परमेश्वर ने उस पर हस्तक्षेप किया । ''उसने कहा ' उस लड़के पर हाथ मत बढ़ा,और न उससे कुछ करे ;क्योंकि तूने मुझ से अपने पुत्र,वरन अपने इकलौते पुत्र को भी न रख छोड़ा; इससे मैं अब जान गया कि तू परमेश्वर का भय मानता है। सेप्टूआजीन्ट में शब्द ''रख छोड़ा'' ठीक वही शब्द प्रदान करता है जो कि यूनानी भाषा में ''अलग किये जाने '' को दर्शाता है(रोमियों 8:32)। जिस प्रकार से अब्राहम ने अपने पुत्र इसहाक को न रख छोड़ा ठी उसी प्रकार से परमेश्वर ने भी अपने पुत्र यीशु को न रख छोड़ार। पौलुस भी ठीक इसी प्रकार की तस्वीर को खींचता है। यह विश्वास करना मुश्किल है कि अब्राहम परमेश्वर को अपने पुत्र को अर्पित करने के बाद, कुछ और देने से इनकार कर सकता था। इसी प्रकार से देखना भी सम्भव नहीं है कि परमेश्वर के द्वारा अपने पुत्र को देने के पश्चात वह हमसे किसी ओर चीज़ को बचाकर रख सके।अतः जो कुछ हमारे धर्मी ठहराये जाने, हमारे शुद्धिकरण और महिमा के जरूरी है वह परमेश्वर के पुत्र के द्वारा उपहार में दे दिया गया हैं।

एक धनी रोमी का एक पुत्र था जिसने उसकी दिल को तोड़ दिया था और उसका एक दास था जो उसका सारा प्रशासनिक कार्य संभालता था। उसने अपनी मृत्युशय्या पर यह निर्णय लिया िकवह अपने पुत्र को अपनी जायदाद से बेदखल कर देगा, और सब कुद अपने दास,मार्कलस के लिए छोड़ जायेगा। उसने कागजात तैयार करने के बाद ,अपने पुत्र को यह बताने के लिए बुलवाया िकवह क्या कर चुका है। उसने कहा कि ''मैं सब कुछ मार्कलस के नाम कर चुका हूँ''। फिर भी' तुम मेरी सम्पत्ति में से कोई भी एक चीज को चुन सकते हो।'' उसके पुत्र का जवाब था कि ''मैं मार्कलस लेना चाहूँगा''। जब हम मसीह को लेते हैं,तो हमस ब कुछ प्राप्त कर लेते हैं। चार्ल्स वेसली ने विचार को समझ लिया और उसने अपने बहुत ही प्रचलित गीत में इसका वर्णन किया,''यीशु मेरे प्राण का प्रेमी''।

हे मसीह मैं केवल तुझको ही चाहता हूँ;
सारी चीजों से ज्यादा मैं तुझमे पाता हूँ।

पौलुस हमारी महिमा की आशा की पूर्णता पर ध्यान लगाता है। हमारे खिलाफ कोई भी दोष नहीं लगाया जा सकता । पौलुस इस सन्दर्भ में हमारे शत्रु की पूर्ण पराजय पर जोर देता है। ''परमेश्वर के चुने हुए पर कौन दोष लगाएगा? परमेश्वर ही है जो उनको धर्मी ठहराने वाला है''(पद 33)।

जर्कयाह 3 में एक नाटकीय धटना का उल्लेख किया गया है जो इस बात को बखान करेगी।यह हम देखते हैं कि यहोशु महायाजक परमेश्वर के स्वर्गदूत के सामने खड़ा हुआ है और शैतान उसकी दाहिनी ओर उस पर दोष लगाने के लिए खड़ा हुआ है। यहोशु बहुत ही मैले वस्त्र को पहने हुए था, जो परमेश्वर की उपस्थिती में खड़े होने की उसकी योग्यता को दर्शाते हैं। शैतान ने उससे कहा कि,उसके बारे में हमें नही बताया गया है;परन्तु उस अनुच्छेद का अभिप्राय यह है िकवह परमेश्वर को यहोशू के पाप और उसकी अयोग्यता का बतला रहा था ! शैतान एक झूठा और धोखेबाज़ है,परन्तु यह कहते हुए खेद होता है कि ज बवह भाईयों पर दोष लगाने वाले के रूप में प्रगट होता है(प्रकाशितवाक्य 12:10), उसे झूठ का इस्तेमाल करने की जरूरत नहीं पड़ती। उसके पास बहुत बड़ा ऐसा क्षेत्र है जहाँ वह हमारे बारे में सच्चाई बयान कर सकता है। अपने बचाव में कहने के लिए यहोशु के पास में कोई शब्द नहीं था। परन्तु उसके बोलने से पहले ही परमेश्वर ने उसके मुकदमे को अपने हाथ में ले लिया। ''फिर उसने यहोशु महायाजक को यहोवा के दूत के सामने खड़ा हुआ मुझे दिखाया,और शैतान उसकी दाहिनी ओर उसका विरोध करने को खड़ा था। तब यहोवा ने शैताने से कहा से कहा'' हे शैतान,यहोवा तुझको घुड़के! यहोवा जो यरूशलेम को अपना लेता है ,वही तुझ को घुड़के! क्या यह आग से निकाली हुई लुकटी के समान नहीं है ?उस समय तो यहोशू दूत के सामने मैला वस्त्र पहले खड़ा था। तब दूत ने जो उनसे जो खड़े थे कहा,''इसके ये मैले वस्त्र उतारो।'' फिर उसने उससे कहा'' देख,मैं ने तेरा अधर्म दूर किया है, मैं तुझे सुन्दर पहिना देता हूँ।'' तब मैं ने कहा,''इसके सिर पर एक शुद्ध पगड़ी रखी जाए।'' अतः उन्होने उसके सिर पर याजक के योग्य शुद्ध पगड़ी रखी, और उसको वस्त्र पहिनाएः उस समय यहोवा का दूत सामने खड़ा था''(जर्क 3:1–5)। ''परमेश्वर के चुने हुए पर कौन दोष लगायेगो? परमेश्वर उसको धमी ठहराने वाला है।

हमारी महिमा की आशा की परिपूर्णता न केवल हमारे शत्रु की पूरी तरह पराजय पर निर्भर करती है परन्तु हमारे वकील की सिद्ध पहरवी पर भी। ''फिर कौन है जो दण्ड की आज्ञा देगा? मसीह ही है जो मर गया वरन मुर्दो में से जी भी उठा, और परमश्वेर की दाहिनी ओर है, और हमारे लिए निवेदन भी करता है''(पद 34)। यदि कोई आरोप हमारे खिलाफ साबित भी हो जाता है,तो भी कौन दोष लगा सकता है।? क्योकि वह न्यायी यीशु को छोड़ और कोई नहीं है,वही जिसने दण्ड को रद्द कर दिया है(8:1)। वह हमारे लिए –मरा,जी उठा, स्वर्ग पर चढ़ गया और विनती करता है! होने दे कि हमारा विराधी हमारे खिलाफ कोई भी आरोप को गढ़े,परन्तु हमारे सिद्ध मध्यस्थ के छिदे हुए हाथों में सिद्ध जवाब तैयार है। हमें केवल उसी की जरूरत है। विश्वासियों को महिमा के लिए सुरक्षित किया गया है।

उसकी बहस को समाप्त करते हुए, पौलुस हमारी महिमा की आशा की अनन्तता को दर्शाता हुए घोषणा करता है कि कुछ नहीं, बिल्कुल कुछ नहीं, विश्वासी की सुरक्षा को हिला सकती है। ''कौन है जो हम को

मसीह के प्रेम से अलग करेगा?क्या क्लेश,या संकट,या उपद्रव,या अकाल,या नंगाई,या जोखिम, या तलवार? जैसा लिखा है,''तेरे लिये हम दिन भर घात किए जाते हैं; हम वध होनेवाली भेड़ों के समान गिने गए हैं।'' परन्तु इन सब बातों में हम उसके द्वारा जिसने हम से प्रेम किया है जयवन्त से भी बढ़कर हैं(रोमियो 35–37)। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो, कोई भी विरोधी आकर हमें डरा नहीं सकता है! कलीसिया के प्रारम्भ के दिनों से ही,ये सात बातें मसीहीयों के सामान्य शत्रु हैं। पौलुस ने खुद उन सब का सामना किया है और वह अपने व्यक्तिगत अनुभव से कहता है कि इनमें से किसी भी चीज़ में अन्दर हमें परमेश्वर से अलग करने की ताकत नहीं है। बल्कि इसके विपरीत ,ये बातें विश्वास करने वाले ह्रदय को परमेश्वर के नज़दीक लाती हैं। उनको परमेश्वर के द्वारा अनुमति मिलने का मतलब यह नहीं है कि,परमेश्वर ने हमसे प्रेम करना बन्द कर दिया है, क्योंकि जिसको परमेश्वर ने चुना है''(इब्रा0 12'6)।

साम्प्रादायिकों को ''छुट्टी पर गये हुए'' लोगों के रूप में दर्शाया जाता है। इससे पहले की संसार के प्रति मार्क और लीनिन अपने दृष्टिकोण को सामने रखते, मसीही अपने आप को'' वध होने वाली भेडों के समान'' गिनते थे। इन सारी बातों में केवल जयवन्त हीं नहीं ''बल्कि उसके द्वारा जो हमसे प्रेम करता है,जयवन्त से भी बढ़कर हैं।' पतरस इसके मतलब को प्रदर्शित करता है। वह हेरोद के द्वारा गिरफ्तार किया जाता और उस पर मृत्यु दण्ड घोषित किया जाता है। कल पतरस मारा जाने वाला था। याकूब पहले ही हेरोद के हाथों द्वारा मारा जा चुका था, और पतरस जानता था कि हेरोद बिल्कुल दया नहीं करता। हम सोचते है कि यदि हम उस रात उसके कक्ष को देख पाते, तो देख सकते कि वह निडरता के साथ पहले ही मसीह की खातिर अपनी जान देने की ठान चुका था, और इस तरीके से हम एक जयवन्त को देख सकते । परन्तु, हम देखते हैं िकवह तो कम्बल को लपेटे हुए, हेरोद के न्याय से सन्तुष्ट बड़े आराम से चैन से सो रहा था(प्रेरितों 12:1–10)। वह जयवन्त से भी बढ़कर था।

क्योंकि,पौलुस कहता है,'' क्योंकि मैं निश्चय जानता हूँ कि न मृत्यु, न जीवन ,न स्वर्गदूत,न प्रधानताएं,न वर्तमान,न भविष्य न ऊँचाई,न गहराई,और न कोई सृष्टि हमें परमेश्वर के प्रेम से जो हमारे प्रभु मसीह में है,अलग कर सकेगी(38–39)। दूसरे शब्दों में कहा जाये तो, कोई भी भय हमें भयभीत नहीं कर सकेगा। क्या मृत्यु हमें परमेश्वर के प्रेम से अलग कर सकती है? क्योंकि मृत्यु तो हमारी परमेश्वर की महिमा में प्रवेश करने में सहायता करती है। मृत्यु हमारी ''देह से अनुपस्थित'' और उसके बाद ''परमेश्वर के पास उपस्थित'' होने में सहायता करती है(2कुरि05:8)। क्या जीवन हमें परमेश्वर के प्रेम से अलग कर सकता है? बिल्कुल नहीं, क्योंकि यीशु ने कहा, देखों, मैं जगत के अन्त तक तुम्हारे साथ हूँ''(मत्ती 28:20:)। यह डेविड लिविंगस्टन के द्वारा कहा गया था। एफ.डव्ल्यू.बोरेहाम, कहते हैं कि बार बार जब डेविड अपने जीवन की संकट की घड़ियों का सामना करते थे तो '' लिविंगस्टन हमेशा मत्ती 28:20 को इन वचनों के साथ अपनी

डायरी में लिख दिया करते थे कि' ये वचन एक सज्जन पुरूष कहे हैं जो अपने वायदा का पक्का और उनका आदर करता है, तो फिर इस मामले में कुछ और विचार करने की आवश्यकता ही नहीं है। ''
क्या स्वर्गदूत हमें परमेश्वर के प्रेम से अलग कर सकते हैं? नहीं! '' क्या वे सब सेवा दहल करनेवाली आत्माएँ नही, जो उद्धार पानवालों के लिए सेवा कने को भेजी जाती हैं?(इब्रानियों 1:14)। वे हमारे असली घर की यात्रा में हमारे लिए सहायक होते हैं। क्या प्रधानताएँ और सामर्थ्य हमें परमेश्वर के प्रेम से अलग कर सकते हैं। नहीं, क्योंकि परमेश्वर के द्वारा प्रदान किये गये सम्पूर्ण शस्त्रो को पहनकर हम उन्हे खदेड़ सकते हैं(इफिसियों 6:12–17), और इसका सीधा सा कारण यह है कि मसीह ने कलवरी क्रूस पर उनको ''बेनकाब,चकनाचूर, खाली और पराजित'' कर दिया है''(कुलु0 2:15)

क्या वर्तमान में पायी जानी वस्तुएँ हमें परमेश्वर के प्रेम से अलग कर सकती हैं? बिल्कुल नहीं, क्योंकि वह, महान मैं हूँ, वह जो पूरी तरह से वर्तमान के अन्दर कार्य करता है(निर्गमन 3:14;यूहन्ना 8:58)। फिर भविष्य की चीजों के बारे में क्या वे परमेश्वर और मेरे प्रेम के बीच में आ सकती हैं? नहीं बिल्कुल नहीं, क्योंकि यीशु मसीह आने वाला है, और सारी आने वाली बाते, सारी महत्वपूर्ण और सारी सर्वश्रेष्ठ बातें उसी के आगमन में समाई हुई हैं(यूहन्ना 14:1–3;प्रका0 22:20)। क्या हमें ऊँचाई या गहराई जो मसीह में पायी जाती है हमें उसके प्रेम से अलग कर सकती है? नहीं, क्योंकि उसने हमारे लिए अति गहराई को और सर्वोच्च ऊँचाई को नापा है, और स्वंय महिमा की चरमोत्कर्ष पर विराजमान है।

कोई शत्रु हमें डरा नहीं सकता; और कोई भय हमारे पास आ जा नहीं सकता! क्या कोई और सृष्टि हमारे और परमेश्वर के बीच में आ सकती है? नहीं,क्योंकि चाहे कुछ भी हो सृष्टि तो सृष्टि है और जिसने हमें अपने प्रेम से घेर रखा है वह सृष्टिकर्ता'' जो सब के ऊपर परमेश्वर है युगानयुग धन्य हो।'' आमीन(9:5)।
अतः चाहे वह हमारे व्यवहारिक जीवन की बातें हो या फिर आत्मिक क्षेत्र की;चाहे वह समय का मामला हो या फिर अंतरिक्ष का कुछ भी हमें परमेश्वर के प्रेम से अलग नहीं कर सकता। जिस प्रेम ने हमें कीचड़ से बाहर निकाला है,वही प्रेम हमें स्वर्ग के उस कक्ष तक भी उठायेगा । हम इससे ज्यादा और क्या चाह रख सकते है।

हमारा परमेश्वर धन्य है,
जिसने हमारे लिए अपना पुत्र दे दिया,
वरदानों में महान वरदान, सबका एक ही वरदान;
हमारा परमेश्वर धन्य है!
वह क्या न देगा!
जिसने अपना महान वरदान निर्मोल दिया, योग्यता न देखी, ध्यान न दिया कि सुनें या न सुनें,
खोजें या न खोजें,
तो फिर वह क्या न देगा?
उसने अपना पुत्र न रख छोड़ा।
उसी से तो प्रत्येक भय थमता है,
उसी से तो भयानक विचार दूर होता है,
उसने अपना निज पुत्र न रख छोड़ा
परमेश्वर ही न्यायी है।
कौन क्षमा या अनुग्रह की याचना करता है?
कौन अपराध की ज़ंजीर को टूटने पर जोड़ेगा?
परमेश्वर ही तो है जो न्याय करता है।

उत्पत्ति 22 में अब्राहम के जीवन में मोरिय्याह पर्वत का अनुभव वास्तव में उसके जीवन की पराकष्ठा था। वह यात्री जिसने अपने पिता का त्याग किया वहां अपने पुत्र का त्याग करने पर था। इन दो पारखी समयों के मध्य उसने **यरदान** नहीं की हरियाली का त्याग किया था यहां तक कि उसने सदोम के राजा की भेंट, हाजिरा और इश्माएल का त्याग किया। इसहाक की बलि उसके जीवन में एकमात्र महान कार्य था जिसे परमेश्वर ने भी स्वीकार किया था। उत्पत्ति 22:12, "उस लड़के पर हाथ मत बढ़ा, और न उससे कुछ कर; क्योंकि तू ने जो मुझसे अपने पुत्र, वरन् अपने एकलौते पुत्र को भी नहीं रख छोड़ा; इससे मैं अब जान गया कि तू परमेश्वर का भय मानता है।" जिस प्रकार अब्राहम ने अपने एकलौते पुत्र को "न रख छोड़ा" उसी प्रकार परमेश्वर ने भी "अपने एकलौते पुत्र को न रख छोड़ा।" अतः यह मानना कि

परमेश्वर अपना एकलौता पुत्र दे दे और सब कुछ न दे यह बात तो हम स्वीकार नहीं कर सकते। हमारी धार्मिकता, पवित्रता, और महिमा के लिए जो भी आवश्यक है वह सब परमेश्वर के पुत्र के वरदान के साथ हमें दिया गया है।

एक धनवान रोमी मनुष्य के पुत्र के किसी काम से उसका दिल टूट गया था परन्तु उसके दास ने उसकी प्रशंसा का आदेश दिया। मरणशैय्या पर उसने अपने पुत्र को नदखल करके सब कुछ अपने दास को दे दिया। उस दास का नाम मारसेलस था। उसने अपने पुत्र को बुलाकर वसीहत के दस्तावेज़ दिखाए। उसने कहा, "मैंने अपना सब कुछ मारसेलस को दिया है फिर भी तुम मेरी वसीहत से जो चाहो वह चुन लो।" उसने कहा, "मैं मारसेलस को लूंगा।" इसी प्रकार जब हम प्रभु यीशु को चुन लेते हैं तब सब कुछ हमारा हो जाता है। चार्ल्स वेसली ने अपने ही प्रसिद्ध गीत "जीज़स, लवर ऑफ माई सोल" से एक पद चुना,

"हे मसीह तू ही है, जो मैं चाहता हूं।
तुझ में सबसे अधिक मुझे मिलता है"

पौलुस का दूसरा विचार है (ख) हमारी महिमा की आशा की परिपूर्णता। हम पर अब किसी भी प्रकार के दोष लगाए जाने की संभावना नहीं है। यहां पौलुस हमारे बैरी की पूरी पराजय का उल्लेख करता है, "परमेश्वर के चुने हुओं पर दोष कौन लगाएगा? परमेश्वर ही है जो उनको धर्मी ठहराएगा।"(पद 33)

जकर्याह की पुस्तक अध्याय 3 में एक नाटकीय वर्णन है। महायाजक यहोशू परमेश्वर के दूत के समक्ष खड़ा है और शैतान उसके दाहिनी ओर खड़ा उस पर दोष लगाना चाहता है। यहोशू के वस्त्र मैले थे। यह परमेश्वर की उपस्थिति में उसकी अयोग्यता का एक सिद्ध चित्रण है। शैतान के दोषारोपण का उल्लेख तो नहीं किया गया है परन्तु संदर्भ से विदित होता है कि वह यहोशू की निस्सारता और अमर्यादित व्यवहार की चर्चा कर रहा था। शैतान झूठा और धोखा देनेवाला है परन्तु दुःख के साथ कहना पड़ रहा है कि जब वह भाइयों पर दोष लगाने खड़ा होता है (प्रकाशितवाक्य 12:10) तब वह झूठ का सहारा नहीं लेता है। उसके पास हमारे बारे में सच कहने को बहुत कुछ है। यहोशू को अपनी रक्षा में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं थी। इससे पहले कि वह कुछ बोलता परमेश्वर ने कहा—जकर्याह 3:1—5, "फिर उसने यहोशू महायाजक को यहोवा के दूत के सामने खड़ा हुआ मुझे दिखाया, और शैतान उसकी दाहिनी ओर उसका विरोध करने को खड़ा था। तब यहोवा ने शैतान से कहा, "हे शैतान, यहोवा तुझ को घुड़के! यहोवा जो यरूशलेम को अपना लेता है, वही तुझे घुड़के! क्या यह आग से निकाली हुई लुकटी सी नहीं है?" उस

समय यहोशू तो दूत के सामने मैला वस्त्र पहिने हुए खड़ा था। तब दूत ने उनसे जो सामने खड़े थे कहा, "इसके ये मैले वस्त्र उतारो।" फिर उसने उससे कहा, "इसके सिर पर एक शुद्ध पगड़ी रखी जाए।" अतः उन्होंने उसके सिर पर याजक के योग्य शुद्ध पगड़ी रखी, और उसको वस्त्र पहिनाए, उस समय यहोवा का दूत पास खड़ा रहा।"

परमेश्वर के चुने हुओं पर कौन दोष लगाएगा? परमेश्वर ही है जो उनको धर्मी ठहरानेवाला है।

हमारी महिमा की आशा की परिपूर्णता हमारे बैरी की पूरी पराजय पर ही निर्भर नहीं करती है, हमारे वकील के सिद्ध प्रतिवाद पर निर्भर करती है–पद 34, "फिर कौन है जो दण्ड की आज्ञा देगा? मसीह ही है जो मर गया वरन् मुर्दों में से जी भी उठा, और परमेश्वर के दाहिनी ओर है, और हमारे लिए निवेदन भी करता है।" यदि दोष लगाया भी गया तो दण्ड कौन देगा? न्यायी तो प्रभु यीशु के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है। वही तो है जो दण्ड की आज्ञा देता है (8:1)। वह मर गया, वह फिर जी उठा, वह स्वर्ग चला गया, और वहां वह हमारे लिए विनती करता है। बैरी कोई भी दोष लगाए उसके उत्तर में हमारे प्रभु यीशु के कीलों से छिदे हाथ उठ जाते हैं। विश्वासी महिमा के लिए सुरक्षित हैं।

अपने विचारों के अन्त में पौलुस कहता है– (ग) हमारी महिमा की आशा की पराकष्ठा। वह कहता है कि विश्वासी की सुरक्षा को हिलानेवाला कोई नहीं है। "कौन हमको मसीह के प्रेम से अलग करेगा? क्या क्लेश, क्या संकट, या उपद्रव, या अकाल, या नंगाई, या जोखिम, या तलवार? जैसा लिखा है 'तेरे लिए हम दिन भर घात किए जाते हैं; हम वध होनेवाली भेड़ों के समान गिने गए हैं," परन्तु इन सब बातों में हम उसके द्वारा जिसने हमसे प्रेम किया है, जयवन्त से भी बढ़कर हैं।" दूसरे शब्दों में, बैरी हमें हिला भी नहीं सकता। ये सात बैरी विश्वासियों के आरंभ से ही बैरी हैं– कलीसिया के आरंभ से ही। पौलुस ने तो स्वयं इनका सामना किया है और उसका व्यक्तिगत अनुभव है कि वे एक भी आत्मा को प्रभु यीशु से अलग नहीं कर सकते हैं अपितु विश्वासी जन को प्रभु के और अधिक निकट ही लाते हैं। परमेश्वर उन्हें हम पर आने देता है इसका अर्थ यह नहीं कि परमेश्वर ने हमसे प्रेम करना छोड़ दिया है। इब्रानियों 12:6 में लिखा है कि परमेश्वर जिससे प्रेम करता है उसकी ताड़ना भी करता है।

समाजवादियों को "मृतक यात्री" कहा गया है। इससे पूर्व की मावर्स और लेनिन के अनुयायी संसार के साथ संबन्धों के प्रति ऐसा दृष्टिकोण बनाए, विश्वासी तो अपने आप को उससे भी पूर्व "वध के लिए भेड़" मानते रहे हैं। इन बातों में हम विजयी ही नहीं, "हमसे प्रेम करनेवाले के द्वारा जयवन्तों से भी अधिक हैं।"

पतरस इसका अति उत्तम उदाहरण है। हेरोदेस ने उसे बन्दी बना लिया था और अगले दिन उसे मृत्युदण्ड दिया जाना था। याकूब को तो वह पहले ही मृत्युदण्ड दे चुका था। पतरस जानता था कि हेरोदेस निर्दयी है। यदि हम उस रात उसे कारावास में देखते तो वह मसीह के लिए बड़ी दीनतापूर्वक परन्तु साहस धरकर बेझिझक मरने का निर्णय ले चुका था। हम एक विजेता को देख सकते थे। वह अपने बिछौने में शान्तिपूर्वक सो रहा था। यह हेरोदेस की योजना (प्रेरितों के काम 12:1–10) की अवज्ञास्वरूप था। वह जयवन्त से भी बढ़कर था।

"क्योंकि मैं निश्चय जानता हूं कि न मृत्यु, न जीवन, न स्वर्गदूत, न प्रधानताएं, न वर्तमान, न भविष्य, न सामर्थ्य, न ऊंचाई, न गहराई, और न कोई और सृष्टि हमें परमेश्वर के प्रेम से जो हमारे प्रभु मसीह यीशु में है, अलग कर सकेगी।" दूसरे शब्दों में कोई भी बैरी हमें टस से मस नहीं कर सकता है। क्या मृत्यु हमें परमेश्वर के प्रेम से अलग कर सकती है? कदापि नहीं! मृत्यु तो स्वयं ही विश्वासी को महिमा में लाती है। मृत्यु हमें इस देह में अनुपस्थित और प्रभु यीशु के साथ उपस्थित करती है। (2 कुरिन्थियों 5:8)। क्या जीवन हमें प्रभु के प्रेम से अलग कर सकता है? कदापि नहीं! मत्ती 28:20 में प्रभु यीशु कहता है, "देखो, मैं सदा तुम्हारे साथ हूं, संसार के अन्त तक!" यही डेविड लिविंगस्टोन का मुख्य पद था। एफ.डब्ल्यू बोरहम कहते हैं अपने जीवन के संकटों में वह सदा मत्ती 28:20 अपनी डायरी में लिख लेते थे, जिसके साथ वह यह भी लिखते थे, "ये शब्द उस सज्जन के हैं जो पवित्र एवं अटल सम्मान से आभूषित था, अतः अन्त यही है।"

क्या स्वर्गदूत हमें परमेश्वर के प्रेम से अलग कर सकते हैं? इब्रानियों 1:14 में लिखा है, "क्या वे उद्धार के वारिसों की सेवा में भेजी गई सेवक आत्माएं नहीं हैं?" वे अनदेखे संसार में भीड़ किए हुए हैं कि हमें घर ले जाने का काम करें। क्या प्रधानताएं और अधिकार हमें परमेश्वर के प्रेम से अलग कर सकते हैं? कदापि नहीं, परमेश्वर के हथियारों से सुसज्जित हम उन्हें भगाने पर विवश कर देते हैं (इफिसियों 6:12–17)। इसका एकमात्र कारण है कि प्रभु यीशु ने क्रूस पर उन्हें प्रकट कर दिया है, उन्हें चूरचूर कर दिया है। वे निहत्थे और पराजित हैं। (कुलुस्सियों 2:15)

क्या वर्तमान वस्तुएं हमें परमेश्वर के प्रेम से अलग कर सकती हैं? नहीं, वह "मैं हूं" है। वह वर्तमान में भी अेनन्त है। (निर्गमन 3:14; यूहन्ना 8:58)। अब आनेवाली बातें? क्या वे हमारे और परमेश्वर के प्रेम के बीच बाधा उत्पन्न कर सकती हैं? नहीं, क्योंकि प्रभु यीशु आनेवाला है और सब भावी बातें अर्थात सब मुख्य एवं महत्वपूर्ण बातें उसी की हैं। (यूहन्ना 14:1–3; प्रकाशितवाक्य 22:20) क्या ऊंचाई और गहराई हमें मसीह

में परमेश्वर के प्रेम से अलग कर सकती हैं? क्योंकि वह हमारे कारण सबसे गहरे में उतरा और सबसे ऊंचे पर चढ़ गया है और स्वर्ग में महिमा के शिखर पर विराजमान है।

कोई भी बैरी हमें हिला नहीं सकता है। कैसा भी भय हमें डरा नहीं सकता! क्या हमारे और परमेश्वर के बीच कोई भी प्राणी आ सकता है? क्योंकि प्राणी मात्र एक प्राणी है और हमसे प्रेम करनेवाला सृजनहार है। "परमेश्वर युगानुयुग धन्य हो!" अतः अनुभव की बातें हों या आत्मिक संसार के प्राणी, समय या अन्तरिक्ष, परमेश्वर के प्रेम से हमें वंचित करनेवाला कोई नहीं है। वही प्रेम जिसने हमें कीचड़ से उभारा, हमें स्वर्ग में भी उठा लेगा। इससे बढ़कर हम और क्या मांगें?

भाग 2

सुसमाचार की समस्याएं

9:1—11:36

इस्राएल के साथ परमेश्वर का पूर्वकालिक व्यवहार

9:1—33

I. यहूदियों के लिए पौलुस की बेचैनी (9:1—3)

क) कैसी पावन अभिव्यक्ति! (9:1)
ख) कैसी गंभीरता से व्यक्त किया गया! (9:1)
ग) कैसा विनम्र मूल्यांकन (9:2—3)

II. यहूदी समस्या का पौलुस द्वारा विश्लेषण (9:4—33)

क) समस्याओं के प्रति पौलुस का दृष्टिकोण (9:4—29)
   1) इस्राएल के साथ परमेश्वर के अनुग्रहकारी व्यवहार (9:4—5)
   2) इस्राएल के साथ परमेश्वर का व्यवस्था संबन्धित व्यवहार (9:6—29)
      i. उसकी सर्वोच्च बुद्धि पर आधारित (9:6—13)
      ii. उसकी परमप्रधान इच्छा पर आधारित (9:14—24)

iii. उसके उच्चारित वचन पर आधारित (9:25–29)

ख) समस्या का निष्कर्ष (9:30–33)

1) अन्यजातियों की धार्मिकता प्राप्ति –विश्वास के द्वारा (9:30)

2) यहूदियों द्वारा धार्मिकता पाने का प्रयास–असफलता (9:31–33)

i. स्पष्ट उल्लेख (9:31–32)

ii. धर्मशस्त्र आधारित व्याख्या (9:33)

पौलुस अपनी पत्री के प्रथम मुख्य भाग के अन्त में आता है। उसने सुसमाचार के सिद्धान्तों की चर्चा करते हुए मनुष्य के पापों का चित्रण अनेक आधारों पर व्यक्त करता है, उसके उद्धार और पवित्रीकरण का भी वर्णन करता है। अगले तीन अध्यायों में वह सुसमाचार की समस्याओं का उल्लेख करेगा, विशेष करके वे समस्याएं जो यहूदियों से संबन्धित हैं।

परमेश्वर ने अब्राहम, इसहाक, याकूब, मूसा, दाऊद और सुलैमान से अति महान एवं अनमोल प्रतिज्ञाएं की थीं। इनमें से अधिकांश प्रतिज्ञाएं प्रभु यीशु में केन्द्रित थीं जिसको यहूदियों ने कलवरी पर क्रूस पर मृत्यु दी थी। अपने प्रेम के वशीभूत परमेश्वर ने उस जाति को एक और अवसर दिया कि उसके भयानक दण्ड से वे मन फिराव और विश्वास के द्वारा बचें और प्रभु यीशु को उद्धारकर्ता स्वीकार करें। प्रेरितों के काम की पुस्तक जो कलीसिया का इतिहास है और पौलुस की भी उसमें मुख्य भूमिका है, इस दूसरे अवसर का लेखा सुभाती है। परन्तु यहूदियों ने प्रभु यीशु के दण्ड की पुष्टि की और उसे फिर से अस्वीकार किया।

जिस समय पौलुस रोम की कलीसिया को पत्र लिख रहा था उस समय यरूशलेम का मन्दिर विद्यमान था और वहां बलिदान और अर्थहीन रीति–रिवाज़ पूरे किए जा रहे थे। उस जाति का भविष्य अभी क्षितिज में अन्धियारा नहीं हो रहा था। परन्तु पौलुस जानता था कि मसीही विश्वास यहूदी धर्म का अन्त था। अपने मन फिराव से पूर्व भी वह जानता था कि मसीही विश्वास और यहूदी मत एक साथ निर्वाह नहीं कर पाएंगे। यही कारण था कि मसीही अनुयायियों के प्रति कड़वाहट से भरा उन्हें नष्ट करना चाहता था। अब एक परिपक्व विश्वासी और अन्यजातियों का प्रेरित होने के कारण वह जानता था कि यहूदियों में सुसमाचार के साथ जो समस्या उत्पन्न हो रही है उसे समझना उसके लिए आवश्यक है। अब उन सब प्राचीन प्रतिज्ञाओं का क्या होगा? क्या वे निरस्त की जा चुकी हैं? इस नये युग में यहूदियों का परमेश्वर की

दृष्टि में क्या स्थान है? सुसमाचार की कैसी भी गहन व्याख्या इन प्रश्नों का इन्कार नहीं कर सकती है। यही कारण है कि इस पत्री में यहां यह महान बल दिया गया है।

इन अध्यायों में पौलुस पहले पूर्व समय की ओर तदोपरान्त वर्तमान तथा अन्त में भविष्य की चर्चा करता है। वह आगे के अध्यायों में व्यक्त करता है कि इस्राएल के साथ परमेश्वर के पूर्वकालिक व्यवहारों में परमेश्वर की प्रभुता है और उसके साथ उसके वर्तमान व्यवहार में उसका उद्धार है और भविष्य की प्रतिज्ञाओं में उसकी विश्वासयोग्यता का प्रदर्शन है। अतः रोमियों के अध्याय 9 में वह इस्राएल के साथ परमेश्वर के पूर्वकालिक व्यवहार की सावधानीपूर्वक चर्चा करता है और वह परमेश्वर की प्रभुता पर आधारित है।

I. यहूदियों के लिए पौलुस की बेचैनी! (9:1–3)

इन अध्यायों में पौलुस जिन समस्याओं को साधना चाहता है वे उसकी शैक्षणिक रूचि नहीं है। वह उसमें गहराई से और मनोवेग से उलझा हुआ है। ऐसी समस्या जो उसके हृदय को गहरे दुःख से मरोड़ रही है।

क) कैसी पावन अभिव्यक्ति! (9:1)

पौलुस अपनी जाति के लिए प्रेम और दुःख को व्यक्त करते हुए कहता है, "मैं झूठ नहीं बोल रहा और मेरा विवेक भी पवित्र आत्मा में गवाही दे रहा है।" यहूदियों ने उसे पीटा था, उसे जेल में डाला था, उसे कोसा था, उसे जाति–बाहर कर दिया था। वह जहां भी जाता वे उसके विरुद्ध उपद्रव खड़ा कर देते थे। प्रेरितों के काम 15 के मुक्तिदायक निर्णय के उपरान्त भी यहूदी अन्यजाति विश्वासियों को यहूदी विधियों का पालन करने पर विवश कर रहे थे जिसके कारण सुसमाचार को हानि पहुंच रही थी। पौलुस को सन्देह था कि उसकी प्रेम की अभिव्यक्ति उनके द्वारा अस्वीकार की जाएगी। अतः वह पावन शपथ खाकर कहता है।

ऐसा प्रेम प्राकृतिक नहीं है। वह अलौकिक है और आत्मा का फल है। (गलातियों 5:22)। यही प्रेम आज मिशनरियों को कोढ़ियों में, असुरम्य मनुष्यों में, आदिवासियों में, क्रूर एवं हिंसक जातियों में और महानगरों की झुग्गियों में सेवा हेतु प्रेरित करता है। यही वह प्रेम है जो कलीसियाई इतिहास के ज्योतिर्मय

पृष्ठों की रचना करता है। वह नरभक्षियों में पेटन को, अफ्रीका के जंगलों में लिविंगस्टन को, बर्मा में जडसन् को, यह वह प्रेम है जिसको बहुत जल भी बुझा नहीं सकता। यह प्रेम मृत्यु से भी अधिक बलवन्त है–1 कुरिन्थियों 13 का प्रेम। यह प्रेम प्रभु यीशु का है जिसे पवित्र आत्मा हमारे मन में उपजाता है। यही वह प्रेम है जिसने परमेश्वर के पुत्र को हमारे लिए मरने हेतु सर्वोच्च स्वर्ग से नीचे उतारा– क्रूस पर लहू बहाकर लज्जा की परवाह किए बिना कलवरी पर जान दी। "मैं झूठ नहीं बोल रहा और मेरा विवेक भी पवित्र आत्मा में गवाही देता है।" पौलुस अपने यहूदी भाइयों में अपने प्रेम को व्यक्त करता है।

ख) यह कैसी गंभीरता से व्यक्त किया गया है (9:1)

पौलुस के प्रेम की अभिव्यक्ति ऐसी आश्चर्यजनक, ऐसी सर्वोत्तम, ऐसी क्रान्तिपूर्ण है कि उसे गवाह की आवश्यकता है कि उसके कथन की सत्यता को सत्यापित करे। "मैं मसीह में सच कहता हूं, मैं झूठ नहीं बोल रहा हूं और मेरा विवेक भी पवित्र आत्मा में गवाही देता है।" उसका विवेक पवित्र आत्मा में **सधा** हुआ गवाही दे रहा था। मनुष्य के विवेक को सदा ही विश्वासयोग्य न समझें परन्तु पवित्र आत्मा द्वारा पुनर्जीवित और संवेदनशील विवेक पर विश्वास किया जा सकता है। पौलुस का विवेक स्वयं ही पवित्र आत्मा द्वारा जीवित एवं ज्योतिर्मय था। अतः पौलुस की सत्यता की गवाही दे सकता था।

ग) विनम्रतापूर्वक मूल्यांकन (9:2–3)

अब पौलुस के दुःख की अभिव्यक्ति है, "मुझे बड़ा शोक है, और मेरा मन सदा दुःखता रहता है क्योंकि मैं यहां तक चाहता था कि मेरे भाइयों के लिए जो शरीर के भाव से मेरे कुटुम्बी हैं, स्वयं ही मसीह से शापित हो जाता।" अलफोर्ड का कहना है कि यह शब्द "शापित" यूनानी में "अनाथेमा" है जिसका अर्थ अलगाव या बहिष्कार नहीं वरन् विनाश को समर्पित है अर्थात शाप। यहां इसका अभिप्राय अनुचित अर्थों में व्यक्त किया गया है–बहिष्कार या शारीरिक मृत्यु। बहिष्कार में श्राप और शैतान को सौंपने का भाव है। परन्तु शारीरिक मृत्यु इस संदर्भ की मर्यादा के अधीन ही है। क्रिसोस्टम कहते हैं, "पौलुस में आत्माओं को प्रभु के लिए जीतने का मनोवेग, विशेष करके उसकी यहूदी भाइयों को, ऐसा तीव्र था कि वह उनके स्थान पर नरक जाने को भी तैयार था, अनन्त विनाश के लिए भी तैयार था, यदि उसके ऐसा करने से वे प्रभु यीशु मसीह के उद्धार ज्ञान को प्राप्त कर लें। इसमें शक नहीं कि पौलुस ऐसा महान आत्मा–विजेता था।"

II. यहूदियों की समस्या का विश्लेषण (9:4–33)

पौलुस यहूदियों की समस्या को स्पष्ट समझ कर अन्तर्ग्रहण कर चुका था। उनकी समस्या बौद्धिक रूप से ही नहीं थी। परन्तु विनम्रता प्रदान करनेवाली और चुनौती देनेवाली थी। वह उन समस्याओं के प्रति अपनी भावना व्यक्त करता है और अपनी भावनाओं को व्यक्त करता है।

क) समस्याओं के प्रति पौलुस का दृष्टिकोण (9:4–29)

यहूदियों द्वारा प्रभु यीशु के त्याग में सबसे पहली बात जो पौलुस देखता है और उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न प्रश्न जो परमेश्वर की योजना में यहूदियों की स्थिति के संबन्ध में उठता है, वह है (1) पूर्वकाल में यहूदियों के साथ परमेश्वर का व्यवहार। इसमें शक नहीं कि यहूदियों को परमेश्वर का विशेष अनुग्रह प्राप्त था। पौलुस उनके लिए कहता है कि, पद 4–5, "वे इस्राएली हैं और लेपालकपन का अधिकार और महिमा और वाचाएं और व्यवस्था और उपासना और प्रतिज्ञाएं उन्हीं की हैं। पुरखे भी उन्हीं के हैं, और मसीह भी शरीर के भाव से उन्हीं में से हुआ। सबके ऊपर परम परमेश्वर युगानुयुग धन्य हो। आमीन।"

सौभाग्यों की यह एक अद्‌भुत सूची है। इस्राएली उनका जातिवाचक नाम ही नहीं था, सम्मानसूचक नाम भी था। (उत्पत्ति 32:28; होशे 12:3; यूहन्ना 1:47; 2 कुरिन्थियों 11:22; फिलिप्पियों 3:5) "लेपालक" शब्द निर्गमन 4:22 तथा होशे 4:1 से आया है। जहां परमेश्वर ने इस्राएल पुत्र की उपभावी की और कहा था कि इस्राएल अन्यजातियों की तुलना में उसके साथ विशेष संबन्धों में है। महिमा बादल रूप में–शकीना–मिलापवाले तम्बू पर मंडराती थी (निर्गमन 40:34–35; 1 राजा 8:10–11; 2 इतिहास 5:13;) वाचाओं में अब्राहम के साथ बन्धी वाचा (उत्पत्ति 12:1–3, 15:1–7, 17:1–8); और इन वाचाओं का इसहाक तथा याकूब के साथ दोहराया जाना (उत्पत्ति 26:2–5, 28:1–3, 12–15) मूसा की व्यवस्था के साथ वाचा (निर्गमन 20–21) और भूमि (व्यवस्थाविवरण 29–30) दाऊद के साथ वाचा (2 शमूएल 7:16; 1 इतिहास 17:7–15; भजन संहिता 89:27) तथा नई वाचा (यिर्मयाह 31:33; यहेजकेल 34) व्यवस्था मूसा की व्यवस्था थी जो आज तक की प्रतिपादित विधान संहिताओं में सबसे बड़ी है। उपासना अर्थात मूसी का व्यवस्था–निर्गमन और लैव्यव्यवस्था– से संबन्धित आराधना। "प्रतिज्ञाएं" पुराने नियम के तानेबाने में बुनी हुई मसीह की और प्रभु राज की प्रतिज्ञाएं हैं। "पुरखे" अर्थात अब्राहम, इसहाक, याकूब, मूसा तथा अन्य महापुरुष जो इस्राएल की राष्ट्रीय धरोहर तथा पुराने नियम की जीवनियां थे।

इन सब महान सौभाग्यों से बढ़कर एक और सौभाग्य था जो इन सबको ग्रहण लगाता था। पौलुस अच्छा दाखरस अन्त के लिए बचा रखता है–पद 5, "मसीह भी शरीर के भाव से उन्हीं में से हुआ।" इससे अधिक और क्या कहा जा सकता है? इस्राएल के साथ परमेश्वर का अनुग्रहकारी व्यवहार जो किसी मनुष्य को कभी मिले वह सर्वोच्च एवं महान सम्मान का मुकुट था। मसीह एक यहूदी माता से जन्मा और एक इब्रानी परिवार में पालापोसा गया। उसने यहूदी आराधनालय में यहूदी विधि की शिक्षा ली, वह प्रतिज्ञा के देश में रहा और वहीं जीवन निर्वाह किया। उसने इस्राएल के घराने की खोई हुई भेड़ों (मत्ती 15:24) में सेवा की। यूहन्ना 1:11, "वह अपनों में आया और अपनों ने उसे ग्रहण नहीं किया।" उसने अपने प्रियों में, दाख की बारी का गीत गाया परन्तु इस्राएली की दाख खट्टी थी। (यशायाह 5:1–7)

इस्राएल के साथ परमेश्वर के पूर्वकालीन व्यवहार को देखकर पौलुस बहुत प्रभावित था (2) इस्राएल के साथ परमेश्वर की पूर्वकालिक व्यवस्था। पौलुस ने स्पष्ट देखा कि अनुग्रह व्यवस्था के आधार पर नहीं प्राप्त किया जाता है और इस्राएल के साथ परमेश्वर का पूर्वकालिक व्यवहार सदैव परमेश्वर की बुद्धि, उसकी इच्छा और उसके वचन के अनुकूल था। परमेश्वर के मार्ग चतुराई के नहीं हैं। उनमें अटल और धार्मिक सिद्धात निहित हैं।

इस्राएल के साथ परमेश्वर का पूर्वकालिक व्यवहार उसकी असीम बुद्धि पर आधारित था। परमेश्वर अपनों को पहचानता/जानता है– पद 6–7, "परन्तु यह नहीं कि परमेश्वर का वचन टल गया, इसलिये कि जो इस्राएल के वंश हैं; वे सब इस्राएली नहीं, और न अब्राहम के वंश होने के कारण, सब उसकी सन्तान ठहरे परन्तु (लिखा है) इसहाक ही से तेरा वंश कहलाएगा।" अधिकांश इस्राएलियों को परमेश्वर ने त्याग दिया, इसका अर्थ यह नहीं कि परमेश्वर की प्रतिज्ञाएं चूक गई क्योंकि परमेश्वर की बुद्धि में परिव्यक्त यहूदी परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं के वारिस नहीं माने गए हैं। अतः इस्राएली अपनी वंशावली से नहीं परमेश्वर की समझ से गिने गए हैं।

पौलुस अपने अभिप्राय को समझाने के लिए पुरखों के इतिहास से दो उदाहरण देता है जिनसे प्रकट होता है कि आत्मिक आशीषें प्राप्त करने के लिए आवश्यक नहीं कि पुरखों के वंश में जन्म लें। पहला, इस्राएल और इसहाक। दोनों ही का जन्म अब्राहम से हुआ था परन्तु परमेश्वर ने एक ही को चुना था। दूसरे को उसने त्याग दिया। दूसरा एसाव और याकूब। दोनों एक ही परिवार के जुड़वा थे। उनमें से भी परमेश्वर ने एक ही को चुना था –दूसरे को त्याग दिया था। पौलुस इन दोनों के संदर्भ में कहता है– पद 7–13, "और न अब्राहम के वंश होने के कारण सब उसकी सन्तान ठहरे, परन्तु (लिखा है) "इसहाक ही

से तेरा वंश कहलाएगा।" अर्थात् शरीर की सन्तान परमेश्वर की सन्तान नहीं, परन्तु प्रतिज्ञा की सन्तान वंश गिने जाते हैं। क्योंकि प्रतिज्ञा का वचन यह है: "मैं इस समय के अनुसार आऊंगा, और सारा के पुत्र होगा।" और केवल यही नहीं, परन्तु जब रिबका भी एक से अर्थात् हमारे पिता इसहाक से गर्भवती थी, और अभी तक न तो बालक जन्मे थे, और न उन्होंने कुछ भला या बुरा किया था; इसलिये कि परमेश्वर की मनसा जो उसके चुन लेने के अनुसार है, कर्मों के कारण नहीं परन्तु बुलानेवाले के कारण है बनी रहे: उसने कहा, "जेठा छोटे का दास होगा।" जैसा लिखा है, "मैं ने याकूब से प्रेम किया, परन्तु एसाव को अप्रिय जाना।"

परमेश्वर की बुद्धि में इसहाक चुना गया, इश्माएल नहीं। याकूब चुना गया, एसाव नहीं। दोनों ही उदाहरणों में इतिहास परमेश्वर की बुद्धि में चुनाव की दूरदर्शिता प्रकट करते हैं। इश्माएल से अरब जाति उत्पन्न हुई जो आज तक इस्राएल के जानी दुश्मन हैं। एसाव से एदोम जाति उत्पन्न हुई जो इस्राएल के प्राचीनकाल के पड़ोसियों में सबसे अधिक बदला लेनेवाले हुए। समय के साथ ही इश्माएल और एसाव दोनों ही ने परमेश्वर से विद्रोह किया। जबकि इसहाक और याकूब ने परमेश्वर की बातों से लगाव रखा था।

परमेश्वर की बुद्धि के अनुसार ही वह चुनाव करता है, किसी मनुष्य की योग्यता के अनुसार नहीं। दोनों ही उदाहरणों में पौलुस दर्शाता है कि वे उसके पुरखों के परिवार में जन्मे थे और दोनों ही के लिए उनके परिवार परमेश्वर की आशीषों की मनोकामना करते थे। उत्पत्ति 17:18 में अब्राहम परमेश्वर से इश्माएल के लिए विनती करता है।

इसहाक ने भी यथासंभव एसाव को पुरखों की आशीषें देना चाही थीं (उत्पत्ति 27:1–4, 30–33)। पौलुस के कहने का अर्थ यह है कि परमेश्वर ने इस्राएल के साथ जो व्यवहार किया वह उसकी व्यवस्था, उसकी बुद्धि और उसकी प्रभुता के आधार पर था परन्तु इसलिए नहीं कि वे अब्राहम, इसहाक, और याकूब की सन्तान थे और प्रतिज्ञा की सन्तान होने के कारण वह उनका अधिकार था।

इस्राएल के साथ परमेश्वर का पूर्वकालीन व्यवहार उसकी बुद्धि ही नहीं उसकी परमप्रधान इच्छा के आधार पर भी था। परमेश्वर मनुष्य को अपने मार्ग समझाने के लिए बाध्य नहीं है। वह परमप्रधान है और जैसा चाहता है वैसा ही करता है। क्योंकि वह परमेश्वर है, उसका हर एक कार्य उचित ही होता है और बुद्धि और ज्ञान में सीमित मनुष्य को वैधानिक अधिकार नहीं देता कि उससे प्रश्न करे। मनुष्य की नैतिक एवं आत्मिक क्षमताएं पाप के कारण सीमित हो गई हैं। रोमियों की पत्री का यह अगला अध्याय परमेश्वर की प्रभुता पर बाइबल का सबसे महान आख्यान है। पौलुस इस्राएल के इतिहास से सिद्ध करता है कि

परमेश्वर ने अपनी प्रभुता में चूकनेवाले इस्राएलियों को क्षमा किया (पद 14–15) और फिरौन को दण्ड दिया (पद 16–18) दोनों ही उदाहरण अत्यधिक ज्ञानवर्धक हैं।

पहला उदाहरण है, जंगल में इस्राएल की मूर्तिपूजा। अभी मूसा सीनै पर्वत पर से आज्ञाएं लेकर उतर ही रहा था कि उसने देखा, इस्राएल परमेश्वर को त्याग सोने के बछड़े की पूजा कर रहे हैं (निर्गमन 32) उसने भावुक होकर उन पत्थर की तख्तियों को तोड़ डाला और उस सोने के बछड़े को पीसकर उनके पीने के पानी में घोल दिया तथा उन्हें उसे पीने पर विवश किया। तदोपरान्त उसने उन्हें चुनौती दी, "परमेश्वर की ओर कौन है?" केवल लेवियों का गोत्र खड़ा हुआ और मूसा ने उन्हें आदेश दिया कि वे शेष इस्राएलियों को तलवार से नष्ट कर दें। तब उसने परमेश्वर से मध्यस्थता की जो रोमियों 9 में पौलुस के मनोभाव के सदृश्य थी (निर्गमन 32:31–33)। परमेश्वर बहुत क्रोधित था। उसने कहा कि अब वह इस्राएल की अगुआई स्वयं नहीं करेगा परन्तु एक स्वर्गदूत को नियुक्त करेगा। मूसा ने फिर परमेश्वर से प्रभावी और प्रबल शब्दों में याचना की जिनका उल्लेख पौलुस यहां करता है है कि परमेश्वर की प्रभुता के अधीन उसकी क्षमा का वर्णन करे। पद 14–16, "इसलिये हम क्या कहें? क्या परमेश्वर के यहां अन्याय है? कदापि नहीं। क्योंकि वह मूसा से कहता है, "मैं जिस किसी पर दया करना चाहूं उस पर दया करूंगा, और जिस किसी पर कृपा करना चाहूं उसी पर कृपा करूंगा।" अतः यह न तो चाहनेवाले की, न दौड़नेवाले की परन्तु दया करनेवाले परमेश्वर की बात है।" पौलुस क्या निष्कर्ष निकालता है? यह कि परमेश्वर ने इस्राएल पर दया की। उस जाति ने तो आशीष पाने का अधिकार खो दिया था परन्तु परमेश्वर ने फिर भी उनको दया दिखाई। अतः परमेश्वर की प्रभुता दया का निराकरण नहीं करती है। यदि कोई उसकी दया का पात्र है तो वह केवल उसकी दया के कारण ही है। दया के इस उदाहरण से पौलुस का अगला उदाहरण कुछ कोमल प्रकट होता है–फिरौन को दण्ड देना।

पद 17–18, "क्योंकि पवित्रशास्त्र में फिरौन से कहा गया, "मैं ने तुझे इसी लिये खड़ा किया है कि तुझ में अपनी सामर्थ्य दिखाऊं, और मेरे नाम का प्रचार सारी पृथ्वी पर हो।" इसलिये वह जिस पर चाहता है उस पर दया करता है, और जिसे चाहता है उसे कठोर कर देता है।" परन्तु हमें दो सीमाओं को पार करने से बचना है– परमेश्वर की दया पर सर्वाधिकर बल देना और यह कि परमेश्वर किसी को अनन्त दण्ड देने में अधिकाधिक दयावान है। दूसरी सीमा है, परमेश्वर की प्रभुता पर इतना अधिक बल देना कि फिरौन जैसी ह्रदय की कठोरता का उसे उत्तरदायी ठहराना। क्योंकि धर्मशास्त्र का कोई भी अंश व्यक्तिगत व्याख्या के लिए नहीं है (2 पतरस 1:20)। इसलिए धर्मशास्त्र की व्याख्या संदर्भरहित न हो और वचन के उन अन्य भागों से रहित न हो जो उस पर प्रकाश डालते हैं। अतः इस संदर्भ जैसे कठिन बाइबल अंश के लिए

आवश्यक है कि इसका संपूर्ण बाइबल आधारित परिप्रेक्ष्य देखें। फिरौन के साथ परमेश्वर के व्यवहार का इतिहास निर्गमन 1–14 में दिया गया है।

एलफ्रेड एडरहीम बड़ी अच्छी तरह समझाते हैं कि जब परमेश्वर ने फिरौन का हृदय कठोर किया तब क्या हुआ था। इस ऐतिहासिक वृत्तान्त में फिरौन के हृदय का कठोर किया जाना दो बार दस की संख्या में व्यक्त किया गया है। हमारी भाषा में तो केवल एक ही शब्द "कठोर" काम में लिया गया है परन्तु मूल भाषा इब्रानी में कठोर शब्द की तीन अभिव्यक्तियां हैं जैसे निर्गमन 7:3 में जहां "कठोर" का अर्थ वास्तव में मन का कठोर या विवेकरहित होना है। दूसरा निर्गमन 10:1 में है जिसका मूल अर्थ है, मन बोझिल होना अर्थात जिस पर कोई असर नहीं होता है तथा तीसरा है, निर्गमन 14:4 अर्थात जो टले नहीं। यह भी एक रोचक बात है कि 20 अंशों में फिरौन की कठोरता का उल्लेख किया गया है जिसमें कवल दस ही फिरौन के संबन्ध में हैं शेष दस परमेश्वर की कठोरता व्यक्त करते हैं। दोनों ही वर्णनों में यही तीन शब्द काम में लिए गए हैं। दोनों ही का कारण एक है। आगे चलकर हम देखते हैं कि केवल दो संदर्भों को छोड़कर, जब मूसा फिरौन की चेतावनी के लिए परमेश्वर की कठोरता का उल्लेख करता है, वह पहले से ही दर्शाई गई है। अन्यथा कठोरता इतिहास का परिप्रेक्ष्य है जो पहले तो फिरौन से संबन्धित है। इस प्रकार दस विपत्तियों से पूर्व जब हारून ने अपनी लाठी डालकर सांप बनाया था उस समय फिरौन का मन अपने आप ही कठोर हुआ था। (निर्गमन 7:13–14) इसी प्रकार पहली पांच विपत्तियों के बाद (निर्गमन 7:22, 8:15, 19, 32, 9:7) भी फिरौन का मन अपने आप ही कठोर हुआ था। परन्तु छठवीं विपत्ति के विरोध में हम देखते हैं कि परमेश्वर ने उसके मन को कठोर किया था (निर्गमन 9:12) परन्तु फिर भी मन फिराव का अवसर दिया गया और सातवीं विपत्ति के बाद फिरौन ने फिर अपना मन कठोर किया (निर्गमन 9:34) परन्तु आठवीं विपत्ति के बाद उसके मन की कठोरता का कारण परमेश्वर को बताया गया है।

हमें फिरौन के मन की कठोरता की प्रगति पर भी ध्यान देना है जिसके कारण अन्ततः उसका पाप दण्ड के लिए तैयार हुआ। यही नहीं कि वह मूसा के आग्रह का विरोध कर रहा था परन्तु वह एक एक कदम परमेश्वर का हाथ स्पष्ट दिखाई देता जा रहा था जब तक कि वह अपने ही कर्मों के कारण क्षमा पाने से चूक गया। पहली बार जब हारून ने लाठी से सांप बनाया तो मिस्र के जादूगरों ने भी सांप बनाए परन्तु हारून के सांप ने उसके सांपों को खा लिया था (निर्गमन 7:12)। तीसरी विपत्ति के बाद तो मिस्र के जादूगरों ने भी हाथ उठा दिए थे और स्वीकार किया था कि यह परमेश्वर का हाथ है (निर्गमन 8:19)। यदि इसमें भी कोई शक था तो पांचवीं विपत्ति (9:7) के बाद वह दूर हो जाना था जब फिरौन को पता चला कि

इस्राएलियों के मवेशियों में से एक भी नहीं मरा था। कुछ मिस्रवासियों ने इससे सबक सीखा और अपने जानवर आग और ओलों से बचाने के लिए घर के भीतर कर दिए थे (निर्गमन 9:20–21)।

अन्त में सांतवीं विपत्ति के बाद तो फिरौन ने स्वयं अपना दोष एवं पाप स्वीकार किया (निर्गमन 9:27) और इस्राएल के प्रस्थान की स्वीकृति दे दी (निर्गमन 9:35)। क्या हम यहां कल्पना करें कि उसके मन की कठोरता परमेश्वर के दण्ड के लिए पर्याप्त थी? निश्चय ही मनुष्य के घमण्ड और साहस और परमेश्वर के मध्य सत्य की घोषणा मनुष्यों के समक्ष प्रकट होनी थी। "मैंने तुझे इसी लिए खड़ा किया है कि तुझ में अपनी सामर्थ्य दिखाऊं, और मेरे नाम का प्रचार सारी पृथ्वी पर हो।"

परमेश्वर की परमप्रधान इच्छा का उदाहरण देकर पौलुस उसकी व्याख्या भी करता है। परमेश्वर आवश्यक नहीं समझता कि मनुष्य के प्रश्नों का उत्तर दे क्योंकि परमेश्वर होने के कारण वह अनन्त एवं आत्मनिर्भर है (पद 19–24)। पद 19, "अतः तू मुझ से कहेगा, "वह फिर क्यों दोष लगाता है? कौन उसकी इच्छा का सामना करता है?" आपत्ति उठानेवाले की झुंझलाहट यहां प्रकट होती है, इस प्रश्न को हम दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं, "यदि परमेश्वर पापी के मन को कठोर करे और निर्विरोध वह पाप करे तो वह परमेश्वर की इच्छा के अनुसार चल रहा है।" यह विचार दो कारणों से सही नहीं है। पहला, मनुष्य जो मात्र सृजित प्राणी है अपने आप को परमेश्वर से प्रश्न पूछने योग्य बुद्धिमान समझता है। दूसरा वह इस तथ्य को अनदेखा करता है कि परमेश्वर की प्रभुता सदैव धार्मिकता से पूर्ण है जिसे केवल उसकी दया ही बदल सकती है।

मनुष्य के लिए परमेश्वर की बराबरी बरना कैसी मूर्खता है। पौलुस कुम्हार का उदाहरण देकर इसको सिद्ध करता है (पद 20–24) जिस प्रकार कुम्हार को पात्र बनाने के लिए मिट्टी पर पूरा अधिकार है उसी प्रकार परमेश्वर को मनुष्य के साथ व्यवहार करने का पूरा अधिकार है– पद 20–24, "हे मनुष्य, भला तू कौन है जो परमेश्वर का सामना करता है? क्या गढ़ी हुई वस्तु गढ़नेवाले से कह सकती है, "तू न मुझे ऐसा क्यों बनाया है?" क्या कुम्हार को मिट्टी पर अधिकार नहीं कि एक ही लौंदे में से एक बरतन आदर के लिये, और दूसरे को अनादर के लिये बनाए? तो इसमें कौन सी आश्चर्य की बात है कि परमेश्वर ने अपना क्रोध दिखाने और अपनी सामर्थ्य प्रगट करने की इच्छा से क्रोध के बरतनों की, जो विनाश के लिये तैयार किए गए थे, बड़े धीरज से सही; और दया के बरतनों पर, जिन्हें उसने महिमा के लिये पहले से तैयार किया, अपने महिमा के धन को प्रगट करने की इच्छा की? अर्थात् हम पर जिन्हें उसने न केवल यहूदियों में से, वरन् अन्यजातियों में से भी बुलाया।"

विनाश के लिए नियत मनुष्यों और महिमा के लिए नियत मनुष्यों के लिए पौलुस की अभिव्यक्तियों में अन्तर है। जो विनाश के लिए नियत हैं उनके लिए कहा गया है, "विनाश के लिए तैयार किए गए थे।" परन्तु यहां यह नहीं कहा गया है कि परमेश्वर न उन्हें विनाश के लिए तैयार किया था। "यदि उनकी तुलना उनसे की जाए जिन्हें परमेश्वर ने 'महिमा के लिए पहले से तैयार किया है।'"

परमेश्वर ने किसी को विनाश के लिए नहीं सृजा है। जब मनुष्य फिरौन के समान व्यवहार करने लगता है तब परमेश्वर उनके साथ ऐसा व्यवहार करता है कि उनकी जन्मजात दुष्टता ऐसे प्रकट होती है कि वे परमेश्वर के दण्ड के लिए तैयार हैं।

पौलुस संपूर्ण विवाद के अन्त में उस तथ्य को व्यक्त करता है कि अन्यजाति भी यहूदियों के समान परमेश्वर की दया के पात्र हैं। यह ध्यान में रखने के लिए एक महत्वपूर्ण सत्य है। अन्यजातियों का उद्धार परमेश्वर के लिए कोई बाद का विचार नहीं है (किसी ने कहा है, "सब उद्धार प्राप्त मनुष्य परमेश्वर का बाद का विचार नहीं, उसका पहले से सोचा गया कार्य है।") अब पौलुस दर्शाएगा कि पुराने नियम में इस्राएल के साथ परमेश्वर का व्यवस्था आधारित व्यवहार मनुष्य जाति के उसके प्रेम की कीमत पर आधारित नहीं है।

अतः इस्राएल के साथ परमेश्वर का पूर्वकालिक व्यवहार उसकी सर्वोच्च बुद्धि, उसकी परमप्रधान इच्छा पर आधारित था और उसके उच्चारित वचन पर आधारित था। परमेश्वर का वचन अन्यजातियों की महान जागृति के लिए परमेश्वर की परम आशीषों का उल्लेख कर चुका है, पद 25–26, "जो मेरी प्रजा न थी, उन्हें मैं अपनी प्रजा कहूंगा, और जो प्रिया न थी, उसे प्रिया कहूंगा। और ऐसा होगा कि जिस जगह में उन से यह कहा गया था कि तुम मेरी प्रजा नहीं हो, उसी जगह वे जीवते परमेश्वर की सन्तान कहलाएंगे।" होशे द्वारा व्यभिचारी प्रजा के लिए काम में लिए गए शब्द पौलुस अपने उददे्श्य के निमित्त काम में लेता है। अन्यजातियों को परमेश्वर की प्रजा नहीं कहा जाता था। प्रभु यीशु ने स्वयं उन्हें एक बार कुत्ता कहा था (इसे संदर्भ सहित पढ़ें और समझें– मरकुस 7:24–30) परन्तु अब यहूदी और अन्यजाति ऐसे स्तर पर उठाए गए हैं जिसे इस्राएल राष्ट्र ने नहीं जाना है– हम जीवित परमेश्वर की सन्तान हैं।

वहीं पुराना नियम जो अन्यजातियों पर परमेश्वर की आशीषों की चर्चा करता है, बचे हुए यहूदियों पर भी उसकी आशीषों की चर्चा करता है– पद 27–29, "और यशायाह इस्राएल के विषय में पुकारकर कहता है, "चाहे इस्राएल की सन्तानों की गिनती समुद्र के बालू के बराबर हो, तौभी उनमें से थोड़े ही

बचेंगे। क्योंकि प्रभु अपना वचन पृथ्वी पर पूरा करके, धार्मिकता से शीघ्र उसे सिद्ध करेगा।" जैसा यशायाह ने पहले भी कहा था, "यदि सेनाओं का प्रभु हमारे लिये कुछ वंश न छोड़ता, तो हम सदोम के समान हो जाते, और अमोरा के सदृश ठहरते।"

परमेश्वर के मार्ग स्थिर हैं। इतिहास में पितरों के सब वंशज इस्राएल नहीं कहलाए थे। परमेश्वर के सच्चे भक्त तो सदा ही बचे हुए लोग थे। अन्य सब को परमेश्वर आगे या पीछे दण्ड देता है।

पुराने नियम का अध्ययन निश्चय ही मनुष्य के साथ परमेश्वर के व्यवहार की चर्चा करता है। वह बहुत समय धीरज धरकर प्रतीक्षा करता है और फिर तुरन्त कार्य करता है—तत्कालिक दण्ड! जलप्रलय, सदोम और अमोरा का विनाश, जंगल में विद्रोहियों का विनाश, अश्शूरों का तदोपरान्त बेबीलोन का आक्रमण आदि सबसे इस बात की पुष्टि होती है। प्रभु यीशु के क्रूसीकरण के बाद परमेश्वर ने 40 वर्ष धीरज धरा परन्तु उसके बाद रोम के **वेस्पास्यिन** और तीतुस का आक्रमण हुआ जो आकस्मिक बाढ़ के समान था। जिसने इस्राएल राष्ट्र का अस्तित्व ही मिटा दिया। परमेश्वर अपने उच्चारित वचन के अनुसार कार्य करता है परन्तु दया को स्मरण रखता है। वह सदैव अपने लिए विश्वासयोग्य भक्तों का एक समूह बचाकर रखता है जो सच्चा इस्राएल है। परमेश्वर की बुद्धि, उसकी इच्छा और उसका वचन तीनों स्वीकार करते हैं कि परमेश्वर दयानिधान है परन्तु दण्ड तो देता ही है। वह अपने धर्म के सिद्धान्तों, स्पष्ट दूरदृष्टि, प्रेरक बल और अटल निष्पक्षता के साथ काम करता है। उनकी समस्या के प्रेति पौलुस का दृष्टिकोण यही है।

ख) पौलुस द्वारा समस्या का सारांश (9:30—33)

पौलुस अति स्पष्ट रूप से एक धागा खींचता है। यहूदियों के पास स्वदेश का अधिकार नहीं है। उद्धार का मार्ग स्पष्ट था परन्तु उन्होंने उस पर चलना नहीं चाहा। वे दौड़े तो परन्तु गलत मार्ग पर जबकि अन्यजातियों ने सुसमाचार सुनकर प्रतिक्रिया दिखाई और उद्धार पाया जिसकी निरर्थक चेष्टा यहूदी कर रहे थे। पौलुस कहता है, (1) अन्यजातियों ने विश्वास के द्वारा धार्मिकता प्राप्त की —पद 30, "अतः हम क्या कहें? यह कि अन्यजातियों ने, जो धार्मिकता की खोज नहीं करते थे धार्मिकता प्राप्त की अर्थात उस धार्मिकता को जो विश्वास से है।" अन्यजाति तो धार्मिकता की खोज में थे ही नहीं। उनके नगर तो अन्धविश्वास, निस्सारता और मूर्तिपूजा के केन्द्र थे परन्तु ज्यों ही उन्होंने सुसमाचार सुना त्यों ही सैंकड़ों और हज़ारों की संख्या में उन्होंने मूर्तिपूजा से मन फिराकर सच्चे एवं जीवित परमेश्वर की सेवा की और उसके पुत्र के स्वर्ग से आने की बाट जोहने लगे। (1 थिस्सलुनीकियों 1:9—10)

अन्यजातियों ने तो प्रसन्नतापूर्वक सुसमाचार को ग्रहण किया परन्तु कुछ विश्वासी यहूदियों के अतिरिक्त सब सुसमाचार प्रचारकों का विरोध करने लगे और घृणा, क्रोध तथा कड़वाहट से भरकर उन्हें पथरवाह किया, उन्हें कोसा, उपद्रव खड़ा किया और उन्हें विद्रोही ठहराया, उन्हें नगर नगर खदेड़ा। पौलुस कहता है (2) पद 31–33, "परन्तु इस्राएली जो, धर्म की व्यवस्था की खोज करते थे उस व्यवस्था तक नहीं पहुंचे। किस लिये? इसलिए कि वे विश्वास से नहीं, परन्तु मानो कर्मों से उसकी खोज करते थे। उन्होंने उस ठोकर के पत्थर पर ठोकर खाई, जैसा लिखा है, 'देखो, मैं सिय्योन में एक ठेस लगने का पत्थर और ठोकर खाने की चट्टान रखता हूं, और जो उस पर विश्वास करेगा वह लज्जित न होगा।'" प्रत्येक विश्वासी का मानना था कि मूसा की व्यवस्था रखना और उसे मानना ही सब कुछ था। वह एक ऐसा लक्ष्य था जो यथासंभव प्रयास करके भी प्राप्त नहीं किया जा सकता था। यहूदियों की भ्रष्टता में जोड़ने के लिए जब प्रभु यीशु आया जिसके विषय भविष्यद्वक्ता और व्यवस्था चर्चा करते थे, यहूदी उसी से ठोकर खाने लगे। यहूदियों को एक योद्धा एक शेर चाहिए था परन्तु परमेश्वर ने एक मेम्ना भेजा। यहूदियों को सिंहासन चाहिए था परन्तु परमेश्वर ने क्रूस दिया। अतः जहां तक इस्राएल के साथ परमेश्वर के पूर्वकालिक व्यवहार का प्रश्न है, परमेश्वर ने उनके साथ अपनी परम प्रभुता के अधीन व्यवहार किया।

इस्राएल के साथ परमेश्वर का वर्तमान व्यवहार

10:1–2

I. प्रभु यीशु उद्धारक प्रकट हुआ (10:1–4)

क) पौलुस कहता है कि यहूदी खोए हुए हैं (10:1)

ख) पौलुस उनके खो जाने का वर्णन करता है (10:2–4)

1) उसके गलत धार्मिक अभ्यास (10:2)

2) उसके गलत धार्मिक कृत्य (10:3–4)

II. प्रभु यीशु को उद्धारकर्ता ग्रहण किया जाना (10:5–15)

क) प्रभु यीशु को उद्धारकर्ता मानना (10:5–9)

1) व्यवस्था द्वारा धार्मिकता प्राप्त करने की अनुवांशिक समस्या (10:5)

2) प्रभु यीशु द्वारा धार्मिकता स्वीकार करने के अनुवंशिक सिद्धान्त (10:6–9)

1. बुद्धिमानी की निषेधाज्ञाएं (10:6–7)

i. प्रभु यीशु को फिर देहधारी न बनाओ (10:6)

ii. प्रभु यीशु का फिर से पुनरूत्थान न करवाओ (10:7)

2. सरल प्रावधान (10:8–9)

i. धर्मशास्त्र उपलब्ध है (10:8)

ii. उद्धारकर्ता उपलब्ध है (10:9)

ख) प्रभु यीशु को उद्धारक स्वीकार करना (10:10–13)

1) प्रभु यीशु को ग्रहण करने के प्रमाण (10:10–13)

1. प्रभु यीशु की प्रभुता को व्यक्तिगत अभिव्यक्ति देना (10:10–11)

अ) यह विश्वास का प्रकटीकरण है (10:10)

ब) यह विश्वास का आश्वासन है (10:11)

2. प्रभु यीशु की प्रभुता को उजागर करना (10:12–13)

अ) वह सबका प्रभु है (10:12)

ब) वह सबके लिए प्रभु है (10:13)

2) प्रभु यीशु को ग्रहण करने की सुसमाचारीय कीमत (10:14–15)

III. उद्धारक प्रभु यीशु का इन्कार (10:16–21)

क) यहूदी अविश्वास में तर्क नहीं (10:16–20)

1. वे विश्वास कर सकते हैं (10:16–18)
2. उन्हें विश्वास करना चाहिए (10:19–20)

ख) यहूदी अविश्वास कठोर है (10:21)

इस्राएल के साथ परमेश्वर का पूर्वकालिक व्यवहार उसकी प्रभुता पर आधारित था। उसका वर्तमान व्यवहार उसके उद्धार पर आधारित है। आज परमेश्वर यहूदियों को उसी शर्त पर उद्धार दिलाता है जिस शर्त पर वह अन्यजातियों को उद्धार दिलाता है। वह जाति–पांति का अन्तर नहीं करता है। इस युग में न तो यहूदी और न ही अन्यजाति परन्तु कलीसिया मानवजाति के लिए परमेश्वर की आशीषों का स्रोत है। इस्राएलियों के विशेष सौभाग्य और अधिकार अभी रूके हुए हैं। यदि यहूदी आज परमेश्वर का अनुग्रह पात्र बनना चाहता है तो उसे एक पापी के रूप में कलवरी की छांव में आकर प्रभु यीशु को अपना उद्धारकर्ता एवं प्रभु मानना होगा। रोमियों अध्याय 10 का यही विषय है।

I. प्रभु यीशु का उद्धारक रूप में प्रकटीकरण (10:1–4)

इस्राएल ने प्रभु यीशु का इन्कार करके संपूर्ण जाति पर श्राप एकत्र किया है (मत्ती 27:25) एक यहूदी को अन्य किसी के भी समान अपनी भ्रष्ट दशा को पहचानना है और प्रभु को व्यक्तिगत रूप से ग्रहण करके बचे हुओं का –परमेश्वर के सच्चे इस्राएल का भाग बनना है।

क) पौलुस कहता है कि यहूदी खोए हुए हैं (10:1)

इस युग में प्रत्येक यहूदी के समक्ष उपस्थित समस्या को अन्तर्ग्रहण करने में पौलुस शब्द गंवाए बिना कहता है, "हे भाइयों, मेरे मन की अभिलाषा और उनके लिए परमेश्वर से मेरी प्रार्थना है कि वे उद्धार पाएं" (पद 1)। "भाइयों" यह सहाद्र शब्द पूर्व की बातों और आनेवाली बातों को मधुर बनाता है। पौलुस कोमल शब्दों का प्रयोग तो करता है परन्तु पल भर के लिए भी सत्य को कम नहीं करता है –यहूदियों को उद्धार पाने की आवश्यकता है।

ख) पौलुस यहूदियों की खोई हुई दशा का वर्णन करता है (10:2–4)

यहूदी खोए हुए क्यों हैं? पौलुस दो कारण बताता है। ये कारण सामान्यतः अन्यजातियों के विषय भी सही हैं। उसके दिशारहित धार्मिक अभ्यास–पद 2, "मैं उनकी गवाही देता हूं कि उनको परमेश्वर के लिए धुन रहती है, परन्तु बुद्धिमानी के साथ नहीं।" परमेश्वर के लिए धुन रखना बहुत अच्छी बात है परन्तु वह सही दिशा में हो। यदि मनुष्य गलत धार्मिक पथ चुन ले तो उसकी धुन विनाशकारी हो जाती है। पौलुस जानता है कि यहां वह कहना क्या चाहता है। राजा अग्रिप्पा को वह आगे चलकर गवाही देता है–प्रेरितों के काम 26:9–11, "मैं ने भी समझा था कि यीशु नासरी के नाम के विरोध में मुझे बहुत कुछ करना चाहिए। और मैं ने यरूशलेम में ऐसा ही किया; और प्रधान याजकों से अधिकार पाकर बहुत से पवित्र लोगों को बन्दीगृह में डाला, और जब वे मार डाले जाते थे तो मैं भी उनके विरोध में अपनी सम्मति देता था। हर आराधनालय में मैं उन्हें ताड़ना दिला दिलाकर यीशु की निन्दा करवाता था, यहां तक कि क्रोध के मारे ऐसा पागल हो गया कि बाहर के नगरों में भी जाकर उन्हें सताता था।"

और जब वह प्रभु यीशु के कारण रोम में बन्दी बनाया गया था तब उसने फिलिप्पी की कलीसिया को लिखा और अपने मन फिराव से पहले के दिनों का उल्लेख किया था–फिलिप्पियों 3:4–7, "पर मैं तो शरीर पर भी भरोसा रख सकता हूं। यदि किसी और को शरीर पर भरोसा रखने का विचार हो, तो मैं उस से भी बढ़कर रख सकता हूं। आठवें दिन मेरा खतना हुआ। इस्राएल के वंश, और बिन्यामीन के गोत्र का हूं; इब्रानियों का इब्रानी हूं; व्यवस्था के विषय में यदि कहो तो फरीसी हूं। उत्साह के विषय में यदि कहो तो कलीसिया का सतानेवाला; और व्यवस्था की धार्मिकता के बारे में कहो तो निर्दोष था। परन्तु जो जो बातें मेरे लाभ की थीं, उन्हीं को मैं ने मसीह के कारण हानि समझ लिया है।"

पौलुस स्वयं उस स्थान पर आ गया था कि उसे यह बोध हुआ कि उसकी उपलब्धियां वास्तव में व्यर्थ थीं। वे उसके लिए लाभ की अपेक्षा हानि थीं। उनके स्थान पर प्रभु यीशु का होना आवश्यक था। अपने मन फिराव से पूर्व उसमें परमेश्वर के लिए धुन थी परन्तु बुद्धिमानी के साथ नहीं जबकि उसने अपने युग की सर्वोत्तम बाइबल शिक्षा ग्रहण की थी।

दिशारहित धार्मिक अभ्यास से बुरा और कुछ नहीं है।

एक जोशीले युवक को यदि दक्षिण में जाना है और वह चौराहे पर एक मनभावन मार्ग देखकर उस पर आगे बढ़ता चला जाता है तो वह उत्तर दिशा का मार्ग है जिस पर चल कर वह अपने लक्ष्य से अधिकाधिक दूर होता जाएगा ऐसे ही कुछ लोग जोश में आकर गलत मार्ग पकड़ लेते हैं और जानते नहीं

कि वे गलत मार्ग पर हैं। नीतिवचन 14:12, "एक मार्ग है, जो मनुष्य को उचित जान पड़ता है परन्तु उसके अन्त में मृत्यु ही मिलती है।"

यहूदी अपने दिशारहित ईश्वरीय धुन के कारण ही नहीं अपने दिशारहित धार्मिक उपक्रम के कारण भी भटक गए हैं। पद 3–4, "क्योंकि वे परमेश्वर की धार्मिकता से अनजान होकर, और अपनी धार्मिकता स्थापित करने का यत्न करके, परमेश्वर की धार्मिकता के अधीन न हुए। क्योंकि हर एक विश्वास करनेवाले के लिए धार्मिकता के निमित्त मसीह व्यवस्था का अन्त है।" यहूदी सीनै पर्वत पर दिए गए निर्देशों–व्यवस्था के आधार पर अपने लिए एक धार्मिकता की स्थापना कर रहा था जो एक सर्वथा अनुचित प्रयास था। जबकि सच यह था कि धार्मिकता सीनै पर्वत पर नहीं कलवरी पर प्राप्त होती है। धार्मिकता आदेशों के ग्रहण करने से नहीं किसी व्यक्ति–यीशु को ग्रहण करने से प्राप्त होती है, आज्ञाओं पर चलने से नहीं, प्रभु यीशु के अधीन होने से प्राप्त होती है। परमेश्वर की धार्मिकता पाने का अर्थ है कि मनुष्य अपनी धार्मिकता को त्यागकर अपनी पूरी विफलता को स्वीकार करे। क्या सब धर्मी जन इससे चूक जाते हैं। प्रभु यीशु के अधीन होने के बिना मनुष्य भटकता ही नहीं क्षमारहित भटका हुआ जीवन पाता है क्योंकि प्रभु यीशु उद्धारकर्ता है।

II. प्रभु यीशु को उद्धारकर्ता ग्रहण किया (10:5–15)

पौलुस कहता है कि प्रभु यीशु को ग्रहण करने से पूर्व की एक दशा है उसके बाद कुछ होता है। प्रभु यीशु को ग्रहण करने से पूर्व उसका निष्पक्ष ख्याल करना और उसके स्पष्ट स्वीकरण को प्रकट करना है।

क) प्रभु यीशु को उद्धारकर्ता मानना (10:5–9)

इससे पूर्व की पौलुस हमारा ध्यान कलवरी की ओर आकर्षित करे वह चाहता है कि हम सीनै पर्वत पर अन्तिम दृष्टि डालकर नये सिरे से कुछ सोचें। (1) व्यवस्था द्वारा धार्मिकता पाने की अनुवांशिक समस्या –10:5, "क्योंकि मूसा ने यह लिखा है कि जो मनुष्य उस धार्मिकता पर जो व्यवस्था से है, चलता है, वह उसी से जीवित रहेगा।" (देखिए लैव्यव्यवस्था 18:5 जिसमें लिखा है कि व्यवस्था द्वारा धार्मिकता प्राप्त करने के लिए उसके अनुयायी को एक बात में भी नहीं चूकना है।) यदि कोई मनुष्य ऐसा कर पाए तो स्वर्ग में उसका स्थान निश्चित है। यह व्यवस्था की एक अन्तर्निहित समस्या है क्योंकि इसे सिद्ध प्राप्त करना मनुष्य

के लिए संभव नहीं। "ऐसा करके तू जीवित रहेगा।" यह एक अशक्त मानव के लिए शिथिल आशा है कि वह परमेश्वर की आज्ञाओं के अनुसार जीवन जीए। पौलुस यहूदियों से कहता है, धार्मिकता के लिए उन्हें व्यवस्था का सहारा खोजने की आवश्यकता नहीं है। मूसा नहीं, प्रभु यीशु जिसका तुमने इन्कार किया।

विषमता को दर्शाने के लिए वह कहता है (2)– पद 6–7, "परन्तु जो धार्मिकता विश्वास से है, वह यों कहती है, 'तू अपने मन में यह न कहना कि स्वर्ग पर कौन चढ़ेगा?' (अर्थात मसीह को उतार लाने के लिए!) या 'अधोलोक में कौन उतरेगा?' (अर्थात मसीह को मरे हुओं में से जिलाकर ऊपर लाने के लिए!)" यह संदर्भ व्यवस्थाविवरण 30:11–14 का है जिसमें अपनी ही समस्याएं हैं। कुछ लोगों का मानना है कि पौलुस ने मूसा के वचनों को विकृत करके सुसमाचार प्रचार में काम में लिए हैं। तथापि विषमता व्यवस्था और विश्वास में नहीं वरन् दोनों से उत्पन्न धार्मिकता में है। अतः पौलुस आरंभिक भाषा काम में लेता है जैसे मूसा ने कहा था कि व्यवस्था को नीचे लाने के लिए किसी को ऊपर जाने की आवश्यकता नहीं है, उसी प्रकार मसीह को नीचे लाने के लिए किसी को ऊपर जाने की आवश्यकता नहीं है। मूसा ने कहा कि व्यवस्था पाने के लिए किसी को समुद्र पार जाने की आवश्यकता नहीं है उसी प्रकार पौलुस कहता है कि प्रभु यीशु को खोजने के लिए किसी को गहराई में जाने की आवश्यकता नहीं है।

पद 8 पर ध्यान दें, "परन्तु वह क्या कहती है? यह कि 'वचन तेरे निकट है, तेरे मुंह में और तेरे मन में हैं।' यह वही विश्वास का वचन है, जो हम प्रचार करते हैं।" जिस प्रकार मूसा के युग में वचन सरलता से उपलब्ध था, उसी प्रकार आज प्रभु यीशु सरलता से उपलब्ध है। मसीही सन्देश पापी का ठट्ठा नहीं करता कि स्वर्ग जाकर कौन प्रभु यीशु को नीचे लाएगा या कौन अधोलोक के मृतकों में से उसे ऊपर लाएगा। विश्वास का वचन अर्थात सुसमाचार का सन्देश, एक शुभ समाचार कि प्रभु यीशु स्वर्ग से पृथ्वी पर आया। वह मृत्युलोक से ऊपर उठा। मसीही विश्वास के दो महान तथ्य हैंः देहधारण–प्रभु यीशु का स्वर्ग से आना और पुनरूत्थान–उसका कब्र में से जी उठना। यह मन के विश्वास के विषय है। धर्मशास्त्र अर्थात विश्वास का वचन सरलता से पाया जाता है। उद्धारकर्ता भी बड़ी आसानी से मिल जाता है–पद 9, "कि यदि तू अपने मुंह से यीशु को प्रभु जानकर अंगीकार करे, और अपने मन में विश्वास करे कि परमेश्वर न उसे मरे हुओं में से जिलाया, तो तू निश्चय उद्धार पाएगा।" यहां ध्यान का केन्द्र प्रभु यीशु है जो प्रभु है– उसके ईश्वरत्व पर। यहां एक और बात पर ध्यान आकर्षित किया गया है– विश्वास द्वारा धर्मी ठहरना न कि कार्यों द्वारा धार्मिकता ग्रहण करने का प्रयास करना। सुसमाचार के केन्द्र में प्रभु यीशु के प्रभु होने पर गुंजित एवं जयवन्त बल दिया गया है। "परमेश्वर ने उसे मरे हुओं में से जिलाया।" प्रभु यीशु का

मृतकोत्थान एक ऐतिहासिक सत्य है जिसका खण्डन कोई विचार नहीं कर सकता है। यह आरंभिक कलीसिया की सामर्थी पुकार थी जिससे इन्कार करना किसी के लिए संभव नहीं था।

आरंभिक विश्वासी पुकार पुकार कर कहते थे, "वह दिखा है, वह दिखा है" और सब जानते हैं कि वह दिखा है। (1 कुरिन्थियों 15:5–8)

"अपने मन में विश्वास करें कि परमेश्वर ने उसे मरे हुओं में से जिलाया है।" देखिए सुसमाचार मन पर प्रभाव डालता है न कि मस्तिष्क पर अर्थात बौद्धिक नहीं, मन से प्रभु पर विश्वास करना। इब्रानी भाषा में मन से तात्पर्य है संपूर्ण व्यक्तित्व। रोमियों 10:9 और 2 कुरिन्थियों 4:4, 6 में शैतान बुद्धि भ्रष्ट करता है और परमेश्वर मन को ज्योतिर्मय करता है।

"अपने मुंह से यीशु को प्रभु जानकर अंगीकार करें।" यहूदियों ने मुंह से ही तो प्रभु यीशु का अंगीकार नहीं किया है। यह अंगीकार मन फिराव का प्रमाण है जो परमेश्वर और मनुष्य दोनों ही से संबन्धित है।

ख) प्रभु यीशु को उद्धारकर्ता मानकर अंगीकार करना (10:10–15)

प्रभु यीशु के अंगीकार का महत्व है (1) प्रमाण है कि (अ) वह प्रभु यीशु को अपना प्रभु स्वीकार करता है। यहां दो मुख्य बातें हैं– व्यक्तिगत विश्वास को प्रकट करना और दूसरी, अपने विश्वास की पुष्टि करना। पद 10–"धार्मिकता के लिए मन से विश्वास किया जाता है और उद्धार के लिए मुंह से अंगीकार किया जाता है।" यहां पौलुस मन को पहले और मुंह को बाद में रखता है क्योंकि वह मूसा के क्रम पर चलना चाहता है और पद 10 में वह अनुभव के क्रम पर कहता है। विश्वास अंगीकार से पूर्व आता है। अंगीकार वैधानिक अनिवार्यता नहीं है। इसका उद्धार से संबन्ध नहीं है। यह मात्र सच्चे विश्वास का एक प्राकृतिक प्रमाण है। मत्ती 12:34 में प्रभु यीशु ने कहा कि मनुष्य अपने मन के विचार मुंह से निकालता है।

स्टिफलर का कहना है, "यदि कोई मन में विश्वास करे तो वह विश्वास उसे धर्मी ठहराता है अर्थात परमेश्वर के समक्ष न्याय में उचित और यदि वह मुंह से अंगीकार करता है तो उसका उद्धार पूर्ण होता है। इस प्रकार उद्धार की पूर्ति के दो चरण हैं: मन जो सच्चे अंगीकार को उत्पन्न करता है। विश्वास बिना अंगीकार ढोंग है और अंगीकार बिना विश्वास कायरता है। (यूहन्ना 19:38)" डब्ल्यू ई. वाइन भी यही कहते

हैं, "अब वास्तविक क्रम सामने आता है– पहले विश्वास फिर अंगीकार। उद्धार पाने के लिए धार्मिकता का होना आवश्यक है जो विश्वास पर आधारित है और विश्वास अंगीकार उत्पन्न करता है। अंगीकार की कमी विश्वास की कमी प्रकट करता है।" सन्डे भी ऐसा ही कहते हैं, "मसीही जीवन के आरंभ के दो चरण हैं: भीतर से मन परिवर्तन जो विश्वास है जिसके द्वारा धार्मिकता प्राप्त होती है– परमेश्वर को ग्रहणयोग्य स्थिति: बाहरी रूप से क्रूस पर चढ़े प्रभु यीशु का अंगीकार।" वह तो यहां तक कहते हैं कि अंगीकार बपतिस्मा में ही किया जाता है।

सबसे पहले प्रभु यीशु को प्रभु मानना है जो विश्वास की उद्घोषण पर निर्भर है। यद्यपि यह मन की बात है परन्तु अनेक ठीकाकरों के अनुसार यह परमेश्वर के लिए होने के साथ–साथ मनुष्य के लिए भी है। दूसरा महत्व है –कि यह विश्वास की पुष्टि है। पद 11– "पवित्र शास्त्र यह कहता है, 'जो कोई उस पर विश्वास करेगा वह लज्जित न होगा।" यहां लज्जा का अर्थ है जैसा जे.बी. फिलिप्पस कहते हैं, "वह निराश न होगा।" यह यशायाह 28:16 का संदर्भ है।

मुंह से अंगीकार करना केवल प्रभु यीशु को व्यक्तिगत प्रभु मानना ही नहीं है, वरन् उसे सार्वजनिक प्रभु कहना है। पौलुस कहता है कि प्रभु यीशु सबका प्रभु है– पद 12, "वह सब का प्रभु है, और अपने सब नाम लेने वालों के लिए उद्धार है।" पौलुस पहले कह चुका है कि सबने पाप किया है। **अतः पाप हो या उद्धार न हो यूनानी भिन्न हैं** और न ही अन्यजाति। इसी कारण प्रभु यीशु की प्रभुता सबके लिए बराबर है।

पद 13 में पौलुस कहता है, "जो कोई प्रभु का नाम लेगा, वह उद्धार पाएगा।" सार्वजनिक उद्धार! "जो कोई–सब; "प्रभु का नाम लेगा"– सुबोधता; "उद्धार पाएगा" मुख्य बात। सब के सब। व्यक्तिगत एवं सार्वजनिक अंगीकार कि प्रभु यीशु उद्धारकर्ता है। यही प्रमाणिक महत्व है।

इससे प्रभु यीशु के अंगीकार के महत्व प्रकट होते हैं। (2) सुसमाचार संबन्धित। क्योंकि प्रभु यीशु के द्वारा उद्धार सबके लिए है, इसलिए वह सबमें प्रचार किया जाना चाहिए। पद 14–15, "फिर जिस पर उन्होंने विश्वास नहीं किया, वे उसका नाम कैसे लें? और जिसके विषय सुना नहीं उस पर कैसे विश्वास करें? और प्रचारक बिना कैस सुनें? और यदि भेजे न जाएं तो कैसे प्रचार करें? जैसा लिखा है, 'उनके पांव क्या ही सुहावने हैं जो अच्छी बातों का सुसमाचार सुनाते हैं।"

III. प्रभु यीशु का उद्धारकर्ता रूप में इन्कार (10:16–21)

पौलुस के मन का यह दुःख इन सब अध्यायों में प्रकट है। यहूदियों ने प्रभु यीशु का इन्कार किया। इस्राएल के साथ परमेश्वर के वर्तमान व्यवहार के भाग के अन्त में पौलुस कहता है कि यहूदियों का विश्वास कैसा तर्कहीन और अव्यवहार्य है।

क) प्रभु यीशु पर विश्वास न करना अतार्किक है (10:16–20)

यहूदियों का विश्वास न करना तो कारणों से तर्करहित है।

(1) वे विश्वास कर सकते थे (अ) परमेश्वर के वचन का अद्वैत सामर्थ्य प्रभु यीशु में विश्वास उत्पन्न करता है– पद 16, 17, "परन्तु सब ने उस सुसमाचार पर कान न लगायाः यशायाह कहता है, 'हे प्रभु, किसने हमारे समाचार पर विश्वास किया है?' अतः विश्वास सुनने से और सुनना मसीह के वचन से होता है।" पौलुस यशायाह के साथ दुःख मनाता है (यशायाह 53:1) कि उन्होंने विश्वास नहीं किया क्योंकि सुसमाचार कोई नई बात नहीं है। वह तो पुराने नियम से ही आया है।

सुनने से प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है–विश्वास। दुःख की बड़ी बात तो यह है कि मनुष्य सुनना नहीं चाहता है। मत्ती 11:15; 13:9, 43 में कहा गया है कि जिसके कान हो वह सुने। कुछ लोग सुनते तो हैं परन्तु समझते नहीं। परन्तु वचन का सामर्थ्य सुनिश्चित करता है कि जो सुनकर प्रतिक्रिया दिखाता है उनमें विश्वास जागृत होता है। पतरस यही कहता है– 1 पतरस 1:23– कि तुम नाशवान नहीं परन्तु अविनाशी बीज से उत्पन्न हो, परमेश्वर का सदा ठहरनेवाला जीवित वचन है। अतः प्रभु यीशु के वचन में सामर्थ्य है, इस कारण यहूदियों का उसमें विश्वास न करना तर्करहित है।

वचन का सामर्थ्य ही नहीं सार्वजनिक प्रचार भी विश्वास को संभव बनाता है–पद 18, "परन्तु मैं कहता हूं, क्या उन्होंने नहीं सुना? सुना तो अवश्य है; क्योंकि लिखा है, 'उनके स्वर सारी पृथ्वी पर, और उनके वचन जगत की छोर तक पहुंच गए हैं।'"

यहूदियों का अविश्वास इसलिए नहीं था कि वे विश्वास न कर पाए परन्तु यह भी कि अन्यजातियों ने सुसमाचार को अपनाया। (पौलुस इस सत्य को जानबूझकर उजागर करता है कि यहूदियों को जलन हो)– 19–20, "मैं फिर कहता हूं, क्या इस्राएली नहीं जानते थे? पहले तो मूसा कहता है, 'मैं उनके द्वारा जो

जाति नहीं, तुम्हारे मन में जलन उपजाऊंगा; मैं एक मूढ़ जाति के द्वारा तुम्हें रिस दिलाऊंगा।' फिर यशायाह बड़े हियाव के साथ कहता है, 'जो मुझे नहीं ढूंढ़ते थे, उन्होंने मुझे पा लिया; और जो मुझे पूछते भी न थे, उन पर मैं प्रगट हो गया।" अन्यजातियों के मन फिराव की पुराने नियम में भविष्यद्वाणी है। यह केवल उनमें जलन उत्पन्न करने के लिए है।

ख) प्रभु यीशु में यहूदियों द्वारा विश्वास न करना कठोरता है (10:21)

परमेश्वर ने उन्हें सौभाग्य प्रदान किए, उनके साथ धीरजवन्त रहा, उन्हें बार–बार बुलाया, उन्हें चेतावनियां दीं परन्तु इस्राएल हठीला बना रहा और शिकायत करता रहा। परमेश्वर यशायाह के द्वारा कहता है, मैं ने इन अनाज्ञाकारी और दर्शन देखनेवालों के लिए पूरा दिन हाथ फैलाकर प्रतीक्षा की। यह उनकी कठोरता का वर्णन है।

उनके साथ परमेश्वर का वर्तमान व्यवहार यह है कि वह प्रत्येक यहूदी को अन्यजातियों की नाईं उद्धार दिलाना चाहता है। अन्यजातियां परमेश्वर के राज्य में प्रवेश कर रही हैं परन्तु बहुत ही कम यहूदी सुसमाचार को स्वीकार कर रहे हैं।

इस्राएल के साथ परमेश्वर के व्यवहार की प्रतिज्ञा

11:1–36

I. इस्राएल के साथ परमेश्वर के व्यवहार की निष्पक्षता (11:1–10)

क) पौलुस अपना उदाहरण देता है (11:1)

ख) पौलुस इतिहास का उदाहरण देता है (11:2–10)

1. विश्वासी अल्पसंख्यकों के साथ परमेश्वर का व्यवहार (11:2–6)
2. अन्धे बहुमत के साथ परमेश्वर का व्यवहार (11:7–10)

II. इस्राएल के साथ परमेश्वर के व्यवहार की दूरदर्शिता (11:11–29)

क) परमेश्वर का अस्वीकार्य व्यवहार (11:11–22)

1. इस्राएल के भावी पुनरुद्धार के विचार के साथ (11:11–16)
2. अन्यजातियों के वर्तमान उद्धार के विचार से (11:17–22)

ख) परमेश्वर का समयकालीन व्यवहार (11:23–29)

1. परमेश्वर इस्राएल के पुनरुद्धार में सामर्थी (11:23–24)
2. इस्राएल के पुनरुद्धार में परमेश्वर का उद्देश्य (11:25–29)
    i. उसकी वैधानिक शपथ (11:25)
    ii. उसकी मसीही की शपथ (11:26)
    iii. उसकी वाचा की शपथ (11:27–29)

III. इस्राएल के साथ परमेश्वर के व्यवहार की विश्वासयोग्यता (11:30–36)

क) परमेश्वर की दया (11:30–32)

1. अन्यजातियों को उसकी दया (11:30)
2. यहूदियों को उसकी दया (11:31)
3. संसार को उसकी दया (11:32)

ख) परमेश्वर के मार्गों का वैभव (11:33–36)

1. मानवीय निष्कर्षों के उपरान्त (11:33–35)
2. मानवीय हस्तक्षेप के उपरान्त (11:36)

इस्राएल के साथ परमेश्वर के प्रतिज्ञात व्यवहार की कुंजी है, उसकी विश्वासयोग्यता। अब्राहम को एक जाति बनाने और दाऊद को राजसी घराना बनाने की परमेश्वर की प्रतिज्ञाएं समाप्त नहीं हुई हैं। ये सब प्रतिज्ञाएं प्रभु यीशु में केन्द्रित हैं और उसके आने तक रूकी हुई हैं। उसके आगमन पर यहूदी उसे राजा चिरंजीव रहे कहेंगे और अपना कुटुम्बी मुक्तिदाता ग्रहण करेंगे। आज परमेश्वर यहूदी और अन्यजाति सबको बराबर रखकर उद्धार दिला रहा है। प्रभु यीशु पर विश्वास करनेवाले नये नियम के सौभाग्यों और आशीषों के वारिस हैं। वे कलीसिया के अंग हैं। रोमियों 11 के अनुवाद में चूकने से बचें क्योंकि उसका विषय कलीसिया नहीं है। विषय है यहूदी जाति और अन्यजाति जो अविश्वासी यहूदियों के कारण इस युग में धार्मिक सौभाग्यों से अस्थाई रूप से वंचित हैं।

अध्याय 11 में पौलुस दर्शाता है कि आज यहूदियों के सौभाग्य अस्थाई रूप से रोक दिए गए हैं परन्तु परमेश्वर अपनी प्रतिज्ञाओं को पूरा करेगा। विश्वासी यहूदियों की प्रतिज्ञाओं के वारिस नहीं हैं परन्तु वे अब्राहम के स्वार्गिक वंशज हैं (उत्पत्ति 15:5–6; गलातियों 3:8, 29) और अब्राहम की वाचा की आत्मिक आशीषों के सहभागी हैं (उत्पत्ति 15:18)। यहूदियों को दी गई सांसारिक राज्य की प्रतिज्ञा पूरी होगी। रोमियों 11:29 में लिखा है कि परमेश्वर के वरदान और बुलाहट पछतावा नहीं लाते। परमेश्वर विचार नहीं बदलता है। इस अध्याय में पौलुस इस्राएल के साथ परमेश्वर की निष्पक्षता, विश्वासयोग्यता और दूरदर्शिता दर्शाता है।

I. इस्राएल के साथ परमेश्वर का निष्पक्ष व्यवहार (11:1–10)

पौलुस दर्शाता है कि परमेश्वर निश्चित सिद्धान्तों के अनुसार मनुष्य से व्यवहार करता है और उसका अनुग्रह भी प्रकट होता है ।

क) पौलुस अपना उदाहरण देता है (11:1)

तर्शिश के शाऊल का मन परिवर्तन इस बात का प्रमाण है कि परमेश्वर ने अपनी प्रजा का त्याग नहीं किया है। शाऊल कभी कलीसिया का जानी दुश्मन और प्रधान सतानेहारा था। पद 1, "क्या परमेश्वर ने अपनी प्रजा को त्याग दिया? कदापि नहीं! मैं भी तो इस्राएली हूं..."

ख) वह इतिहास का उदाहरण देता है (11:2–10)

पौलुस इस्राएल के दो भाग करता है– विश्वासी अल्पसंख्यक और अन्धे बहुसंख्यक। वह चाहता है कि उसके भाई परमेश्वर के निष्पक्ष व्यवहार को देखें!

1. विश्वासी अल्पसंख्यकों के साथ परमेश्वर का व्यवहार

उसकी अथाह बुद्धि (पद 2–4) और उसके निष्पादित कार्य (5–6) पर आधारित हैं।

पद 2–4, "परमेश्वर ने अपनी उस प्रजा को नहीं त्यागा, जिसे उसने पहले ही से जाना। क्या तुम नहीं जानते कि पवित्रशास्त्र एलिय्याह के विषय में क्या कहता है, कि वह इस्राएल के विरोध में परमेश्वर से विनती करता है? "हे प्रभु, उन्होंने तेरे भविष्यद्वक्ताओं को घात किया, और तेरी वेदियों को ढा दिया है; और मैं ही अकेला बचा हूं, और वे मेरे प्राण के खोजी हैं।" परन्तु परमेश्वर से उसे क्या उत्तर मिला? "मैं ने अपने लिये सात हज़ार पुरुषों को रख छोड़ा है, जिन्होंने बाअल के आगे घुटने नहीं टेके हैं।"

एलिय्याह ने निराशा के अन्धकार और परमेश्वर के राष्ट्रीय ईश्वरत्याग के प्रति शिकायत की थी जो 1 राजा 18–19 में व्यक्त है।

कर्मेल पर्वत की विजय से ईज़बेल और बाल उपासना को धक्का लगा था परन्तु वह विजय अपूर्ण थी क्योंकि ईज़बेल ने वृक्षकुंजों के 400 पुजारी बचा रखे थे और एलिय्याह भी डर गया था। होरेब पर्वत पर श्रांत और क्लांत बैठा था तब परमेश्वर ने पूछा–1 राजा 19:9, "एलिय्याह तू यहां क्या कर रहा है?"

एलिय्याह ने परमेश्वर से मध्यस्थता की जिसे पौलुस स्पष्ट रूप से कहता है कि वह इस्राएल के विरुद्ध थी। वह इस्राएल के विरुद्ध जो शक्ति चाहता था वह प्रकट हुई–आंधी, भूकंप, आग; परन्तु परमेश्वर उसमें नहीं था। परमेश्वर एक मधुर कोमल वाणी के साथ प्रकट हुआ– अनुग्रह परन्तु एलिय्याह का क्रोध अभी शांत नहीं हुआ था। परमेश्वर ने उसे एक आज्ञा दी– हजाएल को सीरिया का, निमशी के पोते येहू को इस्राएल के राजा होने के लिए तथा एलीशा को अपने स्थान पर भविष्यद्वक्ता होने के लिए उनका अभिषेक कर।

परमेश्वर आंधी, भूकंप, और आग में क्यों नहीं था? उसने एलिय्याह को वे हथियार क्यों नहीं दिए? परमेश्वर ने शेष बाल पुजारियों के विरुद्ध एलिय्याह को क्यों नहीं भेजा? क्योंकि होरेब तक पहुंचने में एलिय्याह का क्रोध इस्राएल पर भड़कने लगा था, ईज़बेल पर नहीं। मूसा के विपरीत एलिय्याह इस्राएल के विरुद्ध प्रार्थना कर रहा था। परमेश्वर नहीं चाहता था कि वह इन विनाशक साधनों का इस्राएल पर प्रयोग करे क्योंकि वह तो नहीं जानता था परन्तु परमेश्वर जानता था कि वहां भी उसका विश्वासी शेष समूह है। परमेश्वर ने उससे कहा कि उसके पास 7000 मनुष्य हैं जिन्होंने बाल के समक्ष घुटने नहीं टेके।

एलिय्याह के वरन् पौलुस के और आज भी ऐसा ही है। परमेश्वर कभी भी विश्वासियों के बिना नहीं रहता है। कलीसिया में भी इस्राएल के समान गवाही की ज्योति मंद पड़ी परन्तु बुझी कभी नहीं।

इस्राएल के साथ परमेश्वर का व्यवहार अथाह बुद्धि और कार्य निष्पादन पर आधारित था।

पद 5–6, "ठीक इसी रीति से इस समय भी, अनुग्रह से चुने हुए कुछ लोग बाकी हैं। यदि यह अनुग्रह से हुआ है, तो फिर कर्मों से नहीं; नहीं तो अनुग्रह फिर अनुग्रह नहीं रहा।" ये विश्वास द्वारा अनुग्रह से उद्धार प्राप्त जन थे जो पुराने समुदाय के अन्तिम विश्वासी और नये समुदाय के प्रथम नाभि थे।

अब इस अल्पसंख्य समूह के विपरीत था (2) अन्धों का समूह। यदि परमेश्वर के पास इस्राएल में विश्वासियों का खाड़ी स्रोत था तो वहां अन्यजातियों का महासागर भी था–अन्धों का समूह। पौलुस एक दुःख का चित्रण प्रस्तुत करता है। वह इस्राएल की निरर्थक खोज की चर्चा करता है–पद 7, "इसलिए परिणाम क्या हुआ? यह कि इस्राएली जिसकी खोज में थे, वह उनको नहीं मिला; परन्तु चुने हुओं को मिला, और शेष लोग कठोर किए गए। यहां अन्धे से अर्थ है "कठोर मन।" मरकुस 3:5 में प्रभु यीशु फरीसियों को कठोर कहता है परन्तु पौलुस इफिसियों 4:17–18 में अन्यजातियों के मन कठोर कहता है। यूनानियों की लालसा ज्ञान प्राप्ति की थी और रोमियों की अधिकार प्राप्ति की थी परन्तु इस्राएल की लालसा धार्मिकता की थी। प्रभु यीशु के इन्कार में वे अपने राष्ट्रीय लक्ष्य से चूक गए और इस कारण वे मन के कठोर हो गए थे, केवल बचे हुए चयनित यहूदियों को छोड़।

पौलुस कहता है कि वे मूर्ख थे– पद 8, "जैसा लिखा है, 'परमेश्वर ने उन्हें आज के दिन तक भारी नींद में डाल रखा है, और ऐसी आंखें दीं जो न देखें और ऐसे कान जो न सुनें।'"

आत्मिक सत्य के प्रति विवेकहीन होने के कारण इस्राएल कठोर हो गए थे। यशायाह 29:10 में इस्राएल के विनाश की भविष्यद्वाणी है। भविष्य में परमेश्वर प्रभु का त्याग करनेवाले मसीही विश्वासियों के साथ भी ऐसा ही करेगा– 2 थिस्सलुनीकियों 2:11–12। यहूदी प्रभु यीशु के प्रति कोढ़ के समान संवेदनाहीन थे।

पौलुस उनके फंदे की चर्चा करता है– पद 9, "और दाऊद कहता है, 'उनका भोजन उन के लिये जाल और फन्दा, और ठोकर और दण्ड का कारण हो जाए।"

इस्राएल के पवित्र मन्दिर में एक मेज़ थी जो परमेश्वर की संगति में भोजन करने का प्रतीक थी (निर्गमन 24:11; लैव्यव्यवस्था 6:16; 7:18, 20; लैव्यव्यवस्था 23:6; गिनती 15:17–21; 18:26–31; व्यवस्थाविवरण 12:7, 18; 14:23, 27:7) उनके अविश्वास के कारण उनके पर्व उनके लिए फंदा बन गए थे क्योंकि उनके अनुष्ठान आत्मिकता से रहित बाहरी दिखावा थे।

पौलुस उनके दासत्व की चर्चा करता है–पद 10, "उनकी आंखों पर अन्धेरा छा जाए ताकि न देखें, और तू सदा उनकी पीठ को झुकाए रखे।"

प्रभु यीशु के त्याग के कारण आज वे देश–देश में यहूदी विरोध का कारण हैं– "उनकी पीठ को झुकाए रख..." उदाहरणार्थ हिटलर के मृत्यु शिविर परन्तु उनके सामने अभी महाक्लेश का आतंक भी है जिसके बाद परमेश्वर दाऊद के घराने पर वरन् संपूर्ण इस्राएल पर अनुग्रह और प्रार्थना का आत्मा उण्डेलेगा और जकर्याह कहता है– 12:10–12, "मैं दाऊद के घराने और यरूशलेम के निवासियों पर अपना अनुग्रह करनेवाली और प्रार्थना सिखानेवाली आत्मा उण्डेलूंगा, तब वे मुझे ताकेंगे अर्थात जिसे उन्होंने बेधा है, और उसके लिये ऐसे रोएंगे जैसे एकलौते पुत्र के लिये रोते–पीटते हैं, और ऐसा भारी शोक करेंगे, जैसा पहिलौठे के लिये करते हैं। उस समय यरूशलेम में इतना रोना–पीटना होगा जैसा मगिद्दोन की तराई में हदद्रिम्मोन में हुआ था। सारे देश में विलाप होगा, हर एक परिवार में अलग–अलग; अर्थात दाऊद के घराने का परिवार अलग, और उनकी स्त्रियां अलग; नातान के घराने का परिवार अलग, और उनकी स्त्रियां अलग।"

अतः परमेश्वर इस्राएल के साथ पक्षपात नहीं कर रहा है। परन्तु विश्वासी बचा हुआ समूह कलीसिया में जोड़ दिया गया है। अन्धे अल्पसंख्यक समूह ने कठोरता का स्वाद चख लिया होगा जिसकी चेतावनी भविष्यद्वक्ता दे चुके थे।

II. इस्राएल के साथ परमेश्वर के व्यवहार की दूरदर्शिता (11:11–29)

अभी इस्राएल के साथ व्यवहार न करना परमेश्वर के दूरस्थ लक्ष्यों की परिपूर्णता के निमित्त है। येपेत (अन्यजाति) शेम के तम्बुओं में वास करने आए हैं (उत्पत्ति 9:27)। परमेश्वर ने इस्राएल का सदाकालीन त्याग नहीं किया है क्योंकि इस प्रकार परमेश्वर की प्रतिज्ञाएं अधूरी रह जाएंगी। अतः पौलुस का मुख्य विषय है कि उनकी प्रतिज्ञाएं कुछ समय के लिए स्थगित की हुई हैं।

क) आज परमेश्वर इस्राएल के साथ अस्वीकार्य व्यवहार कर रहा है (11:11–22)

यह विषय अन्यजातियों के दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है। पौलुस को डर इस बात का है कि अन्यजाति भी इस्राएल की नाईं अपने वर्तमान सौभाग्यों के कारण चूक न जाएं। पूर्वकाल में इस्राएल स्वर्ग का सर्वप्रिय होने के कारण अन्यजातियों को तुच्छ समझता था। इसी प्रकार आज अन्यजाति विश्वासी स्वर्ग के वारिस होने के कारण यहूदियों से घृणा न करें। पौलुस वर्तमान में अन्यजातियों के और भविष्य में इस्राएल के लिए परमेश्वर की योजना की चर्चा करता है।

यद्यपि आज परमेश्वर इस्राएली के साथ अस्वीकार्य व्यवहार कर रहा है परन्तु वह कहता है– 11–12, "अतः मैं कहता हूं क्या उन्होंने इसलिये ठोकर खाई कि गिर पड़ें? कदापि नहीं! परन्तु उनके गिरने के कारण अन्यजातियों को उद्धार मिला, कि उन्हें जलन हो। इसलिये यदि उनका गिरना जगत के लिये धन और उनकी घटी अन्यजातियों के लिये सम्पत्ति का कारण हुआ, तो उनकी भरपूरी से क्या कुछ न होगा।"

पौलुस ने देखा था कि हर एक नगर में यहूदी अन्यजातियों से जलन रखते थे। प्रेरितों के काम 18 में कुरिन्थ के यहूदी सुसमाचार का विरोध कर रहे थे। यहीं से वह रोम की कलीसिया को पत्र लिख रहा था। वे प्रभु यीशु की निन्दा करते हुए लगभग पौलुस की हत्या ही करना चाहते थे। प्रेरितों के काम 22:21–24 में जब पौलुस यहूदियों से कह रहा था कि परमेश्वर ने उसे अन्यजातियों में भेजा तो वे कुपित होकर कपड़े फाड़ने लगे और धूल उछालने लगे थे। वे यह सुनकर कुपित थे कि अन्यजाति उनके द्वारा परिव्यक्त यीशु को स्वीकार करें। वे स्वयं तो सुसमाचार ग्रहण करना नहीं चाहते थे और अन्यजातियों द्वारा सुसमाचार को ग्रहण करना उनसे सहा नहीं जा रहा था।

इस्राएल के वर्तमान सुसमाचार विरोध के उपरान्त भी पौलुस उनके भावी मन परिवर्तन की चर्चा करता है। आज यद्यपि इस्राएल के हठ और विद्रोह और ईर्ष्या के कारण अन्यजाति ऐसी आशीषों के वारिस हो गए हैं तो जब इस्राएल अपनी अधिकृत स्थान में होगा तब उन्हें कैसी महान आशीषें मिलेंगी। परमेश्वर अपने अन्तिम लक्ष्य को भूला नहीं है।

पौलुस परमेश्वर के कार्यों का वर्णन ही नहीं कर रहा है, वह परमेश्वर के कार्यों का उपयोग भी कर रहा है– पद 13–16, "मैं तुम अन्यजातियों से यह बातें कहता हूं। जब कि मैं अन्यजातियों के लिये प्रेरित हूं,

तो मैं अपनी सेवा की बड़ाई करता हूं, ताकि किसी रीति से मैं अपने कुटुम्बियों में जलन उत्पन्न करवाकर उनमें से कई एक का उद्धार कराऊं। क्योंकि जब उनका त्याग दिया जाना जगत के मिलाप का कारण हुआ, तो क्या उनका ग्रहण किया जाना मरे हुओं में से जी उठने के बराबर न होगा? जब भेंट का पहला पेड़ा पवित्र ठहरा, तो पूरा गूंधा हुआ आटा भी पवित्र है; और जब जड़ पवित्र ठहरी, तो डालियां भी ऐसी ही हैं।"

पौलुस को आशा थी कि अन्यजातियों में प्रचार करने के उसके आजीवन कार्य के द्वारा ईर्ष्या को मन में बसाए रखने के बाद भी कुछ यहूदी भाई अवश्य उद्धार पाएंगे।

पौलुस एक बार फिर इस्राएल द्वारा प्रभु यीशु के ग्रहण करने की आशा व्यक्त करता है। वह कहता है कि विश्वजागृति मुर्दों में से जी उठने के समान होगी। यशायाह 11:9 में लिखा है कि उस समय पृथ्वी परमेश्वर के ज्ञान से ऐसे भर जाएगी जैसे समुद्र पानी से भरा होता है। पौलुस कहता है कि अब्राहम जड़ है क्योंकि वही प्रतिज्ञाओं की धरोहर है। कुछ लोग यहां यीशु को जड़ कहते हैं क्योंकि उसे यशायाह यिशै की जड़ कहता है (यशायाह 11:10; रोमियों 15:12)। वही सब स्वार्गिक और सांसारिक आशीषों की जड़ है। अगले पद में पौलुस इस पेड़ को जैतून का पेड़ कहता है–यिर्मयाह 11:16। पेड़ की डालियां यहूदी हैं जो उससे पोषण पाते हैं। अपने अविश्वास के कारण वे अब्राहम की आशीषों से वंचित हो गए थे परन्तु महाक्लेश के बाद मनुष्य इस्राएल के माध्यम से और अधिक आशीषें पाएगा। अन्यजाति रोपित डालियां हैं जो इस्राएल की आशीषों में नहीं वरन् परमेश्वर द्वारा अब्राहम के माध्यम से सब जातियों को आशीषों की प्रतिज्ञा के वारिस हैं (उत्पत्ति 13:2)।

परमेश्वर भावी पुनःस्थापन के विचार के साथ इस्राएल के साथ अस्वीकार्य व्यवहार तो कर रहा है, वह एक काम भी कर रहा है। (2) जैतून के वृक्ष का उदाहरण – पद 17–22, "पर यदि कुछ डालियां तोड़ दी गईं, और तू जंगली जैतून होकर उनमें साटा गया, और जैतून की जड़ की चिकनाई का भागी हुआ है, तो डालियों पर घमण्ड न करना; और यदि तू घमण्ड करे तो जान रख कि तू जड़ को नहीं परन्तु जड़ तुझे सम्भालती है। फिर तू कहेगा, 'डालियां इसलिये तोड़ी गईं कि मैं साटा जाऊं।' ठीक है, वे तो अविश्वास के कारण तोड़ी गईं, परन्तु तू विश्वास से बना रहता है इसलिये अभिमानी न हो, परन्तु भय मान, क्योंकि जब परमेश्वर ने स्वाभाविक डालियों को न छोड़ा तो तुझे भी न छोड़ेगा। इसलिये परमेश्वर की कृपा और कड़ाई को देख! जो गिर गए उन पर कड़ाई, परन्तु तुझ पर कृपा, यदि तू उसमें बना रहे, नहीं तो तू भी काट डाला जाएगा।"

यहां अनेक महत्वपूर्ण शिक्षाएं हैं। पहली, अन्यजाति जंगली जैतून है जिन्हें अच्छे जैतून में साटा गया है। पौलुस कहता है कि यह अप्राकृतिक प्रक्रिया है। अतः हम पद 24 तक रूकेंगे।

यहां एक समस्या उत्पन्न होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि इसमें अध्याय 8 के विपरीत शिक्षा दी गई है। "तू कहेगा कि डालियां इसलिए तोड़ी गईं कि मैं साटा जाऊं। ठीक है, वे तो अविश्वास के कारण तोड़ी गईं, परन्तु तू विश्वास से बना रहता है इसलिये अभिमानी न हो, परन्तु भय मान, क्योंकि जब परमेश्वर ने स्वाभाविक डालियों को न छोड़ा तो तुझे भी न छोड़ेगा।"

ध्यान रखें अध्याय 8 का विषय "कलीसिया" था परन्तु अध्याय 11 का विषय "यहूदी और अन्यजाति" है। अतः टीका करने में तीनों वर्गों का आख्यान अलग अलग होना है क्योंकि परमेश्वर इन तीनों के साथ एक ही स्तर पर व्यवहार नहीं करता है। रोमियों अध्याय 9 और 10 में पौलुस यहूदियों के विषय में चर्चा कर रहा था और अध्याय 11 में वह सीधा कहता है, "मैं तुम अन्यजातियों से यह बातें कहता हूं..." अतः ये चेतावनियां कलीसिया के लिए नहीं हैं।

यहां प्रतीक को देखना आवश्यक है। पुराने नियम में इस्राएल की तीन प्रतीकों में जैतून का वृक्ष एक है। अंजीर इस्राएल के राष्ट्रीय सौभाग्यों का और दाख इस्राएल के आत्मिक सौभाग्यों का प्रतीक है और जैतून का वृक्ष इस्राएल के धार्मिक सौभाग्यों का प्रतीक है। पौलुस के विचार में इस्राएल ने कुछ समय के लिए अपने धार्मिक सौभाग्य को खो दिया है। पुराने नियम में लगभग 25 बार चेतावनी दी गई है कि इस्राएल आपस में बिछड़ जाएगा। ये लोग अब्राहम की वाचा के सौभाग्यों से वंचित हो गए हैं। पौलुस के युग में यह वैधानिक विच्छेद बहुत प्रभावी था। इसका कारण था अविश्वास।

यद्यपि यहां विषय यहूदियों और अन्यजातियों का सौभाग्य है, हम व्यक्तिगत रूप से मसीह में प्राप्त सौभाग्यों के दुरूपयोग के संकट को भी समझ सकते हैं परन्तु इसका मुख्य विषय अन्यजाति और यहूदी है।

ख) आज परमेश्वर इस्राएल के साथ अपने विधान के अनुसार व्यवहार करता है (11:23–29)

पौलुस कहता है, इस्राएल का पुनरुद्धार परमेश्वर के सामर्थ्य में है– पद 23–24, "वे भी यदि अविश्वास में न रहें, तो साटे जाएंगे; क्योंकि परमेश्वर उन्हें फिर साट सकता है। क्योंकि यदि तू उस जैतून

से, जो स्वभाव से जंगली है, काटा गया और स्वभाव के विरुद्ध अच्छे जैतून में साटा गया, तो ये जो स्वाभाविक डालियां हैं, अपने ही जैतून में क्यों न साटे जाएंगे।"

अन्यजातियों का रोपा जाना अस्वाभाविक है।

सच तो यह है कि जंगली जैतून का फल तेल निकालने योग्य नहीं होता है। अतः उन्हें जंगली पेड़ में अच्छे जैतून की कलम लगाना पड़ती है परन्तु पौलुस यहां एक स्वाभाविक बात करता है और उसे स्वीकार भी करता है। मैं ने स्वयं देखा है कि पौलुस जो कह रहा है वह सफल नहीं होता है। तो फिर पौलुस जो जैतून के देश का निवासी है, ऐसी गलती कैसे करता है। उसके कहने का अर्थ है कि परमेश्वर अन्यजाति को अपने अनुग्रह अधीन आशीष देता है। यह परमेश्वर द्वारा अन्यजाति और यहूदियों के साथ पक्षपात रहित व्यवहार का चित्रण है। यदि विपरीत स्वभाव ऐसी आशीषों का कारण है तो जब इस्राएल लौटेगा तब कैसा होगा।

इस्राएल का पुनरुद्धार परमेश्वर के सामर्थ्य से है। अगला– (2) इस्राएल का पुनरुद्धार परमेश्वर का उद्देश्य निमित्त है। इसके तीन चरण हैं जो दर्शाते हैं कि परमेश्वर ऐसा ही करेगा।

(अ) वैधानिक निश्चितता –पद 25, "हे भाइयो, कहीं ऐसा न हो कि तुम अपने आप को बुद्धिमान समझ लो; इसलिये मैं नहीं चाहता कि तुम इस भेद से अनजान रहो कि जब तक अन्यजातियां पूरी रीति से प्रवेश न कर लें, तब तक इस्राएल का एक भाग ऐसा ही कठोर रहेगा।"

अन्यजातियों के विषय में धर्मशास्त्र के दो संदर्भ ध्यान देने योग्य हैं– लूका 21:24, अन्यजातियों का समय और अन्यजातियों का पूरा प्रवेश– (जैसा यहां लिखा है) अन्यजातियों का समय अर्थात यरूशलेम पर अन्यजातियों का राज जिसका आरंभ नबूकदनेस्सर के समय हुआ था और प्रभु यीशु के आने तक रहेगा। वह सिंहासन का अधिकार अपने हाथ में लेगा क्योंकि सच्चा उत्तराधिकारी वही है। यहां तक कि एज्रा के अधीन स्वदेश लौटनेवाले भी विदेशी शक्ति के अधीन दे। सब से पहला अन्यजातिशासक नबूकदनेस्सर था (दानिय्येल 2:37) यह उनका राजनीतिक उत्थान था।

प्रभु यीशु के क्रूसीकरण और पवित्र आत्मा के तिरस्कार के कारण परमेश्वर ने उनसे आत्मिक आशीषें भी छीन लीं और रोमी तीतुस के आक्रमण के बाद कलीसिया से यहूदी नाम ही मिट गया।

"अन्यजातियां पूरी रीति से प्रवेश न कर लें" अर्थात अन्यजातियों की आत्मिक आशीषें जैसा पतरस कहता है– प्रेरितों के काम 15:14– परमेश्वर ने अन्यजातियों में से अपने नाम के निमित्त एक लोग तैयार किए हैं। यह कार्य कलीसिया के उठाए जाने पर पूरा होगा और परमेश्वर एक बार फिर इस्राएल द्वारा संसार को आशीष देगा। उस समय यहूदी सुसमाचार प्रचार करेंगे।

पद 25 में "जब तक" उस समय का प्रतीक है जब अन्यजातियों का समय समाप्त हो जाएगा और यहूदी आत्मिक प्रमुखता में आ जाएंगे।

इस्राएल के पुनरुद्धार की संवैधानिक गारंटी के साथ

(ब) उनकी उद्धार की गारंटी भी है, पद 26, "और इस रीति से सारा इस्राएल उद्धार पाएगा... " उनका छुड़ानेवाला जो सिय्योन से आएगा वह प्रभु यीशु है। महाक्लेश में अधिकांश इस्राएली नष्ट हो जाएंगे। (यिर्मयाह 30:5–31, 40; दानिय्येल 12:1; प्रकाशितवाक्य 7) परन्तु शेष इस्राएली मन फिराएंगे। (जकर्याह 12:10–14) इसके समर्थन में पौलुस यशायाह के दो संदर्भ देता है– (यशायाह 59:20–21, 27:9) सारा इस्राएल अर्थात महाक्लेश से बचे हुए इस्राएली। यह मसीह संबन्धित गारंटी है कि इस्राएल का पुनरुद्धार होगा।

(स) अनुबन्धित गारंटी–पद 27–29, "और उनके साथ मेरी यही वाचा होगी, जब कि मैं उनके पापों को दूर कर दूंगा। सुसमाचार के भाव से तो तुम्हारे लिये वे परमेश्वर के बैरी हैं, परन्तु चुन लिये जाने के भाव से वे बापदादों के कारण प्यारे हैं। क्योंकि परमेश्वर के वरदान और बुलाहट अटल हैं।"

यहां पौलुस के मन में यिर्मयाह 31 की नई वाचा का विचार है। परमेश्वर मूल्यांकन किए बिना गुम्मट नहीं बनाता है। (लूका 14:28–29) और न ही वह अपने उद्देश्य का विरोध कम गिनता है। (लूका 14:31–32) उसके सामने ऐसी कोई विरोधी शक्ति नहीं जिसका उसे पूर्वज्ञान न हो और जिसका उसने पहले से प्रबन्ध न किया हो। पुरखों के साथ उसकी वाचा मनुष्य द्वारा बदल नहीं गई है। परमेश्वर की महिमा और उसके सिंहासन का सम्मान इसके साथ जुड़ा है जैसा मूसा ने दो बार बलपूर्वक परन्तु नम्रता से कहा था। (निर्गमन 32:11–14, गिनती 14:11–20)

पत्री के मुख्य विषय पर लौटने से पूर्व पौलुस एक बात और कहता है।

III. इस्राएल के साथ परमेश्वर के व्यवहार की विश्वासयोग्यता (11:30–36)

अध्याय का अन्तिम पद मनुष्य के साथ परमेश्वर के व्यवहार के आश्चर्यकर्म और भेद के लिए परमेश्वर की आराधना में एक महान स्तुतिगान है।

क) परमेश्वर की दया (11:30–32)

पौलुस इन पदों में चार बार परमेश्वर की दया का उल्लेख करता है। पहले अन्यजातियों के लिए परमेश्वर की दया– (1) पद 30, "क्योंकि जैसे तुम ने पहले परमेश्वर की आज्ञा न मानी, परन्तु अभी उनके आज्ञा न मानने से तुम पर दया हुई।"

इस्राएल के साथ परमेश्वर का संवैधानिक व्यवहार अन्यजातियों के लिए परमेश्वर की दया का अवसर बना। दया परमेश्वर के आसन की सबसे तीव्र ज्योति है। (2) यहूदियों के लिए उसकी दया –पद 31, "वैसे ही उन्होंने भी अब आज्ञा न मानी, कि तुम पर जो दया होती है इससे उन पर भी दया हो।"

अन्यजातियों ने अवज्ञा के बाद भी यहूदियों की कठोरता के कारण परमेश्वर के दया पात्र बने। अब यहूदी अविश्वासी हैं परन्तु अन्यजातियों के दया पात्र बनने के कारण वे भी परमेश्वर की दया के पात्र बनेंगे। अन्त में संसार के लिए भी वह दयावान है। (3) –पद 32, "क्योंकि परमेश्वर ने सब को आज्ञा उल्लंघन का बन्दी बना कर रखा, ताकि वह सब पर दया करे।" परमेश्वर ने संपूर्ण मानवजाति की अवज्ञा को अनदेखा कर दिया कि वह सब पर दया करे।

ख) परमेश्वर के मार्गों का वैभव (11:33–36)

पौलुस परमेश्वर के मार्गों के वैभव की स्तुति करता है।

(1) उसके मार्ग मनुष्य के लिए अगम हैं– पद 33–35, "आहा! परमेश्वर का धन और बुद्धि और ज्ञान क्या ही गंभीर हैं! उसके विचार कैसे अथाह, और उसके मार्ग कैसे अगम हैं! 'प्रभु की बुद्धि को किसने जाना? या उसका मंत्री कौन हुआ? या किसने पहले उसे कुछ दिया है जिसका बदला उसे दिया जाए?'"

मनुष्य अपने "क्यों?" का उत्तर पाने के लिए ऊंचाइयों पर जा चुका है। गहराइयों में उतर चुका है। वह एक महान विचारक है परन्तु परमेश्वर का व्यवहार मनुष्य की बुद्धि से परे है। परमेश्वर कहता है– यशायाह 55:8–9, "क्योंकि यहोवा कहता है, मेरे विचार और तुम्हारे विचार एक समान नहीं हैं, न तुम्हारी गति और मेरी गति एक सी है। क्योंकि मेरी और तुम्हारी गति में और मेरे और तुम्हारे सोच विचारों में, आकाश और पृथ्वी का अन्तर है।"

जब परमेश्वर के मार्ग हम पर प्रकट किए जाते हैं तब हम केवल दण्डवत करके उसकी आराधना करते हैं।

इसी प्रकार उसके मार्ग (2) मनुष्य के हस्तक्षेप से परे हैं– पद 36, "उसी की ओर से और उसी के द्वारा, और उसी के लिए सब कुछ है। उसकी महिमा युगानुयुग होती रहे। आमीन।" वह जगत का सृजनहार और सुधि लेनेवाला है। वह युगानुयुग अपनी योजना पूरी करता है। मनुष्य का विद्रोह उसकी इच्छा को पूरी होने से रोक नहीं सकता। भजन संहिता 2:1–4 में लिखा है, "जाति जाति के लोग क्यों हुल्लड़ मचाते हैं, और देश देश के लोग व्यर्थ बातें क्यों सोच रहे हैं? यहोवा और उसके अभिषिक्त के विरुद्ध पृथ्वी के राजा मिलकर, और हाकिम आपस में सम्मति करके कहते हैं, 'आओ, हम उनके बन्धन तोड़ डालें, और उनकी रस्सियों को अपने ऊपर से उतार फेकें। वह जो स्वर्ग में विराजमान है, हंसेगा; प्रभु उनको ठट्ठों में उड़ाएगा।"

इस्राएल के साथ उसका व्यवहार मनुष्य के हस्तक्षेप से परे है। उसकी निष्पक्षता, उसकी दूरदर्शिता और उसकी विश्वासयोग्यता सिद्ध करते हैं कि इस्राएल के साथ उसका व्यवहार पूरा होकर ही रहेगा।

भाग 3

सुसमाचार का अभ्यास

12:1—16:24

मसीही विश्वासी

12:1—2

I. एक मसीही जन पर विश्वासी होने के कारण कैसी चुनौतियों आती हैं (12:1)

क) बेरोक बलिदान देना

1) उचित काम

2) व्यावहारिक काम

ख) निष्कलंक बलिदान

ग) निष्पक्ष बलिदान

II. विश्वासी होकर मसीही जन कैसे बदलता है (12:2)

क) नैतिक रूप से

ख) मानसिक रूप से

ग) प्रेरणा से

पौलुस अब अन्य विषय की चर्चा छोड़कर मुख्य विचार पर आता है। सुसमाचार के सिद्धान्त और समस्याओं की चर्चा करके अब वह सुसमाचार के अभ्यास की चर्चा करेगा। शेष संपूर्ण पत्री में वह इसी विषय पर चर्चा करेगा। पत्रियों की विशेष शिक्षा है कि विश्वास व्यवहार से प्रकट होता है; शिक्षा कर्मों से।

रोमियों की पत्री का यह अन्तिम अंश दो भागों में विभजित है। पहला, मसीही जीवन के नियम (12:1—13:7) और दूसरा, मसीही प्रेम के नियम (13:8—16:24)। पहला भाग तीन खण्डों में विभाजित है और विश्वासी के आत्मिक, सामाजिक और धर्मनिरपेक्ष जीवन से संबन्धित है।

विश्वासी के मसीही जीवन को दो भागों में उपविभाजित किया गया हैः एक, मसीही जन एक विश्वासी है (12:1–2) दूसरा, मसीही जन भाई है। (12:3–13)

I. विश्वासी होने के कारण मसीही जन को चुनौती (12:1)

यह चुनौती विश्वासी के शरीर की है जो जयवन्त मसीही जीवन की कुंजी है। रोमियों 6–8 के सत्यों को केवल जानना और शरीर को दैनिक जीवन में मसीह के जीवन के अधीन न करना अर्थहीन है।

शरीर एक स्वेच्छिक बलिदान (12:1)

परमेश्वर विश्वासी को विवश नहीं करता कि वह अपना शरीर समर्पित करे। वह घोड़े के समान उस पर लगाम नहीं लगाता है कि वह उसकी आज्ञा माने। परमेश्वर उससे आग्रह करता है। परमेश्वर कहता है कि वह विवशता से रहित बलिदान चढ़ाए। परन्तु वह स्पष्ट कहता है कि शरीर परमेश्वर को समर्पित करना विश्वासी का काम हैः (1) यह उचित है– पद 1, "इसलिए हे भाइयों, मैं तुम्हें परमेश्वर की दया स्मरण दिला कर विनती करता हूं कि अपने शरीरों को जीवित, और पवित्र, और परमेश्वर को भावता हुआ बलिदान करके चढ़ाओ। यही तुम्हारी आत्मिक सेवा है।"

बाइबल अध्ययन का एक सिद्धान्त है कि जब भी हम "इसलिये" शब्द देखें तो विचार करें कि वह शब्द वहां क्यों आया है। यहां "इसलिये" शब्द परमेश्वर द्वारा विश्वासी के शरीर की मांग को पिछले अध्यायों में उसकी दया से जोड़ रहा है। परमेश्वर ने हमें पाप के दण्ड और उसके अधिकार से छुड़ा लिया है। उसने हमें अहम् के हर रूप से बचाया है। उसने जातियों की नियति को समाप्त कर दिया है। वह अपने अनुग्रह में विजयी हुआ है और अपनी दया को बहुत बढ़ा दिया है, उसने हमें अपनी दया से घेर रखा है और हमारे लिए असंख्य दया प्रस्तुत की है। हमारे प्राणों के चारों ओर अनुग्रह के गढ़ खड़े किए हैं। और हमारे मन की दरारों में दया भर दी है। उसने हमें अन्तर्जित अनुग्रह से परिपूर्ण किया है और अपनी अबाधित प्रेम भरी बाहों में सब उठा लिया है। अतः पौलुस कहता है, "हे भाइयों, मैं तुम्हें परमेश्वर की दया स्मरण दिला कर विनती करता हूं कि अपने शरीरों को जीवित, और पवित्र, और परमेश्वर को भावता हुआ बलिदान करके चढ़ाओ।"

यह उचित ही नहीं (2) व्यावहारिक भी है। इससे रोमियों 1–8 के सिद्धान्त रोमियों 12–16 की व्यावहारिकता में परिवर्तित होते हैं। परमेश्वर चाहता है कि हमारा पवित्र चाल–चलन घर में तथा मार्गों में हो, कार्यालय में हो। इन दोनों को जोड़नेवाला समर्पित शरीर है। हमारे शरीर परमेश्वर को चढ़ाना एक सर्वाधिक मुक्तियुक्त कार्य है जो हम परमेश्वर के लिए कर सकते हैं।

हम विश्वासियों के लिए विलासिता, देहिक और आत्मिक तीनों जीवन एक साथ जीना स्वाभाविक है। शरीर के अधीन जीनेवाला मनुष्य विलासी होता है। इसका अर्थ यह नहीं कि हम लम्पट जीवन जीएं। इसका वास्तविक अर्थ है इंद्रियों के वश में रहना।

ज़रा ध्यान दें: मुझे यह गंध पसन्द नहीं। बहुत गर्मी है। मैं बहुत थक गया हूं। क्या इसका स्वाद अच्छा है? इसमें कैसा लगता है? ऐसा मत करो, दर्द होता है, क्या यह कुरुप नहीं? मालूम, सावित्री ने क्या कहा? इन सब में शारीरिक प्रतिक्रिया है। यह सब इंद्रियों से संबन्धित हैं– देखना, सूंघना, सुनना, स्वाद और गंध। इन इंद्रियों के वश में रहनेवाले विलासी होते हैं। विश्वासी के लिए भी यह संभव है। वह प्रार्थना सभा में नहीं जाएगा क्योंकि गर्म बहुत है। वह झुग्गियों में काम नहीं करेगा क्योंकि वहां दुर्गन्ध आती है। वह किसी की भाषा पसन्द नहीं करेगा वह विलासी विश्वासी है। उसने उद्धार पा लिया है परन्तु उसका जीवन स्तर बहुत नीचे है।

दूसरी ओर हमें अपनी बुद्धि के नियन्त्रण में रहना भी संभव है–भावनाओं और अपनी मन की इच्छाओं के। यहां चूक को समझना बहुत कठिन होता है। विश्वासी मसीही विश्वास के बौद्धिक प्रयासों में लग जाता है। वह चलती फिरती बाइबल बन जाता है। मनुष्य उसके सत्य के ज्ञान के लिए उसे सरहाते हैं परन्तु आवश्यक नहीं कि वह आत्मिक हो। उसका सत्य स्वीकरण प्रायः केवल बौद्धिक स्तर पर होता है या वह भावनात्मक होगा। प्रभु यीशु का क्रूसीकरण उसके आसूं निकाल देगा। सभाओं में वह हल्लिलूयाह चिल्लाएगा। वह गरीबों के लिए अपनी जेब खाली कर देगा परन्तु आवश्यक नहीं कि वह आत्मिक हो नास्तिक भी ऐसा ही करते हैं।

दूसरी ओर विश्वासी दृढ़ इच्छावाला भी होता है। मसीह को ग्रहण करके वह अपनी सिगरेट की डिब्बी फेंक देता है और फिर कभी सिगरेट नहीं पीता है परन्तु यह उसकी आत्मिक विजय नहीं दृढ़ इच्छा का प्रदर्शन है। कुछ में तीनों बातें दिखाई देती हैं– बुद्धि, भावना और दृढ़ संकल्प और वह हर जगह प्रशंसा का पात्र होता है। यह एक घातक फंदा है।

अब कहने का अर्थ यह नहीं कि आत्मिक विश्वासी के जीवन में बुद्धि, भावना और संकल्प की आवश्यकता नहीं परन्तु ये तीन गुण आत्मिकता के सत नहीं हैं। यदि मनुष्य की विलासिता बुद्धि के अधीन हो तो वह एक आदर्श मनुष्य हो जाता है। परन्तु वह आत्मिक नहीं है और न ही उद्धार प्राप्त है।

आत्मिक होने के लिए मनुष्य को पवित्र आत्मा के वश में होना है। इसकी कुंजी शरीर का समर्पण है क्योंकि शरीर के अंगों से ही सब अभिव्यक्तियां ग्रहण की जाती हैं और सब मनोवेग प्रकट किए जाते हैं। इस कारण जब पवित्र आत्मा शरीर को वश में करता है तब वह संपूर्ण मनुष्यत्व को अपने वंश में कर लेता है। अतः सच्ची आत्मिकता पाने के लिए एक विश्वासी को अपना शरीर परमेश्वर के अधीन कर देना चाहिए कि वह उसमें समाकर उसको काम में ले। इस प्रकार इंद्रियां ही नहीं, बुद्धि, भावनाएं और इच्छा भी उसके अधीन हो जाती हैं और मनुष्य प्रभु यीशु की सुन्दरता प्रकट करता है। अब हम कैसे जानेंगे कि कोई काम शरीर का है या आत्मा का? निश्चय ही अन्तर बहुत कम है। इनके मध्य केवल परमेश्वर का वचन नहीं है– इब्रानियों 4:12, "क्योंकि परमेश्वर का वचन जीवित, और प्रबल, और हर एक दोधारी तलवार से भी बहुत चोखा है; और प्राण और आत्मा को, और गांठ–गांठ और गूदे–गूदे को अलग करके आर–पार छेदता है और मन की भावनाओं और विचारों को जांचता है।"

हम केवल वचन के दैनिक अध्ययन द्वारा ही अपने आचरण और वार्तालाप को आत्मा के प्रकाश में जांच सकते हैं। "जांचता" शब्द केवल एक ही बार धर्मशास्त्र में आया है जिसका अभिप्राय है कि शरीर और आत्मा के कामों को जांचकर उनमें अन्तर स्पष्ट करें। (यूहन्ना 3:6) आत्मिक जन और शारीरिक जन में अन्तर।

ख) शरीर एक निष्कलंक बलिदान है (12:1)

पवित्र आत्मा शरीर को नियंत्रण में लेकर विश्वासी के अंगों में मसीह के बलिदान के फल अत्पन्न करता है। अतः पुराने नियम की तुलना में विश्वासी की देह एक जीवित बलिदान है। वहां बलि चढ़ाने में पशु का वध किया जाता था परन्तु विश्वासी अपनी देह बलि करके जीवित रहता है वरन् जीवन पाता है।

पौलुस कहता है कि बलिदान (1) जीवित होना चाहिए पुराने नियम के मृतक बलिदानों के समान नहीं क्योंकि पवित्र आत्मा के वश में आने पर कलवरी की विजय हमारे अनुभव में लाभ की बनाई जाती है। मृतक अवस्था का निवारण होता है और विश्वासी के अंगों से प्रभु यीशु के विजयी जीवन का प्रदर्शन होता है।

(2) सिद्ध एवं परिशुद्ध–इस बलिदान को पवित्र होना है। मसीह की पवित्रता और शुद्धता सब अशुद्धता को दूर कर देती है।

(3) यह बलिदान ग्रहणयोग्य हो। पवित्र आत्मा के अन्तर्वास के कारण प्रभु यीशु के बलिदान का मूल्य विश्वासी को अनुभव होता है।

वह उस प्रिय में स्वीकार योग्य ही नहीं, उसका जीवन जीवित, पवित्र बलिदान बन जाता है जो परमेश्वर को प्रसन्न करता है और परमेश्वर उसे ग्रहण करता है। इससे कम कुछ नहीं चलेगा।

ग) शरीर पक्षपातरहित बलिदान हो (12:1)

पौलुस कहता है कि ऐसा बलिदान हमारी विवेकपूर्ण सेवा हो। कुछ लोग इसे विवेकपूर्ण आराधना कहते हैं। इसमें विवशता या बाध्यता नहीं है। दबाव नहीं है। परमेश्वर की इच्छा के अनुरूप होने के लिए व्यक्तित्व पर दबाव नहीं है। परमेश्वर हमें बुद्धिजीवी मानता है। अतः उसकी मांग का तर्क ऐसा हो कि हम तुरन्त प्रतिक्रिया दिखाएं।

यह एक विश्वासी को चुनौती है। परमेश्वर की दया से अभिभूत और घिरा हुआ वह कलवरी की विजय के तर्क को अन्तर्ग्रहण करता है। परमेश्वर न तो इससे अधिक कुछ मांगता है और न इससे कम कुछ चाहता है। सब धर्म बलिदान को जड़ बनाते हैं परन्तु मसीही धर्म बलिदान को फूल बनाता है।

II. विश्वासी होकर मसीही जन में क्या बदलाव आता है (12:2)

शरीर को बलि चढ़ाने पर जीवन में बदलाव आता है। विश्वासी की देह नये जीवन को प्रकट करने का साधन है। हम यूनानियों के समान शरीर की महिमा का प्रदर्शन नहीं करते न ही उनकी मूर्तियां बनाते

हैं। हम वैरागियों के समान शरीर को कष्ट नहीं देते न भूखा मारते हैं। हम अपना शरीर पवित्र आत्मा को दे देते हैं कि उसके कार्यों पर नियंत्रण रखे। अपनी देह को ऐसा बलिदान बनाने पर विश्वासी बदल जाता है।

क) नैनिक बदलाव (12:2)

"संसार के सदृश्य न बनो।" सदृश्य बनने का अर्थ है, बाहरी समानता न कि मन की समानता। जे. बी. फिलिप्प्स का अनुवाद है, "संसार तुम्हें अपने सांचे में न दबाए।" संसार अर्थात मनुष्य के पतन के बाद का पापी संसार परमेश्वर के विरोध में शक्तियों के अधीन इस संसार के शासक की प्रभुता में। यह संसार खाने पीने से लेकर नैतिकता और सदाचार के क्षेत्रों में भी हम पर दबाव डालता है। पापियों के लिए यह संसार शैतान का अड्डा है और पवित्र जनों के लिए प्रलोभन।

परमेश्वर की वेदी पर चढ़ाया हुआ विश्वासी का शरीर संसार के सदृश्य नहीं होगा। वह नैतिक रूप से बदल जाता है। उसका जीवन भीतर से ही बदल जाता है। मत्ती 6:29 में प्रभु यीशु ने कहा था कि सुलैमान भी जंगली सोसन के सदृश्य वैभवशाली नहीं था। उसका वैभव बाहरी था परन्तु सोसन का वैभव भीतरी है। विश्वासी में संसार पर जय पाने का भीतरी सामर्थ्य है। वह इसके विपरीत संसार के लिए आदर्श स्थापित करता है।

ख) वह मानसिक रूप से बदल जाता है (12:2)

"मन के नये हो जाने से" यहां मूल भाषा यूनानी का शब्दार्थ है रूपान्तरण जैसा मत्ती 17:2; मरकुस 9:2 में यीशु का रूपान्तरण हुआ था। यह प्रभु यीशु में चित्त लगाने से होता है (2 कुरिन्थियों 3:18)। पवित्र आत्मा विश्वासी के जीवन में तभी काम करेगा जब उसका शरीर एवं मन उसके वश में हो।

धर्मशास्त्र में रूपान्तरण केवल दो ही मनुष्यों में स्पष्ट दिखाई दिया था। मूसा जब 40 दिन परमेश्वर की उपस्थिति में रहने के बाद सीनै से नीचे उतरा था (निर्गमन 34:29)। दूसरा स्तिफनुस (प्रेरितों के काम 6:5)। महासभा ने देखा कि उसका चेहरा स्वर्गदूत के समान चमक रहा था। प्रभु यीशु के साक्षात दर्शन से ऐसा परिवर्तन आता है। 1 यूहन्ना 3:2, "हे प्रियो, अब हम परमेश्वर की सन्तान हैं, और अभी तक यह प्रगट नहीं हुआ कि हम क्या कुछ होंगे! इतना जानते हैं कि जब वह प्रगट होगा तो हम उसके समान होंगे, क्योंकि उसको वैसा ही देखेंगे जैसा वह है।"

पवित्र आत्मा हम में प्रभु यीशु का यह स्वरूप अंकित करना चाहता है कि हमारे चेहरे से प्रभु यीशु का प्रताप कुछ तो झलके। पवित्र आत्मा चेहरे को नहीं मन को नया करके प्राणों को बदल देता है।

ग) प्रेरणात्मक परिवर्तन (12:2)

"परमेश्वर की भली और भावती और सिद्ध इच्छा अनुभव से मालूम करते रहो।" प्रत्येक विश्वासी को अपने लिए परमेश्वर की इच्छा जानना आवश्यक है। परमेश्वर हमसे ऐसा काम कभी नहीं करवाएगा जो हमारे अनन्त जीवन के लिए हानिकारक हो। उसकी इच्छा हमारे जीवन में वैसी ही नकारात्मक हो सकती है जैसी पतरस के दर्शन में प्रकट हुई थी जब परमेश्वर ने उसे कुरनेलियुस के घर जाने को कहा था (प्रेरितों के काम 10)। परमेश्वर की इच्छा सर्वज्ञान और अलौकिक प्रेम से पूर्ण होती है। उत्पत्ति 50:20 में यूसुफ परमेश्वर के उद्देश्य की अतीत से तुलना करके कहता है, परमेश्वर ने भलाई की ही इच्छा की। शैतान हमें हताश करके कष्ट, दुःख और हानि के काम करवाता है। वह परमेश्वर में विश्वास की कमी का बोध उत्पन्न करके हमें डराना चाहता है। परमेश्वर की इच्छा भली है।

उसकी इच्छा ग्रहणयोग्य है। परमेश्वर हमसे अस्वीकार्य काम नहीं करवाएगा। वह हमें दैत्यों का सामना करने के लिए तैयार करता है। इस्राएल यदि पूर्व में बढ़ता तो अति शीघ्र कनान पहुंच जाता परन्तु परमेश्वर उन्हें दक्षिण में ले गया, सीनै पर्वत के निकट क्योंकि वह चाहता था कि वे अनुभवों के आधार पर उसमें भरोसा रखें। जब कनान प्रवेश का समय आया तब केवल कालिब और यहोशू जंगल के अनुभव पर आधारित प्रवेश करने को तैयार थे। उन्होंने परमेश्वर की इच्छा स्वीकार नहीं की और दण्ड पाया (गिनती 13–14)।

अब्राहम ने परमेश्वर की इच्छा को स्वीकार करके अपने पुत्र इसहाक की बलि चढ़ाई (उत्पत्ति 22)। वह परमेश्वर के उद्देश्य नहीं जानता था परन्तु यह जानता था कि परमेश्वर ने इसहाक के माध्यम से प्रतिज्ञाएं की हैं तो वह उसे जिलाएगा भी (इब्रानियों 11:19)। परन्तु उसने शर्तरहित आज्ञा मानी। पिता त्याग से पुत्र त्याग अधिक कष्टदायी होता है परन्तु परमेश्वर ने इस बीच उसे तैयार कर दिया था। परमेश्वर सुनिश्चित करता है कि उसकी आज्ञाएं किसी पर बोझ न बनें (1 यूहन्ना 5:3)। यदि परमेश्वर की आज्ञाएं हमें बोझ लगती हैं तो इसका अर्थ है कि हम उस बात को नहीं देख पा रहे हैं जो वह हमें दिखाना चाहता है। परमेश्वर कभी नहीं चाहता कि हम ऐसा कदम उठाएं जिसके लिए हम तैयार नहीं हैं। शैतान हमारे मन

में यह विचार डालता है कि परमेश्वर हमसे असंभव कार्य करवाना चाहता है। परमेश्वर की इच्छा स्वीकार्य है और जिन्होंने अपने जीवन को जीवित बलिदान बनाया है वे इसे सिद्ध करेंगे।

अन्त में परमेश्वर की इच्छा सिद्ध है। हम परमेश्वर की योजना में सुधार नहीं ला सकते हैं। हम यहां वहां कुछ अंश ही देख पाते हैं परन्तु परमेश्वर पूर्ण दृश्य देखता है। वह तो वर्तमान, भूतकाल, और भविष्य को अनन्त परिदृश्य में देखता है। वह देख सकता है कि हम कब, क्यों, और कहां किसी के जीवन को स्पर्श करते हैं। वह सबके सब काम देखता है। वह सब परिस्थितियों को नियन्त्रित करता है। उसकी इच्छा सिद्ध है।

अतः मसीह जन विश्वास में आकर चुनौती पाता है और बदल जाता है। वह अपनी देह परमेश्वर को दे देता है और एक संपूर्ण नया, ऊंचा, और वृहत जीवन दृष्टिकोण प्राप्त करता है। अब जीवन का यह नया गुण सब मानवीय संबन्धों को कैसे संपर्क करता है, शेष संपूर्ण पुस्तक का विषय है।

विश्वासी एक भाई

12:3–13

I. अन्य विश्वासियों के साथ उसका संबन्ध (12:3–5)

क) यह संबन्ध बुद्धिमानी का हो (12:3)

ख) यह संबन्ध घनिष्ठ हो (12:4–5)

II. अन्य भाइयों के प्रति उत्तरदायित्व (12:6–13)

क) वरदानों का अभ्यास (12:6–8)

1) वरदान परमेश्वर के वचन की शिक्षा में काम में लें (12:6–8)

i. सत्य की प्रेरणा (भविष्यद्वाणी)

ii. सत्य का अवतार (सेवा)

iii. सत्य की व्याख्या (शिक्षा)

iv. सत्य की कामना (उपदेश)

2) वरदान परमेश्वर के काम को बढ़ाने में काम आएं (12:8)

i. दान देकर

ii. अगुवाई देकर

iii. बाहर जाकर

ख) अनुग्रह के अभ्यास में (12:9–13)

1. उसका चरित्र (12:9)
2. उसके संपर्क (12:10)
3. उसका आचरण (12:11)
4. उसके अंगीकार (12:12)
5. उसकी चिन्ताएं (12:13)

विश्वासी अपनी देह परमेश्वर को जीवित बलिदान चढ़ाए कि उसके दैनिक जीवन में प्रभु यीशु का जीवन प्रकट हो। प्रभु यीशु में अन्य विश्वासियों के संबन्ध में वह कलीसिया के सब संबन्धों और उत्तरदायित्वों में वह बहुतायत का जीवन प्रकट करे।

I. अन्य भाइयों के साथ विश्वासी का संबन्ध (12:3–5)

विश्वास में आकर विश्वासी परमेश्वर के साथ और लोगों के साथ नये संबन्धों में आ जाता है जिसके कारण विश्वासी के विचारों और स्वभाव में बदलाव आता है। परमेश्वर के साथ उसके संबन्ध समर्पण के कारण बदल जाते हैं और अन्य विश्वासियों के साथ उसके संबन्ध नई देह (कलीसिया) के प्रति लिहाज़ के कारण बदल जाते हैं। विश्वासियों की देह के साथ उसके संबन्ध बुद्धिमानी के तो होते ही हैं साथ ही घनिष्ठता के भी होते हैं।

क) बुद्धिमानी का संबन्ध (12:3)

विश्वासी को कलीसिया में अन्य विश्वासियों के साथ संबन्ध समझना है– पद 3, "क्योंकि मैं उस अनुग्रह के कारण जो मुझ को मिला है, तुम में से हर एक से कहता हूं कि जैसा समझना चाहिए उससे

बढ़कर कोई भी अपने आप को न समझे; पर जैसा परमेश्वर ने हर एक को विश्वास परिमाण के अुनसार बांट दिया है, वैसा ही सुबुद्धि के साथ अपने को समझे।"

दूसरे शब्दों में वह अपने आप को समझे और अन्य विश्वासियों को समझे। इसमें दो खतरे हैं। एक वह अपने आप को बड़ा समझे या दूसरी ओर वह झूठी दीनता दिखाकर नीचे गिरे। सी.एस. लूईस ने अपनी पुस्तक "स्क्रूटेपलेटर्स" में वरिष्ठ शैतान की ओर से कनिष्ठ शैतान को पत्र लिखा। उसमें उसने उसे परीक्षा की कला सिखाई। कनिष्ठ शैतान का एक भवविकल मसीही विश्वासी हो गया था। अतः वरिष्ठ शैतान अप्रसन्न था और वह उसे नये विश्वासी के कलीसियाई संबन्धों से लाभ उठाना सिखाता है।

यह नाटकीय गद्यसंग्रह विश्वासी की एक सीमा का उल्लेख करता है कि वह स्वयं को अन्यों से बड़ा समझता है। वह घमण्डी और नकचड़ा हो जाता है परन्तु इसका विपरीत भी संभव है। वह अपने आप को छोटा समझने लगता है। वह क्योंकि अच्छा प्रचार नहीं कर सकता और शब्दों द्वारा किसी को प्रभावित नहीं कर पाता है इसलिए वह अपने आप को विश्वास में दुर्बल समझने लगता है। वहां अपने आप को दीन बना लेता है जबकि सच्ची दीनता के विषय में वह कुछ नहीं जानता। शैतान अपने कनिष्ठ को समझाता है कि वह अपने भवविकल को दीनता के झूठे भ्रम में ही रहने दे। उस पर सच्ची दीनता प्रकट न होने दे। इस प्रकार वह स्वयं से बेईमान हो जाएगा। सुन्दर अपने आप को कुरुप समझे और बुद्धिमान अपने को मूर्ख समझे।

ख) घनिष्ठ संबन्ध (12:4–5)

यह पौलुस का सर्वप्रिय उदाहरण है– पद 4–5, "क्योंकि जैसे हमारी एक देह में बहुत से अंग हैं, और सब अंगों का एक ही सा काम नहीं; वैसा ही हम जो बहुत हैं, मसीह में एक देह होकर आपस में एक दूसरे के अंग हैं।"

इससे अधिक उचित उदाहरण दूसरा नहीं है। देह में सब अंग अपना अपना काम सुचारु रूप से करते हैं और एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं। वे सब सिर के अधीन रहते हैं, स्वाधीन नहीं; यह विश्वासी का कलीसिया के साथ संबन्ध है।

II. भाइयों के प्रति विश्वासी का उत्तरदायित्व (12:6–13)

भाइयों के प्रति विश्वासी के उत्तरदायित्व दोगुणा हैं: वरदानों के उपयोग में और अनुग्रह के अभ्यास में उसके उत्तरदायित्व।

क) वरदानों का उपयोग या अभ्यास (12:6–8)

पौलुस के विचार में वरदानों के पीछे परमेश्वर का उद्देश्य है, परमेश्वर के वचन की शिक्षा तथा परमेश्वर की सेवा का विस्तार। सबको वरदान प्राप्त हैं और वह परमेश्वर के राज्य में उनके सदुपयोग के निमित्त परमेश्वर को लेखा देगा। (1) परमेश्वर के वचन की व्याख्या का वरदान –पद 6–8, "जबकि उस अनुग्रह के अनुसार जो हमें दिया गया है, हमें भिन्न–भिन्न वरदान मिले हैं, तो जिसको भविष्यद्वाणी का दान मिला हो, वह विश्वास के परिमाण के अनुसार भविष्यद्वाणी करे; यदि सेवा करने का दान मिला हो, तो सेवा में लगा रहे; यदि कोई सिखानेवाला हो, तो सिखाने में लगा रहे; जो उपदेशक हो, वह उपदेश देने में लगा रहे; दान देनेवाला उदारता से दे; जो अगुआई करे, वह उत्साह से करे; जो दया करे, वह हर्ष से करे।"

यहां 4 मुख्य वरदानों का उल्लेख है। पहला, सत्य की प्रेरणा अर्थात भविष्यद्वाणी। आरंभिक कलीसिया में भविष्यद्वक्ता, प्रेरित, शिक्षक थे न कि भविष्यद्वाणी के स्रोत। पौलुस इस वरदान को अन्य भाषा बोलने के वरदान से अधिक महत्वपूर्ण मानता है। आरंभिक कलीसिया में पवित्र आत्मा की प्रेरणा से परमेश्वर की इच्छा प्रकट करना आवश्यक था। वह प्रेरिताई के वरदान के समान कलीसिया की नींव थी (इफिसियों 2:20) और प्रभु यीशु के भेद का प्रकाशन था (इफिसियों 3:5)। यह मनुष्य के विश्वास के साथ जुड़ा था। आज प्रचार के वरदान में प्रकाशन है न कि भविष्यद्वाणी।

दूसरा वरदान है– सेवा, हर प्रकार की सेवा। यह दैनिक जीवन में परमेश्वर के वचन का व्यवहार है। यह स्वेच्छिक सेवा है। मरकुस 10:45 में प्रभु यीशु कहता है कि वह सेवा करवाने नहीं परन्तु सेवा करने आया है और अनेकों की छुड़ौती के लिए अपना जीवन देने आया है। उसने सेवा में और बलिदान में अपना जीवन दिया। प्रभु यीशु ने दैनिक जीवन में अपनी शिक्षा प्रकट की तो हमें भी ऐसा ही करना आवश्यक है। यह वरदान सब विश्वासियों की पहुंच में है।

तीसरा वरदान, सत्य की शिक्षा। शिक्षक यत्न से बाइबल अध्ययन करे और धर्मशास्त्र की एकता देखें, उसका विश्लेषण एवं विघटन करें। वह अपने प्रयासों द्वारा अन्यों का निर्माण करे।

वरदानों की सूचि में शिक्षा का वरदान सबसे ऊंचा है (1 कुरिन्थियों 12:28)। पवित्र जनों के विकास के लिए शिक्षक बाइबल के सत्य को उजागर करे।

चौथा वरदान, उपदेश देना। उपदेश विवेक और मन को छूते हैं जबकि शिक्षा मस्तिष्क से संबन्धित होती है। उपदेश जीवन से संबन्धित हों न कि मात्र आध्यात्मिक ज्ञान से।

इसके साथ ही परमेश्वर का कार्य फैलाने का वरदान भी है– पद 8, "जो उपदेशक हो, वह उपदेश देने में लगा रहे; दान देनेवाला उदारता से दे; जो अगुआई करे, वह उत्साह से करे; जो दया करे, वह हर्ष से करे।"

परमेश्वर का काम दान देने से आगे बढ़ता है। परन्तु दान देने में स्वार्थ न हो जैसे हनन्याह और सफीरा (प्रेरितों के काम 5)। हमारा स्वभाव होना है कि परमेश्वर का कितना पैसा अपने पास रखें (1 कुरिन्थियों 6:20; 7:23) न कि परमेश्वर को कितना दें। प्रेम का माप है दान!

परमेश्वर का काम हमारी अगुआई से भी बढ़ता है। कुछ लोगों में अगुआई का विशेष वरदान होता है। वे परमेश्वर के काम को अच्छी तरह संभाल सकते हैं। अगुवाई के लिए ज्ञानी अगुवे होना है कि कलीसिया को धर्मशास्त्र और फलोत्पादक मार्ग में ले चलें। 1 इतिहास 12:32 में लिखा है इस्साकार के सदस्य समय को पहचानते थे और इस्राएल को क्या करना है समझा पाते थे। आज कलीसिया को ऐसे अगुवों की आवश्यकता है। अन्ताकिया की कलीसिया में आत्मा की अगुआई और समय का बोध था जब उन्होंने पौलुस और बरनबास को पश्चिमी क्षेत्र में प्रचार करने के लिए उनका हाथ रखकर भेजा (प्रेरितों के काम 13:1–3)।

परमेश्वर का काम हमारे बाहर निकलने से भी बढ़ता है। कुछ लोगों में निराश लोगों में सेवा करने का वरदान है कि उनमें परमेश्वर की दया प्रकट करें। दाऊद ने मपीबोशेत को दया दिखाई थी (2 शमूएल 9)। भले सामरी ने अपदाग्रस्त मनुष्य को संभाला था (लूका 10:30–37)। कुछ लोगों के विचार में यह वरदान विशेष करके उनमें हैं जो रोगियों और कष्टिन लोगों में जाते हैं। यह सेवा मुंह लटकाकर नहीं वरन् हर्ष के साथ करना है। सुलैमान कहता है– नीतिवचन 17:22, "हर्षित मन औषधि है।"

ख) अनुग्रह का अभ्यास (12:9–13)

भाइयों के प्रति हमारे कर्त्तव्य में अनुग्रह का अभ्यास और वरदानों का अभ्यास आता है जो मसीही जीवन के हर एक क्षेत्र को स्पर्श करते हैं (1) हमारा चरित्र–पद 9, "प्रेम निष्कपट हो; बुराई से घृणा करो; भलाई में लगे रहो।"

जे.वी. फिलिप्पस का कहना है, "हम नकली प्रेम न रखें, बुराई से सच्चा संबन्ध विच्छेद करें और भलाई से सच्ची भक्ति रखें। नकली प्रेम परमेश्वर के राज्य में खोटा सिक्का है।" निष्कपट का अर्थ है स्वांगरहित। पुराने समय में एक कलाकार किसी चरित्र का स्वांग रचता था। जब हम में कोई गुण न हो तो हम उसका स्वांग रचते हैं।

सच्चा मसीही चरित्र वास्तविक मसीही प्रेम पर आधारित होता है और बुराई से घृणा और भलाई से प्रेम द्वारा प्रकट होता है। जॉर्ज मूलर इसका एक अति उत्तम उदाहरण है, वह कलीसिया का सदस्य था परन्तु पाप का जीवन जी रहा था और जेल गया। 20 वर्ष की आयु में जब वह जेल से छूटा तब उसका संपर्क मोरावी मिशन से हुआ और उसका मन बदल गया। वह जर्मनी से इंग्लैण्ड आ गया और ब्रिस्टल नगर में प्रसिद्ध अनाथालय बनाए जो उसी के नाम से चलते हैं। उसके अनाथालयों में दस हज़ार अनाथ बच्चे थे। यह आज तक विश्वास का सामर्थ्य और प्रेम के आवेग की गवाही है।

दूसरा उदाहरण हेरल्ड का इतिहास है– लंदन में सेलवेशन आर्मी के आरंभिक दिनों का इतिहास। वह पंचर की कहानी से आरंभ करते हैं। वह उदण्ड एवं अनियन्त्रित व्यक्ति था। उसने कुश्ती लड़ने का व्यवसाय चुना और नशे में धुत रहने के बाद भी हर एक कुश्ती जीती। बहुत पैसा कमाकर उसने व्यापार किया और विवाह करके ठाटबाट से रहने लगा।

कुश्ती के अन्त में उसने दौड़ का धन्धा आरंभ किया जो उसी के नाम पर चलता था। वह धोखाधड़ी करने लगा पर्दाफाश होने पर उसका नाम और प्रसिद्धी समाप्त हो गई। वह कंगाल हो गया और सड़क पर आ गया। उसकी पत्नी उसे छोड़कर चली गई। मयखाने में उसे शराब दे दी जाती थी कि वह पीछा छोड़े। खाने की उसे चिन्ता नहीं थी। कोई उससे कुछ बोलता नहीं था क्योंकि वह हत्या करने पर ऊतारू था। वह साक्षात शैतान था। एक दिन उसके पुत्र ने सेलवेशन आर्मी की वर्दी पहने उसे खोज लिया। उसने उससे मसीह यीशु में विश्वास करने की याचना की। पंचर ठट्ठे से उस पर हंसने लगा।

अगले दिन, रविवार को वह जेल में था। वह अपने जीवन से घृणा करने लगा परन्तु सुधारने से भी घृणा करता था। उसने निश्चय किया कि वह अपनी पत्नी की हत्या करके फांसी पर चढ़ जाएगा। इस विचार से उसकी शराब की लालसा तो चली गई परन्तु दूसरा शैतान आ गया।

जेल से छूटने के बाद उसने अपने मित्रों के साथ खूब शराब पी और किसी से पैसा उधार लेकर एक कसाई का छुरा खरीदा। अपनी पत्नी के घर जाकर उसने मेल का प्रस्ताव रखा और उसे संगीत सुनाने के लिए बाहर ले जाने का प्रस्ताव रखा। मार्ग में एक सेलवेशन आर्मी का धर्मी उन्हें मिला उससे छुटकारा पाने के लिए वह अपनी पत्नी को मयखाने के द्वार पर खड़ा करके भीतर गया। वहां बैठे–बैठे पंचर को दर्शन हुआ। वह कांप उठा। उसने देखा कि उसने अपनी पत्नी की हत्या कर दी है और वह फांसी पर लटकाया गया। संसार उसके बेटे पर उंगली उठा रहा है जिसे वह बहुत प्रेम करता था। लज्जा और भय के कारण वह नशे में ही सेलवेशन आर्मी के कार्यालय पहुंचा। उसकी पत्नी भी उसके साथ थी। दोनों ने पश्चात्तापियों की बेंच पर घुटने टेककर प्रभु को ग्रहण किया।

उसके अतीत का अन्त हुआ और वह एक जगमगाता विश्वासी तथा अपने साथियों में स्पष्ट गवाह बना। उसने सेलवेशन आर्मी की सेवा पकड़ ली। उसका परिवार हरा भरा हो गया। उसने लंदन की झुग्गियों में लोगों को मसीह के लिए जीतना आरंभ कर दिया। वेगबी कहता है कि उसकी पत्नी की सहानुभूति की कमी के कारण परिवार में निराशा और असुविधा उत्पन्न होने लगी। बच्चों ने भी अपने पिता के विश्वास की चिन्ता नहीं की। उसे अविश्वासियों में जीविकोपार्जन करना पड़ा। वे उसे सहानुभूति नहीं दिखाते थे। इन सब बातों के उपरान्त पंचर अपने पड़ोस में संभवतः दुखियों और टूटे हुओं के लिए व्यक्तिगत विश्वास की सबसे बड़ी शक्ति।

"प्रेम निष्कपट हो, बुराई से घृणा करो, भलाई में लगे रहो।" अनुग्रह का अभ्यास विश्वासी के चरित्र को बदल देता है।

नये नियम में कहीं भी कलीसिया को कष्टों से मुक्ति की प्रतिज्ञा नहीं दी गई है, इसके विपरीत ऐसी मुक्ति असामान्य है (यूहन्ना 16:33; प्रेरितों के काम 14:22; 1 थिस्सलुनीकियों 3:4)। कलीसिया का जन्म ही क्लेश में हुआ था और 300 वर्ष वह आग और बाढ़ से पीड़ित रही और शहीदों के खून से उसके अध्याय लिखे गए। आज भी वह क्लेश में है। कुछ का कहना है कि इस पीढ़ी में अन्य सब पीढ़ियों से अधिक

विश्वासी शहीद हुए हैं। कोरिया, चीन, रुस और अफ्रीका के कुछ राष्ट्रों का इतिहास पढ़कर इस सत्य का ज्ञान होता है। अतः यह प्रेरित का अत्यधिक स्पष्ट एवं प्रासंगिक वचन है, "क्लेश में स्थिर रहो।"

विश्वासी प्रार्थना में तत्पर रहता है अर्थात वह प्रार्थना में यत्नशील रहता है और क्लेश से बढ़कर उसकी प्रार्थना को वास्तविक बनानेवाली बात दूसरी नहीं है। क्लेश उसके विश्वास को एक पूर्णरूपेण नया परिदृश्य प्रदान करते हैं।

अन्त में अनुग्रह का अभ्यास (5) हमारी चिन्ता को प्रभावित करता है– पद 13, "पवित्र लोगों को जो कुछ आवश्यक हो, उसमें उनकी सहायता करो।" सत्कार का अवसर खोजो न कि उनके घर आने की प्रतीक्षा करो। सांसारिक आशीषों से दिल खोलकर सेवा करना सच्ची शिष्यता की पहचान है।

मन्दिर में विधवा ने दो दमड़ी दान दिया जिसे प्रभु यीशु ने अपने शिष्यों के सामने सराहा क्योंकि उसने एक दमड़ी परमेश्वर की पेटी में और एक दमड़ी गरीबों की पेटी में डाली थी।

उत्पत्ति 18 में अब्राहम आनेजानेवालों की सेवा करता था और अनजाने में स्वर्गदूतों की सेवा की (इब्रानियों 13:2)। प्रभु धर्मियों की प्रशंसा करेगा–मत्ती 25:35–40, "क्योंकि मैं भूखा था, और तुमने मुझे खाने को दिया; मैं प्यासा था, और तुमने मुझे पानी पिलाया; मैं परदेशी था, और तुम ने मुझे अपने घर में ठहराया; मैं नंगा था, और तुमने मुझे कपड़े पहिनाए; मैं बीमार था, और तुमने मेरी सुधि ली, मैं बन्दीगृह में था, और तुम मुझसे मिलने आए।' "तब धर्मी उसको उत्तर देंगे, 'हे प्रभु, हम ने कब तुझे भूखा देखा और खिलाया? या प्यासा देखा और पानी पिलाया? हमने कब तुझे परदेशी देखा और अपने घर में ठहराया? या नंगा देखा और कपड़े पहिनाए? हमने कब तुझे बीमार या बन्दीगृह में देखा और तुझसे मिलने आए?' तब राजा उन्हें उत्तर देगा, 'मैं तुम से सच कहता हूँ कि तुमने जो मेरे इन छोटे से छोटे भाइयों में से किसी एक के साथ किया, वह मेरे ही साथ किया।'"

परमेश्वर के प्रतिमान पर चलनेवाला दानी कभी हानि नहीं उठाता है। एक किसान जो बहुत समृद्ध था और प्रभु की सेवा में खुले हाथ दान देता था, वह कहता था, "मैं परमेश्वर के भण्डार में बेलचे से डालता रहा और परमेश्वर मेरे भण्डार में बेलचे से डालता रहा परन्तु परमेश्वर का बेलचा मेरे बेलचे से बहुत बड़ा था।"

पौलुस एक विश्वासी के मातृत्व को प्रकट करता हैः वह अपने अपने भाइयों से प्रेम करता है और अपने भाइयों के प्रति उत्तरदायित्व निभाता है। ऐसा करने में वह अनुग्रह और वरदान दोनों का उपयोग करता है और इसका परिणाम यह होता है कि वह अधिकाधिक अपने प्रभु के स्वरूप में ढलता जाता है।

विश्वासी का सामाजिक जीवन

12:14–21

अविश्वासियों के साथ व्यवहार में हमें

I. उनकी मनोवृति के अनुसार हों (12:14–15)

क) विरोध से मुक्त (12:14)
ख) अवसर की खोज (12:15)

II. अपने शिष्टाचार का ध्यान रखें (12:16)

क) निष्पक्ष रहें
ख) घमण्ड न करें

III. निम्न नियमों का पालन करें (12:17–21)

क) धीरज धरें (12:17)
ख) अनुपम जीवन जीएं (12:17)
ग) शान्ति से जीएं (12:18)
घ) सन्देहरहित जीवन जीएं (12:19–21)
1. बदला लेना परमेश्वर का काम है।
2. बदला लेना परमेश्वर का विचार है।

मसीही जीवन के नियम विश्वासी के आत्मिक जीवन से ही संबन्धित नहीं हैं। वे उसके सामाजिक जीवन से भी संबन्धित हैं। विश्वासी का संबन्ध कलीसिया के साथ–साथ संसार से भी हैं। अविश्वासियों के साथ हमारे संबन्धों के विषय में पौलुस तीन बातें बताता है। हमें अविश्वासियों के साथ सहानुभूति और सद्भाव दर्शाना है। हमें अपने स्वभाव पर बहुत ध्यान देना है। उनके समक्ष हमारा जीवन अनिन्दनीय और आदर्श हो।

I. उनकी मनोवृति के अनुसार हों (12:14–15)

अनजाने में कहें या जानबूझकर कहें विश्वासी कुछ ऐसा दिखावा करते हैं जो उनके उद्धाररहित पड़ोसियों के लिए आपत्तिजनक होता है। विश्वासी को सावधान रहना है कि प्रभु यीशु के साथ पूर्ण निष्ठा निभाकर वह ऐसा कुछ न करे कि उसके अविश्वासी साथी उस पर सन्देह करें। हमें उनसे दूर नहीं रहना है परन्तु उनके साथ मुक्तिदायक संबन्ध बनाने हैं। इस विषय पॉल लिटल की टिप्पणी श्रेष्ठ है।

"सिमपल साइमन को देख हम विस्मित होते हैं वह अपनी बाल्टी लेकर आता है और मछली पकड़ने के लिए कांटा डालता है परन्तु वह दुःखी है क्योंकि उसने एक भी मछली नहीं पकड़ी। हम सोचते हैं कि वह कैसा मूर्ख है। क्या मछली कूदकर उसकी बाल्टी में आ जाएगी। उसे वहां जाना है जहां मछलियां हैं। आप प्रचार में क्या करते हैं? हम भी तो बाल्टी रखकर मछलियों को उसमें कूदने का निमंत्रण देते हैं। जब वे समूह में हमारे पास से निकल जाती हैं तब हम दुःखी होते हैं।" हेरल्ड वाइलडिश ने कहा था, "पवित्र आत्मा पवित्र जनों या कुर्सियों को नहीं बचाता है। अविश्वासियों का होना आवश्यक है।"

हम सभाओं में लोगों को एकत्र करते हैं परन्तु प्रभु यीशु ने कहा कि हमें मनुष्यों में जाना है इसमें हमें यह जानना आवश्यक है कि संसार के न होने का अर्थ संसार से संबन्ध विच्छेद करना नहीं है। मेरे पास लोग आकर प्रशंसा पाना चाहते हैं कि उनका एक भी अविश्वासी मित्र नहीं है। मैं आश्चर्य से सिर हिलाता हूं कि वे नये नियम की शिक्षा से कैसे चूक गए।

दूसरी बात, कभी कभी एक अविश्वासी बड़े विश्वास और उदारता से कहता है, "मेरे साथ यह काम करवा लो" या "यह ले लो।" हम तुरन्त कहते हैं, "नहीं, धन्यवाद! मैं ऐसा काम नहीं करता। मैं विश्वासी हूं। आप लोहे के परदे के गिरने की सी आवाज़ सुनते हैं। लोग सोचते हैं कि वह बहुत बड़ी गवाही थी। परन्तु मेरे विचार में हमने दो गंभीर चूक कीं। एक, हमने उसे अन्यजाति बनाकर उसको दोषी ठहराया जिसे वह

समझ ही नहीं पाया। दूसरी चूक हमने प्रभु यीशु के सुसमाचार को भ्रष्ट कर दिया क्योंकि हमने उस पर यह प्रकट किया कि विश्वासी के लिए उसके द्वारा प्रस्ताविक कार्य नहीं करना अनुवांशिक है..."

अविश्वासियों में हमें उन बातों को देखना है जिनका हम वास्तव में इनकार कर सकते हैं। यदि हम सतर्क रहें तो हम अवश्य देख पाएंगे। यदि कोई आपको निमंत्रण दे तो उससे कहें, "नहीं, धन्यवाद परन्तु आप ऐसा कब करेंगे।" आपको उसका वैकल्पिक सुझाव देना है जिससे आप उसे या उसकी मित्रता को न त्यागें। हमें इस संबन्ध में विवाद भी नहीं करना है। यदि आप किसी विश्वासी को शतरंज खेलने के लिए आमंत्रित करते हैं तो वह नहीं कहता, "मैं मसीही जन नहीं हूं। मैं शतरंज नहीं खेलता।" वह कहता है, "मुझे शतरंज अच्छा नहीं लगता परन्तु जब आप केरम खेलेंगे तब मैं अवश्य आऊंगा।"

अतः हमें उनकी मनोवृति समझना है। इसमें दो चुनौतियां हैंः विरोध से मुक्ति पाना और अवसर खोजना।

क) विरोध से मुक्ति पाने की चुनौती (12:14)

प्रभु यीशु के पर्वतीय उपदेश के अनेक उदार विचार इस पत्री में दोहराए गए हैं। पद 14, "अपने सतानेवालों को आशीष दो, आशीष दो, स्राप न दो।" अर्थात सतानेवालों की प्रशंसा करो। अर्थात उसके विषय अच्छी अच्छी बातें करो। अरबों में एक प्रथा है कि वे सिर छूते हैं, हाथ छूते हैं और दिल का हिस्सा छूते हैं जब वे बधाई देते हैं जिसका अर्थ है, "मैं आपके लिए ऊंचे विचार रखता हूं मेरा हृदय आपके लिए धड़कता है।" हमारे विरोधियों के प्रति हमारा स्वभाव ऐसा ही होना चाहिए। घृणा को प्रेम में बदलना है। कुछ लोगों का कहना है कि मसीही धर्मी विफल है परन्तु सच तो यह है कि उसका अभ्यास ही नहीं किया जाता है।

डी.एल. मूडी अपने उपदेश में एक बार यीशु का चित्रण प्रस्तुत कर रहे थे। यीशु ने पतरस से कहा, "मेरी पसली में भाला मारनेवाले को खोज कर ला और उससे कह कि मेरे दिल तक पहुंचने का इससे भी अधिक आसान तरीका है। जिसने मुझे कांटों का ताज पहनाया था उसे भी खोज और वह कि मैं उसे जीवन का ताज दूंगा।" यह सच्चे मसीही स्वभाव को दर्शाने का एक उत्तम तरीका है। क्या यीशु ने जो शिक्षा दी वह आचरण से प्रकट नहीं की थी? उसने क्रूस पर अपने सतानेवालों के लिए प्रार्थना की। उसने साथ लटके अपराधी के लिए स्वर्ग का द्वार खोल दिया। इसी बात से क्रूसीकरण का उत्तरदायी सूबेदार प्रभु

के अधीन हुआ था। उसने कहा, "यह निश्चय ही परमेश्वर का पुत्र है" (मत्ती 27:54)। हम देखते हैं कि विरोध करने के स्वभाव से मुक्ति पाने का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण गुलगुता पर है। सतानेवालों को धन्य कहने की प्रभु यीशु की नीति के कारण यहूदी और अन्यजाति दोनों ही ने उसके क्रूस के प्रथम फलों को धन्य कहा।

क्या ऐसा जीवन हमारे लिए संभव है? कलीसिया का इतिहास ऐसे उदाहरणों से पूर्ण है। अदोनीराम जडसन् को परमेश्वर ने नास्तिक से अपनी सेवा में बर्मा बुलाया। उसकी पत्नी और उसे पहला विश्वासी बनाने में घोर संकट का समाना करना पड़ा था। एक बार तो जडसन् को दहकते रेगिस्तान में कशाघात सहने पड़े थे कि वह सूखकर कंकाल हो गया था और परमेश्वर से मौत मांग रहा था। फिर वह दो वर्ष कठोर कारावास में था जहां उसके साथ निर्दयता का व्यवहार किया गया था। उसी बीच उसके बच्चे का जन्म हुआ और उसका घर जला दिया गया। इसके साथ ही उसके बड़े बच्चे को चेचक निकली। उसकी पत्नी अत्यधिक निराश हो गई थी। जडसन् को फांसी का सज़ा सुनाई गई परन्तु उसे वहां से निकाल लिया गया और उसकी पत्नी को उसका पता नहीं चला। जब वे फिर मिले तब तक जडसन् का शरीर कष्टों के कारण विकृत हो चुका था और उसकी पत्नी को गंजा करके टाट पहनाया गया था। वह अनाथ बना दी गई थी।

परन्तु जडसन् ने अपना लक्ष्य नहीं त्यागा– अपने बैरी से प्रेम कर। उनके कष्टों में कलवरी के प्रभु यीशु का अद्वैत प्रेम उन्हें संभाले हुए था। उसके दो लक्ष्य थे। एक, बाइबल का अनुवाद वहां की स्थानीय भाषा में किया जाए और दूसरा कम से कम सौ विश्वासियों की कलीसिया स्थापित की जाए और उसने दोनों लक्ष्य प्राप्त किए। "सतानेवालों को आशीष दो, आशीष दो स्राप न दो।" इस सिद्धान्त के द्वारा उसने विरोध का सामना किया और विजयी से बढ़कर निकला।

ख) अवसर की खोज की चुनौती (12:15)

हम मनुष्यों के साथ अनेक सामान्य अनुभव बांटते हैं। जिनके द्वारा हम अविश्वासियों के मन में, जीवन में और घरों में पहुंचने का मार्ग तैयार कर सकते हैं। पद 15, "आनन्द करनेवालों के साथ आनन्द करो और रोनेवालों के साथ रोओ।" यूहन्ना के अनुसार प्रभु यीशु का पहला चमत्कार विवाह के उत्सव में था और अन्तिम किसी की मृत्यु पर अर्थात आनन्द और दुःख के समय। वह आनन्द मनाने वालों के साथ आनन्द मनाता था और रोनेवालों के साथ रोता था।

ताश का एक खेल ऐसा है जिसमें जीतने के लिए आपको सब खोना पड़ता है। जीवन भी ऐसा ही खेल है। इस खेल का सिद्धान्त है कि आपको अपने साथ के साथ जोड़ बनाना है। यदि उसके पास छः हैं तो आपको भी छः बनाना है। दूसरा सिद्धान्त है कि आपके अपने ताश के पत्ते खाली करने हैं। इस खेल से मैं अपने जीवन को लाभ की अपेक्षा हानि से आंकना सीखा हूं।

पौलुस तो इस खेल में दक्ष था। वह जानता था कि खाली होने से विजय प्राप्त होती है। क्या उससे अधिक कोई बुद्धिमान खिलाड़ी हुआ है? पौलुस कहता है कि "दासों को प्रभु में लाने के लिए वह दास बना। यहूदियों को प्रभु में लाने के लिए वह यहूदी बना। दुर्बल के साथ दुर्बल बना कि दुर्बलों को जीत सकूं। वह सब के लिए सब कुछ बना कि किसी प्रकार कुछ को मसीह में जीत पाऊं।" यह सबसे बड़ा खेल था।

II. अपने शिष्टाचार पर ध्यान दें (12:16)

हमें अविश्वासियों के साथ सहानुभूति, सदाचार और मित्रता ही नहीं दर्शाना है, हमें पक्षपात और घमण्ड से भी दूर रहना है।

क) पक्षपात न करें (12:16)

"आपस में एक सा मन रखो।" यूहन्ना 4 में प्रभु यीशु ने सामरी स्त्री के साथ दया और सदाचार का प्रदर्शन किया और यूहन्ना 3 में नीकुदेमुस जैसे ऊंचे कुल के मनुष्य के साथ भी व्यवहार किया। उसने साथ लटके अपराधी को वही दया दिखाई जो अपनी माता को दिखाई। वह यहूदा के साथ वैसा ही धीरजवन्त था जैसा यूहन्ना के साथ।

ख) घमण्ड न करें (12:16)

"अभिमानी न हो, परन्तु दीनों के साथ संगति रखो; अपनी दृष्टि में बुद्धिमान न हो।" 3 यूहन्ना में दियुत्रिफेस का उल्लेख है कि वह कलीसिया में बड़ा बनना चाहता था। यह स्वभाव मसीह समाज में पराया है। "संगति" अर्थात उनमें घुल–मिल जाओ। यह शब्द मूल भाषा में केवल गलातियों 2:13 और 2 पतरस

3:17 में ही आता है। अर्थ चाहे जो भी हो वह घमण्ड के विपरीत स्वभाव के पक्ष में कह रहा है। विश्वासियों में भी मान मर्यादा की बात आती है। दीन और अकिंचनों के साथ कोई व्यवहार करना नहीं चाहता है।

यीशु कहता है– मत्ती 11:29, "मुझसे सीखो मैं मन में दीन और नम्र हूं।" यीशु के विषय कहा गया है कि उसका जीवन और उसकी मृत्यु मनुष्य के घमण्ड के हर एक रूप के लिए लज्जा का कारण है।

जन्म और पद का घमण्ड–मत्ती 13:55– क्या यह बढ़ई का पुत्र नहीं? धन का घमण्ड– लूका 9:58, मनुष्य के पुत्र के पास सिर छुपाने की जगह भी नहीं है। मान–सम्मान का घमण्ड– क्या नासरत से कोई अच्छी वस्तु निकली है? (यूहन्ना 1:46) रूपरंग का घमण्ड– यशायाह 53:2, न उसका रूप ही ऐसा दिखाई पड़ा कि हम उसको चाहते। पद प्रतिष्ठा का घमण्ड– लूका 7:34, चुंगी लेनेवाले और पापियों का मित्र; ज्ञान का घमण्ड– यूहन्ना 7:15, इसे बिन पढ़े विद्या कैसे आ गई? बड़प्पन का घमण्ड– लूका 22:27, मैं तुम्हारे बीच सेवक के समान हूं; सफलता का घमण्ड–यशायाह 53:3, वह तुच्छ जाना जाता और मनुष्यों का त्यागा हुआ था; योग्यता का घमण्ड– यूहन्ना 5:30, मैं अपने आप से कुछ नहीं करता; स्वेच्छाचार का घमण्ड– यूहन्ना 5:30, मैं अपनी नहीं पिता की इच्छा पूरी करने आया हूं; बुद्धिमानी का घमण्ड– यूहन्ना 8:28, "जैसा पिता ने सिखाया है वैसा ही मैं कहता हूं।"

अतः विश्वासियों को घमण्ड का त्याग करना है।

"अपनी दृष्टि में बुद्धिमान न बनो।" यह अभिव्यक्ति धर्मशास्त्र में सात बार आई है– रोमियों 11:25; 12:16; नीतिवचन 3:7; 26:5, 12, 16; 28:11। सुलैमान कहता है कि घमण्डी से अधिक आशा मूर्ख से है। ऐसा मनुष्य आलसी है। यह धनवास का फंदा है। हरी मक्का खड़ी रहती है, सूखी मक्का झुक जाती है।

III. इन तरीकों को पहचानो (12:17–21)

विश्वासी को पर्वतीय उपदेश पर ध्यान देना है। पौलुस चार बातों पर प्रकाश डालता है।

क) धीरज धरें (12:17)

"बुराई के बदले किसी से बुराई न करें।" इसका अर्थ है कि परमेश्वर की सन्तान के साथ बुरा किया जाएगा। स्वाभाविक है कि मनुष्य बुरे के साथ बुरा करेगा। दूसरा गाल फेर देना और बुराई के बदले भलाई करना अलौकिक व्यवहार है। यूसुफ ने अपने भाइयों के साथ भलाई की थी– उन्हें भोजन, सुरक्षा और मान प्रदान किया। दाऊद ने शाऊल के घराने का भला किया था। शाऊल जो उसके खून का प्यासा था उस पर दाऊद ने अवसर पाकर भी हाथ नहीं उठाया। उसने राजा बनने के बाद शाऊल के घराने को खोजा कि परमेश्वर की दया दर्शाए। पौलुस ने भी अपने लोगों के साथ ऐसा ही व्यवहार किया था। उन्होंने उसे मार डालना चाहा, उसका प्रचार भंग करना चाहा, कलीसिया को उसके विरुद्ध भड़काया, परन्तु पौलुस ने उनके उद्धार के लिए ही प्रार्थना की।

ख) अनुपम जीवन जीएं (12:17)

"जो बातें सब लोगों के निकट भली हैं, उनकी चिन्ता किया करो।" विश्वासी का जीवन निन्दा के परे होना है। उसे विश्वासयोग्य होना है, उसे वचन का पक्का होना है चाहे कुछ भी हो जाए। उसकी कथनी और करनी में अन्तर न हो।

पौलुस पैसों के संबन्ध में अन्यों को याद रखता था कि उस पर हेरफेर का दोष नहीं लगाया जाए। (1 कुरिन्थियों 16:3–4)। वह अपने हाथों से परिश्रम करता था (1 कुरिन्थियों 4:11–12; 9:9–12, 18–19)। वह प्रचारक दल के अन्य सदस्यों की भी सहायता करता था (प्रेरितों के काम 20:34)। कलीसिया उसे अवैध लाभांशी न समझे (2 कुरिन्थियों 12:14–18)। वह दान पर दबाव नहीं डालता था (1 कुरिन्थियों 16:1–2)। वह अपनी उपस्थिति के द्वारा भी दबाव नहीं डालना चाहता था। उसने कलीसिया को चुनौती दी कि उसमें एक भी गलती निकालें (प्रेरितों के काम 20:33–35)। उसने अपने व्यवहार का सार्वजनिक लेखा देने का प्रस्ताव रखा। उसने अपनी मुक्ति के लिए जेल अधिकारियों को रिश्वत नहीं दी (प्रेरितों के काम 24:26)। उसका जीवन निर्दोष था।

ग) शान्ति से जीएं (12:18)

"भरसक सब मनुष्यों के साथ मेल–मिलाप रखो।" पौलुस जानता था कि सुसमाचार का विरोध किया जाएगा। उसे भी शान्ति भंग करनेवाला कहा गया था। लूका द्वारा प्रेरितों के काम की पुस्तक के लिखने का उद्देश्य माना जाता है कि उसे कैसर की दोहाई देने के द्वारा निर्दोष सिद्ध किया जाए। लूका ने

विश्वासियों के नियम पालक चरित्र को प्रकट करने में परिश्रम किया था और दिखाया कि रोमी अधिकारी पौलुस जैसे अभियोग को अनदेखा करके अपराधी को मुक्त कर देते थे। मनुष्यों के साथ शान्ति से रहना संभव नहीं है परन्तु विश्वासियों को अपनी ओर से शान्ति भंग नहीं करना चाहिए।

घ) सन्देहरहित जीवन जीएं (12:19–21)

विरोध, घृणा और सताव का बदला भलाई से दें। विश्वासी अन्याय का बदला कभी न लें। ध्यान रखें कि (1) बदला लेना परमेश्वर का काम है। "हे प्रियो, बदला न लेना, परन्तु परमेश्वर के क्रोध को अवसर दो, क्योंकि लिखा है, "बदला लेना मेरा काम है, प्रभु कहता है 'मैं ही बदला दूंगा।'"

जेफरी फरनोल इस विषय पर अपनी रोमांचक कहानी लिखता है। मार्टिन कोनिस्बी किसी जायदाद का वारिस था। सर रिचर्ड ब्रेनडन ने उसके पिता की हत्या कर दी और मार्टिन को स्पेन के जहाज़ में दास होने को बेच दिया। वह पुकार कर प्रार्थना करता था कि कोड़ों की मार पतवार चलाने का कष्ट उसमें बदले की आग भड़का रहा है।

मार्टिन एक दिन भाग गया। उसका दुश्मन स्पेन के बन्दीगृह में था। बदला लेने के लिए वह भी बन्दी होकर भीतर गया। वहां की गंदी हवा से उसका दम घुट रहा था कि उसने एक बूढ़े को दुर्बल घुटनों पर झुके देखा। सतानेवालों ने उसे बहुत कष्ट दिया था। उसकी देह पर अनेक घाव थे गर्म लोहे से जलाए जाने के घाव भी थे और उसके सूजे हुए घुटने उसके कष्टों की गाथा सुनाते थे। वह तो अपना बदला लेने आया था परन्तु यहां वह एक टूटे हुए मनुष्य को देखता है जो रिचर्ड ब्रेनडन था।

लेखक वर्णन करता है कि मार्टिन ने जेल से भागने में उसकी सहायता की और वह अपने बैरी से अधिकाधिक प्रेम करने लगा और परिणामस्वरूप ब्रेनडन भी उसे, अपने शत्रु को पुत्र के समान प्रेम करने लगा। ब्रेनडन की मृत्यु पर मार्टिन बहुत रोया। यह कहानी परमेश्वर के बदला लेने पर आधारित है। बदला लेनेवाले स्वयं दुःख उठाकर देखते हैं कि बदला लेना एक कड़वा फल है। परमेश्वर बदला लेता है तब उसमें सिद्ध एकता और न्याय होता है न कि मनुष्य के समान मन की कड़वाहट।

विश्वासी को यही नहीं समझना है कि बदला लेना परमेश्वर का काम है, उसे यह भी देखना है कि बदला लेने का विचार परमेश्वर का है। (2)– पद 20–21, "परन्तु यदि तेरा बैरी भूखा हो तो उसे खाना

खिला, यदि प्यासा हो तो उसे पानी पिला; क्योंकि ऐसा करने से तू उसके सिर पर आग के अंगारों का ढेर लगाएगा।" बुराई से न हारो, परन्तु भलाई से बुराई को जीत लो।"

इसी मार्ग से होकर परमेश्वर कलवरी पहुंचा। क्रूस परमेश्वर के विरुद्ध मनुष्य की विषाक्त कड़वाहट को प्रकट करता है। दूसरी ओर क्रूस मनुष्य के लिए परमेश्वर के महान प्रेम को भी प्रकट करता है। मनुष्य के भाले ही से उसके उद्धार का लहू बहा था।

विश्वासी का सांसारिक जीवन

विश्वासी को स्वीकार करना है

I. देश के अगुओं के उत्तरदायित्व (13:1–6)

1. परमेश्वर के प्रति उनका उत्तरदायित्व (13:1–2)

क) परमेश्वर सरकार चुनता है (13:1)

ख) परमेश्वर सरकार को मान्यता देता है (13:2)

II. उनका सरकारी उत्तरदायित्व (13:3–6)

1. वे राष्ट्र की सुरक्षा के उत्तरदायी हैं (13:3–5)

क) समाज की रक्षा के (13:3–4)

i. समाज के अपराधियों का विरोध करके (13:3)

ii. समाज के विशिष्ट जनों को मान देकर (13:3–4)

ख) अपराधियों को दण्ड देकर (13:4–5)

2. वे राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान खोजने के उत्तरदायी हैं (13:6)

III. देश के अगुओं के अधिकार (13:7)

क) वित्तिय सहयोग का अधिकार

i. हमारे कर

ii. हमारी चुंगी

ख) हमारे नैतिक सहयोग का अधिकार

i. भय– बुरे शासकों का

ii. सम्मान– अच्छे शासकों का

मसीही जीवन के नियम विश्वासी के आत्मिक और सामाजिक संबन्धों को नियंत्रित करते हैं। अब पौलुस यह बताता है कि इन नियमों पर उसका सांसारिक जीवन भी चलता है। सरकार के साथ विश्वासी का आचरण उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कलीसिया के अगुओं के साथ। इस भाग में पौलुस देश के अगुओं की ओर ध्यान आकर्षित करवाता है और इस परिक्षेत्र में विश्वासी के आचरण पर चर्चा करता है।

I. देश के अगुओं के उत्तरदायित्व (13:1–6)

देश के अगुओं का उत्तरदायित्व परमेश्वर और मनुष्य दोनों के प्रति है। विश्वासी का उत्तरदायित्व है कि वह "कैसर का कैसर को दो।" पौलुस कैसर के व्यवहार पर भी बल देता है। ऐसे बहुत कम अवसर आते हैं जब विश्वासी को सरकारी नियम का पालन करने से पीछे हटना पड़ता है (प्रेरितों के काम 5:29)। बाइबल नागरिक नियमों की अवज्ञा का विरोध करती है और परमेश्वर शासकीय अधिकारियों का पक्ष लेता है।

क) शासकों का परमेश्वर के प्रति उत्तरदायित्व (13:1–2)

मानवीय सरकार को परमेश्वर से अधिकार प्राप्त है। (1) वह परमेश्वर द्वारा नियुक्त की गई है–पद 1– "हर एक व्यक्ति शासकीय अधिकारियों के अधीन रहे क्योंकि कोई अधिकार ऐसा नहीं जो परमेश्वर की ओर से न हो।" उत्पत्ति 9:6 में परमेश्वर ने मूसा को तलवार देकर कहा, "मनुष्य का लहू बहाने वाले का लहू मनुष्य द्वारा बहाया जाए।" मनुष्य का सबसे बड़ा काम था न्यायिक हत्या शेष सब इसी के अधीन था।

मानवीय सरकार भी मनुष्य के अन्य सब उत्तरदायित्वों के समान विफल रही। न्यायी की तलवार विजेता की तलवार बन गई। संविधान और मनुष्य की व्यवस्था का अधिकार पतित मानवजाति के लिए नशा हो गया। बाबुल का गुम्मट परमेश्वर के सिंहासन के संयुक्त विरोध का प्रमाण है। अब तक परमेश्वर के विद्रोह व्यक्तिगत ही था। संसार का सर्वप्रथम संयुक्त राष्ट्र संघ जिसका मुख्यालय बेबीलोन में है वह अन्तिम संघ का प्रतीक है। उत्पत्ति 11–12 प्रकाशितवाक्य 13, 17–18 का पूर्व चित्रण है।

सरकारी अधिकार के दुरुपयोग के उपरान्त भी मानवीय सरकार परमेश्वर की व्यवस्था है। "अधिकार... परमेश्वर की ओर से है..." तथा "अधिकारी ... परमेश्वर के ठहराए हुए हैं।" दुराचारी शासकों को भी परमेश्वर अपने किसी उद्देश्य निमित्त अनुमति देता है। एक उचित कहवत है, "मनुष्य को अपने योग्य ही सरकार मिलती है।" सरकार अच्छी हो या बुरी परमेश्वर उसके द्वारा अपनी योजना पूरी करता है। धागा उलझा हो या गलत परमेश्वर का हाथ सदा सिद्ध काम करता है। और शैतान की शक्तियां और मनुष्य के काम परमेश्वर द्वारा रद्द किए जाते हैं। वह सर्वशक्तिमान एवं सर्वज्ञानी है।

दानिय्येल की पुस्तक की सबसे बड़ी शिक्षा यह है कि परमेश्वर इतिहास को अपने हाथों में रखता है। दानिय्येल 4:26, में राजा नबूकदनेस्सर ने सीखा कि स्वर्ग से शासन चलता है।

उसने अपने भयानक अनुभव के बाद सरकारी अध्यादेश निकाला– दानिय्येल 4:34–35, "उन दिनों के बीतने पर, मुझ नबूकदनेस्सर ने अपनी आंखें स्वर्ग की ओर उठाईं, और मेरी बुद्धि फिर ज्यों की त्यों हो गई; तब मैं ने परमप्रधान को धन्य कहा, और जो सदा जीवित है उसकी स्तुति और महिमा यह कहकर करने लगाः उसकी प्रभुता सदा की है, और उसका राज्य पीढ़ी तक बना रहनेवाला है। पृथ्वी के सब रहनेवाले उसके सामने तुच्छ गिने जाते हैं, और वह स्वर्ग की सेना और पृथ्वी के रहनेवालों के बीच अपनी ही इच्छा के अनुसार काम करता है; और कोई उसको रोककर उस से नहीं कह सकता है, "तू ने यह क्या किया है?"

पौलुस दर्शाता है कि सरकार (2) परमेश्वर से मान्यता प्राप्त है– पद 2, "इसलिये जो कोई अधिकार का विरोध करता है, वह परमेश्वर की विधि का सामना करता है, और सामना करनेवाले दण्ड पाएंगे।"

अधिकारियों की अवज्ञा परमेश्वर की अवज्ञा है और परमेश्वर दण्ड देगा। यदि नियम में अन्याय है तो उनको तोड़ने की अपेक्षा वैधानिक रूप से उसका पुनरावलोकन किया जाए। इसके साथ ही अधिकारियों

को स्वीकार करना है कि उनका अधिकार परमेश्वर की ओर से है। उन्हें परमेश्वर के शासन को पृथ्वी पर लाना है। यही कारण है कि परमेश्वर ने पुराने नियम में राजा में चरवाहे की मनोवृति देखी थी।

ख) शासकों का उत्तरदायित्व (13:3–6)

शासकों के दो उत्तरदायित्व हैं– व्यवस्था विरोधियों से देश की रक्षा करें और देश को आर्थिक स्थिरता प्रदान करें। (1) राष्ट्रीय सुरक्षा का उत्तदायित्व। इसका अर्थ है, समाज की सुरक्षा। इसकी दो विधियां हैं– सकारात्मक और नकारात्मक। नकारात्मक में अपराधियों का विरोध करना होता है। सकारात्मक में समाज के विवेकशील सदस्यों को प्रतिफल देना। पौलुस कहता है– पद 3, "हाकिम अच्छे काम के नहीं, बुरे काम के लिए डर का कारण है; अतः यदि तू हाकिम से निडर रहना चाहता है तो अच्छे काम कर।"

बाइबल में कहा गया है कि अन्त के दिनों में अराजकता फैलेगी। यीशु ने कहा है– मत्ती 24:12, अपराध बढ़ेंगे। डा. विलबर एम. स्मिथ कहते हैं कि नये निमय में चार यूनानी शब्द अराजकता को प्रकट करते हैं। उनके अध्ययन से हमें बोध होगा कि समाज की रक्षक सरकार होना कैसा आवश्यक है।

I. गलातियों 5:19–21 में "लीलाक्रीड़ा" जिसकी व्याख्या आर्चबिशप ट्रेंच ने की है– "नशे में मग्न प्रमोदियों का समूह सिर पर हार और हाथों में मशाल लिए हुए खून खराबा करने सड़कों पर हर एक मिलनेवाले पर क्रोध के साथ चिल्लाता हुआ गीत गाता जाता है।" कैसा सजीव चित्रण है। परन्तु पौलुस इस शब्द को अनुचित आमोद–प्रमोद के संबन्ध में काम में लेता है। मनुष्य में यह प्रवृति है।

अराजकता का दूसरा शब्द जिसका उल्लेख डा. स्मिथ करते हैं वह है, घृणा या बैरभाव। आज भी इसकी कमी नहीं है।

तीसरे शब्द का अर्थ है, निरंकुश जीवन, जैसा लूका 15 में उड़ाऊ पुत्र का जीवन था– अशिष्ट एवं अविवेकी।

चौथे शब्द का अर्थ है नियम की अवज्ञा करना। रोमियों 13 में पौलुस इसी अभिप्राय से इस शब्द को काम में लेता है। यही वह शब्द है जिसका उपयोग मत्ती 24:12 में प्रभु यीशु ने किया था "अधर्म का बढ़ना।"

आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नैतिकता का पतन देखा जा सकता है। नियमों का सम्मान घटता जा रहा है। बाइबल को अपने जीवन का आधार बनाने से चूकनेवाले अपराधों की बढ़ती का दण्ड भोग रहे हैं। हर जगह लालसा और अनाचार है।

आधुनिक अराजकता संगठित अपराध कहलाती है। बिली ग्राहम का कहना है कि अनेक देशों में संगठित अपराध सबसे बड़ा व्यवसाय है। संगठित अपराधी कुछ देशों के महानगरों को अपने वश में किए हुए हैं।

अपराधियों से समाज की रक्षा करना सरकार का उत्तरदायित्व है। बुराई के लिए तो उन्हें भय का कारण होना है। विश्वासी को नागरिक व्यवस्था का उल्लंघन करने की अपेक्षा नियमों को मानना है।

जे. एडमर हूवर का कहना है कि नागरिक अपने पड़ोसी की सुरक्षा एवं उसके कल्याण के प्रति उदासीन हो गए हैं। वे सुनकर भी सहायता नहीं करते हैं न ही सहायता की पुकार करते हैं। नियमों का प्रवर्तन करवानेवाले अधिकारियों की कमी है। अतः उन्हें अपराधियों और खतरे के क्षेत्रों की सूचना के लिए नागरिकों पर निर्भर रहना होता है।

सरकार का काम है कि वह नागरिकों की रक्षा करे और विश्वासियों का काम है कि वे नियमों का पालन करें। पौलुस कहता है– पद 13:3–4, "क्योंकि हाकिम अच्छे काम के नहीं, परन्तु बुरे काम के लिये डर का कारण है; अतः यदि तू हाकिम से निडर रहना चाहता है, तो अच्छा काम कर, और उसकी ओर से तेरी सराहना होगी; क्योंकि वह तेरी भलाई के लिये परमेश्वर का सेवक है। परन्तु यदि तू बुराई करे, तो डर, क्योंकि वह तलवार व्यर्थ लिए हुए नहीं; और परमेश्वर का सेवक है कि उसके क्रोध के अनुसार बुरे काम करनेवाले को दण्ड दे।"

यह उचित एवं उपयुक्त है कि जो नागरिक असामान्य सेवा प्रदान करे उसे सम्मानित करना चाहिए। एक बुद्धिमान देश प्रतिभाशाली नागरिकों के समान अपने अच्छे नागरिकों को भी पुरस्कार देती है।

अब चाहे मान सम्मान न मिले विश्वासियों को भलाई की करना चाहिए। कुछ लोग सामाजिक सुसमाचार को महत्व देते हैं जबकि ऐसा कोई सुसमाचार नहीं है क्योंकि उसमें उद्धार के लिए मनुष्य का

अपना प्रयास होता है जैसे घोड़े के आगे बग्गी बांधना। कर्म तो विश्वास के उद्धार से उत्पन्न होते हैं। कर्म करनेवाला घमण्ड करता है। इफिसियों 2:9–10 में पौलुस कहता है, "और न कर्मों के कारण, ऐसा न हो कि कोई घमण्ड करे। क्योंकि हम उसके बनाए हुए हैं, और मसीह यीशु में उन भले कामों के लिये सृजे गए जिन्हें परमेश्वर न पहले से हमारे करने क लिये तैयार किया।"

और फिलिप्पियों 2:9–10 में भी वह यही कहता है, "इस कारण परमेश्वर ने उसको अति महान् भी किया, और वह नाम दिया जो सब नामों में श्रेष्ठ है, कि जो स्वर्ग में और पृथ्वी पर और पृथ्वी के नीचे हैं, वे सब यीशु के नाम पर घुटने टेकें।"

प्रेरितों के काम 10:38 में लिखा है कि प्रभु यीशु भले काम करता घूमता फिरता रहा। इससे बड़ा उदाहरण और क्या चाहिए?

सरकार का उत्तरदायित्व समाज की सुरक्षा ही नहीं (2) अपराधियों को दण्ड देना भी है। पौलुस आगे कहता है– पद 4–5, " क्योंकि वह तेरी भलाई के लिये परमेश्वर का सेवक है। परन्तु यदि तू बुराई करे, तो डर, क्योंकि वह तलवार व्यर्थ लिए हुए नहीं; और परमेश्वर का सेवक है कि उसके क्रोध के अनुसार बुरे काम करनेवाले को दण्ड दे। इसलिये अधीन रहना न कवल उस क्रोध के डर से आवश्यक है, वरन् विवेक भी यही गवाही देता है।"

रोमी अधिकारी तलवार बांधता था जिसका अर्थ होता था, अपराधियों को मृत्यु दण्ड देना। कहा जाता है कि राजा ट्रजन ने एक अधिकारी को तलवार प्रदान की जिसमें लिखा था, "मेरे लिये। यदि आवश्यक हो तो मुझमें।"

आज का चलन है कि अपराधी को लाड़–प्यार करो, न कि उसे दण्ड दें। आज मानवादियों का तर्क है कि मृत्युदण्ड पाशविक है, सभ्य समाज में वह अमानुशिक है। नियम बनानेवाले कहते हैं कि मृत्युदण्ड में देश को लाभ की अपेक्षा हानि उठाना पड़ती है और वे पुनर्वासित हत्यारों की ओर संकेत करते हैं। वे कहते हैं कि हत्याकांड से समाज को बचाने के लिए अपराधी को आजीवन कारावास देना ही पर्याप्त है। वे परमेश्वर की दृष्टि में मनुष्य के जीवन की पवित्रता को देखने से चूक जाते हैं। परमेश्वर का आदेश कभी निरस्त नहीं हुआ है कि हत्यारा मौत के घाट उतारा जाए। अपराध की समस्या का समाधान तथ्यों के सामने स्थान नहीं रखते।

यह कहना कि मृत्युदण्ड पाशविक है पवित्र लेख– नये नियम और पुराने नियम के अधिकार का अपमान करना है। समाज परमेश्वर की आज्ञा को अपने ही संकट के लिए टालता है।

अमरीका के भूतपूर्व राष्ट्रपति ने कहा कि नियम प्रवर्तक अधिकारी अपराधियों के अंगीकार में कमी बताते हैं जबकि अपराध बढ़ते ही जा रहे हैं। न्यायालयों में वैधानिक दावपेंचों के कारण खतरनाक अपराधी सड़को पर खुले घूम रहे हैं। हर जगह पुलिस निहत्था है। पुलिसवालों का वेतन बस चालकों से कम है और नियमों को पालन करने और पालन न करने के लिए चुनाव करनेवाले नागरिक बढ़ते ही जा रहे हैं... मेरे विचार में, हम नागरिकों को इससे लज्जा आनी चाहिए ... अराजकता देश का विनाशक है। इसका अर्थ यह नहीं कि हम अपराधियों का देश है परन्तु इसका अर्थ है कि हमारी जनता और वैयक्तिक स्वभाव में नियम एवं व्यवस्था के प्रति गंभीर समस्या है। शायद मुख्य समस्या है नागरिकों की उदासीनता तथा आधारभूत नैतिक सिद्धान्तों का अनदेखा किया जाना।

बाइबल नागरिकों की सुरक्षा और अपराधियों के दण्ड के लिए सरकार के अधिकारों का समर्थन करती है। अपराध का दण्ड उपयुक्त होना चाहिए। मानवीय जीवन की पवित्रता के निमित्त मृत्युदण्ड उचित है। यहां पौलुस पुराने नियम के सिद्धान्त का समर्थन करता है। आज पौलुस, नूह और कैन के युग के समान अराजकता फैली हुई है। प्रभु का राज्य कठोर अनुशासन और न्याय के सुचारु प्रबन्धन का चित्रण होगा। भजन 2:9 में लिखा है कि वह लोहे के दण्ड से राज करेगा। लोहे का दण्ड उसके अटल न्याय का प्रतीक है।

स्मरण रखें शासन करनेवाले परमेश्वर के सेवक हैं। इसमें सन्देह नहीं कि सब अधिकारी विवेकशील सेवा नहीं करते हैं परन्तु उन्हें परमेश्वर ने नियुक्त किया है।

II. देश के अगुओं का अधिकार (13:7)

देश में उत्तरदायित्व का पद संभालनेवालों को सरकार के सहयोग की आवश्यकता पड़ती है। अपने इन अन्तिम पदों में पौलुस विश्वासियों से कहता है कि वे शासकीय अधिकारियों को पूरा सहयोग दें।

क) आर्थिक सहयोग का अधिकार (13:7)

पौलुस कहता है कि शासकों को आर्थिक समस्याओं का समाधान करना आवश्यक है। अब वह कहता है कि विश्वासी हर एक का हक्क चुकाया करें, जिसे कर चाहिए उसे कर दें, जिसे महसूल चाहिए उसे महसूल दें। अलफोर्ड कहते हैं कि टरटूलियन की यह टिप्पणी है कि विश्वासियों द्वारा मन्दिर में दान न देने की हानि रोम ने उनके विवेकपूर्ण कर चुकाने से पूरी कर ली थी। महसूल उस युग में बिक्रीकर के समान था। बाइबल में चुंगी लेनवाले यही कर एकत्र करते थे। अतः वे सबसे बड़े घृणा के पात्र थे। पौलुस कहता है कि अधिकारियों को हमारे आर्थिक सहयोग का अधिकार है। अतः हमें कर देना चाहिए।

ख) हमारे नैतिक सहयोग का अधिकार (13:7)

व्यवस्था का पालन करना और व्यवस्था की मनोवृति निभाने में अन्तर है। पौलुस कहता है, "हर एक का हक्क चुकाया करो... जिससे डरना चाहिए उससे डरो, जिसका आदर करना चाहिए उसका आदर करो।" भय पर तो आज शक नहीं किया जा सकता परन्तु हमें उनका सम्मान भी करना है। अधिकारियों के लिए अपमान के शब्द काम में लेना मसीही बुलाहट नहीं है। (न्यायियों 8–10)

इस समय रोम का शासक दुष्ट नीरो था। रोम के इतिहास में अनेक राजा देश के लिए कलंक थे और उनका न्याय इतिहास में कलंकित था। यद्यपि पौलुस एक कट्टर यहूदी था जो विदेशी शासन के विरुद्ध था और एक दिन यहूदियों ने विद्रोह भी किया परन्तु पौलुस उन्हें परमेश्वर के नियुक्त कहता है। वे परमेश्वर को लेखा देंगे। अतः विश्वासियों को पूरा सहयोग देना है क्योंकि वे परमेश्वर द्वारा नियुक्त किए गए हैं।

प्रेम नैतिक बोध है

I. प्रभु की आज्ञांए (13:8–10)

क) प्रेम का ऋण (13:8)
ख) प्रेम का दायित्व (13:9)
ग) प्रेम की लालसा (13:10)

II. प्रभु का आगमन (13:11–14)

क) हम जागते रहें (13:11)

1. हमें उसके शीघ्रागमन की सूचना
2. उसके शीघ्रागमन का प्रभाव

ख) हमें बहादुरी से लड़ना है (13:12)
1. चुनौती भरा कार्य (उतार दो)
2. निर्भरता का कार्य (पहन लो)

ग) सदाचारी जीवन (13:13)
1. उचित मार्ग
2. अनुचित मार्ग

घ) विजयी प्रतीक्षा (13:14)
1. दिया गया
2. वर्जित

पौलुस मसीही जीवन के विभिन्न नियमों की चर्चा करके अब सबसे बड़े नियम की चर्चा करता है– प्रेम का नियम जो विश्वासी के जीवन में सर्वोपरि है तथा जीवन के हर एक पक्ष में कार्यकारी है। प्रेम विवेक को नियमों से अधिक सुग्राह्य बनाता है।

I. प्रभु की आज्ञांए (13:8–10)

विश्वासी आज्ञाओं को नियम की अपेक्षा प्रभु की आज्ञा मानकर उनका पालन करता है। प्रभु के लिए विश्वासी का प्रेम नियमों के भय से अधिक कार्यकारी है। प्रभु यीशु ने कहा– यूहन्ना 14:21, "जो मेरी आज्ञाओं को मानता है वही है जो मुझसे प्रेम करता है।" इसके तीन पक्ष सर्वव्यापी हैं।

क) प्रेम का ऋण (13:8)

पद 8, "आपस के प्रेम को छोड़ और किसी बात में किसी के कर्ज़दार न बनो।" इसका अर्थ यह नहीं कि वह ऋण न ले परन्तु अपनी क्षमता से अधिक न ले। आज ऋण लेना बहुत आसान है परन्तु उससे

आमदनी पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इससे बचें और मूल्य चुकाने से अधिक न लें कि ऋणदाता को भुगतान की प्रतीक्षा करना पड़े। मसीही गवाही पर सबसे अधिक बुरा चुनाव पुराने कर्ज़ का पड़ता है।

जक्कई एक अच्छा उदाहरण है। प्रभु यीशु के साक्षातकार पर तुरन्त वह कहता है, –लूका 19:8–9 मैं अपनी आधी सम्पत्ति गरीबों को देता हूं और जिससे अवैध लिया है उसे चारगुणा लौटाता हूं। प्रभु यीशु के संबन्ध में आकर उसका मन बदला और उसका विवेक जागा।

"किसी बात में किसी के कर्ज़दार न हो।" दाऊद पूछता है– भजन संहिता 15:1, "हे परमेश्वर तेरे तम्बू में कौन रहेगा?" इसका उत्तर पद 4 में है, "जो शपथ खाकर बदलता नहीं चाहे हानि उठानी पड़े।" सभोपदेशक 5:4–5 में लिखा है, "जब तू परमेश्वर के लिये मन्नत माने, तब उसके पूरा करने में विलम्ब न करना; क्योंकि वह मूर्खों से प्रसन्न नहीं होता। जो मन्नत तू ने मानी हो उसे पूरी करना। मन्नत मानकर पूरी न करने से मन्नत का मानना ही अच्छा है।"

सब कर्ज़ उतारे जा सकते हैं परन्तु प्रेम का कर्ज़ नहीं उतरता है, "आपस के प्रेम को छोड़ और किसी बात में किसी के कर्ज़दार न हो।" पतरस ने प्रभु यीशु से पूछा अपने भाई को कितनी बार क्षमा करूं, सात बार? प्रभु यीशु ने उससे कहा, मत्ती 18:21–22 सत्तर गुणा सात बार! अपने भाई को सात बार क्षमा करने से प्रेम का कर्ज़ उतरता नहीं। परमेश्वर के प्रेम को समझ कर हमें क्षमा करते रहना है।

ख) प्रेम का दायित्व (13:9)

पौलुस सिद्ध करता है कि प्रेम व्यवस्था पूरी करता है। पद 9, "क्योंकि यह कि 'व्यभिचार न करना, हत्या न करना, चोरी न करना, लालच न करना,' और इन को छोड़ और कोई भी आज्ञा हो तो सब का सारांश इस बात में पाया जाता है, 'अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख।'" दस आज्ञाएं (निर्गमन 20:1–17) दो भागों में विभाजित हैं। पहले भाग में "तेरा प्रभु परमेश्वर..." दूसरे भाग में "तू" पर बल दिया गया है। पहले भाग में परमेश्वर के प्रति दायित्व बोझ है और दूसरे में मनुष्य के प्रति दायित्व बोझ है।

माता–पिता की आज्ञा मानना परमेश्वर के प्रति दायित्व बोझ है। क्योंकि माता–पिता बच्चों के लिए परमेश्वर का अधिकार रखते हैं। आज्ञाओं के प्रत्येक भाग में विचार, शब्द और कार्य हैं।

इसका सारांश हैः

क) आज्ञाएं–1–2– विचार

ख) आज्ञा– 3– शब्द

ग) आज्ञा –4–5 – कार्य

प्रत्येक आज्ञा "तेरा प्रभु परमेश्वर" पर आधारित है।

ग) आज्ञा–6, 7, 8 –कार्य

ख) आज्ञा–9– शब्द

क) आज्ञा–10– विचार

इनमें से प्रत्येक आज्ञा "तू" पर आधारित है।

प्रभु यीशु ने दस आज्ञाओं को घटाकर केवल दो कर दिया। उसने केवल उसके हृदय की बात को **आघोरेखित** किया– नियम के स्थान पर प्रेम पर बल दिया। पहली आज्ञा, "प्रभु हमारा परमेश्वर एक ही प्रभु है और तू प्रभु अपने परमेश्वर से अपने सारे मन से, अपने सारे प्राण से, और अपनी सारी बुद्धि से और अपनी सारी शक्ति से प्रेम रखना। और दूसरी यह है, तू अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रखना। इससे बड़ी और कोई आज्ञा नहीं।" (मरकुस 12:29–31) और यीशु ने कहा– 'ये ही दो आज्ञाएं सारी व्यवस्था और भविष्यद्वक्ताओं का आधार हैं।' (मत्ती 22:40)

आज्ञाओं को मानने के लिए प्रेम इसलिए बाध्य नहीं कि वे व्यवस्था में है क्योंकि विश्वासी व्यवस्था के अधीन नहीं है। वह अनुग्रह के अधीन है। वे परमेश्वर प्रेम का अनन्त आभार है, अन्यों का आभार है जो प्रेम के अधीन है। एक धनवान मनुष्य प्रभु यीशु के पास अनन्त जीवन का उपाय पूछने आया तो प्रभु यीशु ने उसे ये पांच आज्ञाएं बताईं तो उसने कहा कि वह बचपन से ही उसे पूरा करता आ रहा है तब प्रभु यीशु

ने उससे कहा, "अपनी संपत्ति बेचकर कंगालों में बांट दे तो स्वर्ग में धन के भण्डार पाएगा और मेरे पीछे हो ले।" (मत्ती 19:16–21) वह दुःखी होकर चला गया क्योंकि वह बहुत धनवान था। वह अपने आप से ही प्रेम रखता था, पड़ोसी से नहीं।

"जो अपने पड़ोसी से प्रेम करता है वह उसकी पत्नी का लालच नहीं करेगा, उसकी हत्या का विचार नहीं करेगा, न उसके घर की चोरी करेगा, न उसके बारे में झूठ कहेगा, न उसकी किसी वस्तु का लालच करेगा।"

ग) प्रेम की लालसा (13:10)

प्रेम मनुष्य के कल्याण और परमेश्वर को प्रसन्न करने की लालसा करता है– पद 10, "प्रेम पड़ोसी की कुछ बुराई नहीं करता, इसलिये प्रेम रखना व्यवस्था को पूरा करना है।" 1 कुरिन्थियों 13:4–8 में पौलुस प्रेम का स्वभाव प्रकट करता है, "प्रेम धीरजवन्त है, और कृपालु है; प्रेम डाह नहीं करता; प्रेम अपनी बड़ाई नहीं करता, और फूलता नहीं, वह अनरीति नहीं चलता, वह अपनी भलाई नहीं चाहता, झुंझलाता नहीं, बुरा नहीं मानता। कुकर्म से आनन्दित नहीं होता, परन्तु सत्य से आनन्दित होता है। वह सब बातें सह लेता है, सब बातों की प्रतीति करता है, सब बातों की आशा रखता है, सब बातों में धीरज धरता है।"

यहूदी प्रावधान का आधार व्यवस्था थी और मसीही प्रावधान का आधार प्रेम है। प्रेम व्यवस्था की पूर्ति है– ऋण और दायित्व के अधीन नहीं परन्तु हार्दिक इच्छा से।

II. प्रभु का आगमन (13:11–14)

प्रेम विश्वासी को प्रभु की आज्ञाओं को मानने की प्रेरणा ही नहीं देता वह प्रभु के आगमन की प्रतीक्षा भी करवाता है। 1 यूहन्ना 3:3, "जो कोई यह आशा रखता है वह अपने आप को वैसा ही पवित्र करता है, जैसा वह पवित्र है।" प्रभु के आगमन की संभावना पवित्र जीवन के लिए एक महान प्रेरणा है। प्रभु का आगमन कभी भी महिमा में हो सकता है। अतः हमें चार बातों का ध्यान रखना है।

क) हमें सजग रहना है (13:11)

नये नियम में हमें बार–बार प्रभु के आगमन के लिए चिताया गया है– पद 11, "तुम्हारे लिए नींद से जाग उठने की घड़ी आ पहुंची है; क्योंकि जिस समय हमने विश्वास किया था, उस समय के विचार से अब हमारा उद्धार निकट है।" नये नियम में उद्धार तीन समयों में है– पूर्वकालः पाप के दण्ड से उद्धार। वर्तमान– पाप की प्रभुता से उद्धार। भविष्यः पाप की उपस्थिति से उद्धार। पौलुस के मन में उद्धार का तीसरा विचार है, "हमारा उद्धार निकट है।" किसी ने कहा है, "हम प्रतिदिन अपनी यात्रा में घर के अधिकाधिक निकट तम्बू लगाते हैं।"

सब पवित्र जनों को प्रभु के आगमन की प्रतीक्षा थी। केवल पतरस को धन्य आशा नहीं थी क्योंकि वह जानता था कि वह प्रभु के आने से पूर्व ही मर जाएगा (यूहन्ना 21:18, 19; 2 पतरस 1:14)। पौलुस ने भी तीमुथियुस को दूसरा पत्र लिखते समय जान लिया था कि वह नीरो द्वारा घात किया जाएगा (2 तीमुथियुस 4:6–8)। हमें समय को पहचानना है क्योंकि हमें स्वर्ग में उठाए जाने की प्रतीक्षा है।

हर एक युग में प्रभु के आगमन की प्रतीक्षा रही है परन्तु आज की परिस्थिति अधिक स्पष्ट कहती है कि उसका आगमन निकट है– इस्राएल का स्वदेश लौटना, यरूशलेम की दशा, रूस का उदय, नास्तिक विचारों का बोलबाला, यूरोप के देशों का संगठन, कलीसिया का धर्मत्याग, रोम का प्रभाव बढ़ना, कलीसियाई एकता का रूझान, विज्ञान और तकनीकी विकास, परमाणु शक्ति, चीन की जागृति, संगठित अपराधों का साम्राज्य और अराजकता आदि। विश्वासी को प्रभु के आगमन की प्रतीक्षा में ही रहना है। यदि घर का स्वामी जान ले कि चोर कब आएगा तो उसका घर चोरी से बच जाएगा। मनुष्य का पुत्र अनापेक्षित समय आ जाएगा (मत्ती 24:42–44)।

ख) वीरता से लड़ें (13:12)

प्रभु का आगमन और समय का ध्यान रखकर बैरी का सामना करना है। बैरी पर ध्यान और प्रार्थना में युद्ध। पद 12, "रात बहुत बीत गई है और दिन निकलने पर है; इसलिए हम अन्धकार के कामों को त्याग कर ज्योति के हथियार बांध लें।" सैनिक जब सेना में भर्ती होता है तब उसे वर्दी दी जाती है और तब से उसकी पहचान उसकी वर्दी है।

इसी प्रकार विश्वासी को पवित्र आत्मा के सामर्थ्य से अन्धकार के काम सदा के लिए निश्चित रूप से त्याग देने हैं और ज्योति के हथियार बांध लेने हैं तथा इस संसार के अन्धकर के शासकों से लड़ना है (इफिसियों 6:12–17)।

ग) सदाचारी आचरण (13:13)

पौलुस सदाचार और दुराचार समझाता है। सदाचार का अर्थ है, "जैसा दिन को शोभा देता है वैसा ही हम सीधी चाल चलें।" थिस्सलुनीके की कलीसिया को पौलुस ने लिखा कि हम ज्योति की सन्तान हैं (1 थिस्सलुनीकियों 5:5)। विश्वासी में कोई दोष न देख पाए। क्या आपका आचरण आप पर, विश्वासी पर शोभा देता है। क्या हम ज्योति में खड़े हो सकते हैं? क्या हम निन्दा से परे जीवन जी रहे हैं? प्रेम का सदाचारी विवेक प्रभु यीशु के आगमन के विचार से जागृत ऐसा आचरण उत्पन्न करेगा।

अब पौलुस दुराचारी जीवन के बारे में कहता है, पद 13, "न कि लीला–क्रीड़ा, और पियक्कड़पन में, न व्यभिचार और लुचपन में, और न झगड़े और डाह में।" उद्धार पाने के बाद, पौलुस कहता है कि विश्वासी इस पुराने व्यवहार को लौटने न दें। चेतावनी हथियारबन्द करती है। विश्वासी को सदाचार का जीवन जीना है और आत्मा की तलवार से पाप को मारना है।

घ) हमें विजयी प्रतीक्षा करना है (13:14)

पौलुस के आदेश प्रभु के आगमन के सत्य से अधिक प्रभावी हो जाते हैं। अतः हमें उपलब्धियों और निषेधों के प्रति सतर्क हो जाना है– पद 14, "प्रभु यीशु मसीह को पहन लो और शरीर की अभिलाषाओं को पूरा करने का उपाय न करो।"

प्रभु यीशु को धारण करके विश्वासी प्रभु यीशु को पूरा धारण कर लेता है।

उसकी धार्मिकता कैसी सिद्ध है
जिसमें पवित्र जन
निष्कलंक सुन्दर वस्त्र
पहने खड़े रहते हैं।

वह हमारा नैतिक आवतरण है जो केवल उसी को प्रकट करता है। इसमें शरीर का कोई स्थान नहीं है। शरीर की असीमित लालसाएं भीतर आना चाहती हैं। शरीर का अर्थ बुरी अभिलाषाएं ही नहीं, सुसंस्कृत शारीरिक अभिलाषाएं भी हैं। सब का इन्कार करो। प्रभु यीशु के आगमन की प्रतीक्षा में हमें विजयी बाट जोहना है। यदि हम पवित्र आत्मा को उसका वचन अपने जीवन में उपजाने दें तो प्रेम का सदाचारी विवेक हमें अत्यधिक से संवेदनशील बना देगा और मसीह के आगमन पर लज्जा की बातों को पहचानेंगे।

प्रेम का दयालु आचरण

14:1–15:7

I. दुर्बल भाई को स्वीकार करो (14:1–9)

क) उसे विश्वास के साथ स्वीकार करो (14:1)

ख) उसे सम्मानपूर्वक स्वीकार करो (14:2–9)

1. समता आदेशात्मक नहीं है (14:2–5)

(अ) खाना व्यक्तिगत धार्मिक स्वतंत्रता है (14:2–4)

(ब) पर्व मानना भी व्यक्तिगत है (14:5)

2. एकता असंभव नहीं है (14:6–9)

(अ) मसीह की प्रभुता हमें इस जीवन में जोड़ती है (14:6–7)

(ब) मसीह की प्रभुता हमें उस जीवन में जोड़ती है (14:8–9)

II. दुर्बल भाई पर दोष लगाना (14:10–13)

क) चुनौती (14:10–12)

1. निरुद्देश्य (14:10)
2. काल्पनिक (14:10–12)

ख) उचित व्यवस्था (14:13)

III. दुर्बल भाई के साथ निर्वाह (14:14–15:7)

क) दया का व्यवहार (14:14–23)

1. मसीह में स्वतंत्रता के सिद्धान्त (14:14–15)
2. मसीह में स्वतंत्रता की प्राथमिकताएं (14:16–18)
3. मसीह में स्वतंत्रता के अभ्यास (14:19–23)

ख) मसीह के स्वभाव का प्रदर्शन (15:1–7)

1. कठिन मार्ग पर चलना (15:1–4)
2. ऊंचे मार्ग पर चलना (15:5–7)

यदि हम प्रेम रखते हैं तो अवश्य ध्यान रखेंगे कि विश्वास में दुर्बल भाई को हमारे व्यवहार के कारण ठोकर न लगे। इस अध्याय में दुर्बल भाई की समस्याओं को प्रकट किया गया है परन्तु समस्या तब बढ़ जाती है जब दुर्बल जन अपने आपको सबसे अधिक बलवन्त मानता है। दुर्बल भाई वह है जो कुछ बातों से परहेज़ करता है और बाहरी दिखावे पर निर्णय लेता है और बाहरी और भीतरी व्यवहार में अन्तर देखने से चूक जाता है। यदि कोई उसके लिए आपत्तिजनक काम करता है तो वह तुरन्त निष्कर्ष निकाल लेता है कि उसका उद्देश गलत है।

IV. दुर्बल भाई को स्वीकार करने का प्रश्न (14:1–9)

क्या ऐसा विश्वासी कलीसिया की सहभागिता में लिया जाए? इसमें शक नहीं कि हर बात में संकोच करनेवाला कलीसिया में क्लेश का कारण हो सकता है।

क) उसे विश्वास के साथ ग्रहण करें (14:1)

पौलुस कहता है, पद 1, "उसे अपनी संगति में ले लो पर विवाद करने के लिए नहीं।" उसके संकोच को विवाद का विषय न बनाएं और न ही विश्वास में दृढ़ भाई उससे विवाद करें। रोम की कलीसिया में अन्यजाति जो मूर्तिपूजा से आए थे जानते थे कि बाज़ार का मांस मूर्तियों को चढ़ाया जाता था

और जब यहूदी उसे खाते थे तो उनके विचार में वह मूर्तिपूजा के बराबर था जबकि यहूदियों के विचार में मांस का मूर्तिपूजा से कोई संबन्ध नहीं था। दूसरी ओर उन्हें यहूदी रीति रिवाजों का ज्ञान नहीं था। अतः उनका दिनों और पर्वों को नहीं मानना यहूदी धर्म से आए विश्वासियों के लिए निन्दात्मक था। दोनों ही के विचारों में उनका दृष्टिकोण उचित था। यह समस्या आज की कलीसियाओं में है। हम में भाइयों को दोष देने के लिए हमारी अपनी मान्यताएं हैं। पौलुस कहता है कि यदि धर्मशास्त्र स्पष्ट निर्देश न दे तो उन बातों को अनदेखा करो। सबकी अपनी अपनी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि है। अतः सिद्धान्त स्थापित न करें। अतः पौलुस के विचार में दुर्बल भाई का सहभागिता में हार्दिक स्वागत करना चाहिए। उसका ठट्ठा न किया जाए।

ख) उसे स्वीकार करें (14:2–9)

दूसरों के दृष्टिकोण को जगह देना प्रेम के दयालु व्यवहार का बाहरी प्रदर्शन है। पौलुस चाहता है कि हम समझें (1) समता आदेशात्मक नहीं है। आवश्यक नहीं कि हम सबके विचार एक से हों न ही हमारा स्वभाव एक सा हो। अनावश्यक बातों पर मतभेद के कारण पौलुस दो महत्वपूर्ण प्रश्न पूछता है– पर्व और भोजन के संबन्ध में।

भोजन के संबन्ध में वह कहता है कि किसी की व्यक्तिगत भक्ति में स्वतंत्रता की बहुत गुंजाइश है– पद 2–4, "एक को विश्वास है कि सब कुछ खाना उचित है, परन्तु जो विश्वास में निर्बल है वह साग पात ही खाता है। खानेवाला न–खानेवाले को तुच्छ न जाने, और न–खानेवाला खानेवाले पर दोष न लगाए; क्योंकि परमेश्वर ने उसे ग्रहण किया है। तू कौन है जो दूसरे के सेवक पर दोष लगाता है? उसका स्थिर रहना या गिर जाना उसके स्वामी ही से सम्बन्ध रखता है; वरन् वह स्थिर ही कर दिया जाएगा, क्योंकि प्रभु उसे स्थिर रख सकता है।"

भोजन का औचित्य और निषेध पर चर्चा नहीं की गई है। उसका उद्धार और पवित्रता से कोई संबन्ध नहीं है। दुर्बल भाई को अन्धविश्वासी या संकीर्ण मानसिकता का न कहा जाए, न ही दुर्बल भाई विश्वास में दृढ़ को सांसारिक या सिद्धान्तरहित कहे। विश्वासी इन बातों पर नहीं, परमेश्वर के पोषक सामर्थ पर निर्भर रहता है।

सार्वजनिक आराधना में भी स्वतंत्रता की गुंजाइश के कारण पर्वों को मतभेद का विषय नहीं बनाया जाए। पद 5, "कोई एक दिन को दूसरे से बड़ा मानता है, और कोई सब दिनों को एक समान मानता है।

हर एक अपने ही मन में निश्चय कर ले।" हमारे काम के पीछे हमारे उद्देश्य सामाजिक विवशता नहीं परन्तु प्रभु के समक्ष व्यक्तिगत विश्वास है।

पौलुस कहता है हमारा बन्धन प्रेम का है व्यवस्था का नहीं। अतः जो विशेष दिनों को नहीं मानते उन पर दबाव न हो। पौलुस कहता है कि धार्मिक अभ्यास में एकरुपता का कोई आदेश नहीं है।

(2) एकता असंभव नहीं है। समरुपता और सच्ची एकता में महान अन्तर है। समरुपता ठंडी और निर्जीव है जबकि एकता उत्साही, जीवन्त एवं गर्म है। परन्तु अनावश्यक बातों के कारण मतभेद रखनेवालों में एकता कैसे स्थापित हो? पौलुस कहता है, मसीह की प्रभुता के कारण। वह कहता है कि मसीह की प्रभुता विश्वासियों को इस जीवन में जोड़ती है –पद 6–7, "जो किसी दिन को मानता है, वह प्रभु के लिये मानता है। जो खाता है, वह प्रभु के लिये खाता है, क्योंकि वह परमेश्वर का धन्यवाद करता है, और जो नहीं खाता, वह प्रभु के लिये नहीं खाता और परमेश्वर का धन्यवाद करता है। क्योंकि हम में से न तो कोई अपने लिये जीता और न कोई अपने लिये मरता है।"

मनुष्य के आचरण का महत्व यह नहीं कि कोई उसके बारे में क्या सोचता है परन्तु यह कि प्रभु यीशु क्या सोचता है। जैसे पहिये की तीलियां जितना अधिक नाभि के निकट होगी उतना ही अधिक एक दूसरे के निकट रहेंगे और नाभि से जितना दूर जाएंगी उतना ही अधिक एक दूसरे से भी दूर रहेंगी। हमारी नाभि यीशु मसीह है। प्रभु यीशु के निकट आने पर एकता स्वयं आ जाएगी।

मसीह की प्रभुता इस जीवन में ही नहीं आनेवाले जीवन में भी विश्वासियों को जोड़ती है–पद 8–9, "यदि हम जीवित हैं, तो प्रभु के लिये जीवित हैं; और यदि मरते हैं, तो प्रभु के लिये मरते हैं; अतः हम जीएं या मरें, हम प्रभु ही के हैं। क्योंकि मसीह इसी लिये मरा और जी भी उठा कि वह मरे हुओं और जीवतों दोनों का प्रभु है।"

पौलुस के कहने का अर्थ है कि विश्वासी प्रभु यीशु के वश में रहता है। वह अपनी मृत्यु और मृत्यु के समय का चुनाव नहीं कर सकता है। मृत्यु भी प्रभु यीशु के साथ उसका संबन्ध विच्छेद नहीं कर सकती है। मृत्यु के आने पर सब मतभेद समाप्त हो जाते हैं। कब्र के परे मसीह की प्रभुता सब जगह मानी जाती है। जब हम महिमा पाएंगे तब अपने मुकुट उसके चरणों में रखना सबसे बड़े आनन्द का समय होगा

(फिलिप्पियों 2:9–10; प्रकाशितवाक्य 4:9–11)। प्रत्येक विश्वासी अपना जीवन साधे तो मसीह की प्रभुता और एकता असंभव न होगी।

II. दुर्बल भाई पर दोष लगाना (14:10–13)

दुर्बल भाई को सहभागिता में स्वीकार करे। एकता मात्र समरुपता नहीं है। मसीह की देह की एकता को प्रकट करने के लिए एक होना आवश्यक है। संषयी भाई की आलोचना की परीक्षा सदा बनी रहती है परन्तु परिपक्वता के साथ एकता के सत्य को ग्रहण करें।

क) आलोचना की इच्छा को चुनौती (14:10–12)

पौलुस कहता है कि (1) यह निरर्थक है– पद 10, "तू अपने भाई पर क्यों दोष लगाता है? या तू फिर क्यों अपने भाई को तुच्छ जानता है?" इससे क्या लाभ होगा? यह कितना रचनात्मक है? अफवाह और आलोचना से कुछ सिद्ध नहीं होता है। आलोचना प्रेम की व्यवस्था का उल्लंघन है।

(2) भाई की आलोचना करना अभिमान है– पद 10–12, "तू अपने भाई पर क्यों दोष लगाता है? या तू फिर क्यों अपने भाई को तुच्छ जानता है? हम सब के सब परमेश्वर के न्याय सिंहासन के सामने खड़े होंगे। क्योंकि लिखा है, 'प्रभु कहता है, मेरे जीवन की सौगन्ध कि हर एक घुटना मेरे सामने टिकेगा, और हर एक जीभ परमेश्वर को अंगीकार करेगी।' इसलिये हम में से हर एक परमेश्वर को अपना अपना लेखा देगा।"

धर्मशास्त्र में 7 दण्ड हैं। यहां विश्वासी कर्मों का दण्ड पाएगा, पाप का नहीं। उसके पापों का दण्ड कलवरी पर पूरा हो गया है और अब पापों का लेखा नहीं रहा (इब्रानियों 10:17)। परन्तु उसका प्रत्येक काम परखा जाएगा (मत्ती 12:36; 2 कुरिन्थियों 5:10; कुलुस्सियों 3:24–25)। प्रभु के आगमन पर इस न्याय के द्वारा उसे प्रतिफल मिलेगा (मत्ती 16:27; लूका 14:14; 1 कुरिन्थियों 4:5; 2 तीमुथियुस 4:8; प्रकाशितवाक्य 22:12)। भाई की आलोचना भी मसीह के न्याय शासन के समक्ष परखी जाएगी। अपने मन को जांचने पर हम परमेश्वर के समक्ष दीन बनेंगे। हमें मसीह के न्याय आसन के सामने अपना ही लेखा देना होगा। हमें अपने भाइयों के कामों की चिन्ता नहीं करना होगी।

ख) आलोचना की प्रवृति से मुक्ति पाएं (14:13)

यह वास्तव में अपने आप को जांचने की बात है।

किसी की आलोचना करने के बारे में प्रभु यीशु के वचन अति उत्तम शिक्षा देते हैं– मत्ती 7:1–5, "दोष मत लगाओ कि तुम पर भी दोष न लगाया जाए। क्योंकि जिस प्रकार तुम दोष लगाते हो, उसी प्रकार तुम पर भी दोष लगाया जाएगा; और जिस नाप से तुम नापते हो, उसी नाप से तुम्हारे लिये भी नापा जाएगा। तू क्यों अपने भाई की आंख के तिनके को देखता है, और अपनी आंख का लट्ठा तुझे नहीं सूझता? जब तेरी ही आंख में लट्ठा है, तो तू अपने भाई से कैसे कह सकता है, 'ला मैं तेरी आंख से तिनका निकाल दूं?' हे कपटी, पहले अपनी ओंख में से लट्ठा निकाल ले, तब तू अपने भाई की आंख का तिनका भली भांति देखकर निकाल सकेगा।"

किसी की आलोचना करने का पाप परमेश्वर के लोगों में एक आम बात है। यह पाप है जिसमें हम ऐसे व्यस्त हो जाते हैं कि हमें अपने पाप नहीं दिखते। इस कारण हम किसी के लिए ठोकर का कारण बन जाते हैं और वे हमारे कारण पथभ्रष्ट होते हैं। देखिए इस अपराध के विषय प्रभु यीशु मत्ती 18 में क्या कहता है। यह अध्याय प्रभु के लोगों के आचरण पर प्रकाश डालता है। मत्ती 18:3–6 में प्रभु यीशु बड़ी गंभीरता से कहता है, "मैं तुम से सच कहता हूं कि जब तक तुम न फिरो और बालकों के समान न बनो, तुम स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करने नहीं पाओगे। जो कोई अपने आप को इस बालक के समान छोटा करेगा, वह स्वर्ग के राज्य में बड़ा होगा। और जो कोई मेरे नाम से एक ऐसे बालक को ग्रहण करता है वह मुझे ग्रहण करता है। पर जो कोई इन छोटों में से जो मुझ पर विश्वास करते हैं एक को ठोकर खिलाए, उसके लिये भला होता कि बड़ी चक्की का पाट उसके गले में लटकाया जाता, और वह गहरे समुद्र में डुबाया जाता।"

हम या तो किसी के निर्माण का कारण हैं या किसी के पतन का। पौलुस आपसे कहता है सावधान! भाई के लिए –छोटों के लिए ठोकर का कारण मत बनो।

III. दुर्बल भाई को स्वीकारने का विषय (14:14–15:7)

एक दुर्बल भाई की बातों को हम कब तक अनदेखा करें? यह एक कठिन प्रश्न है। पौलुस विश्वास में दृढ़ भाई पर इसका उत्तरादायित्व डालता है। उसे दयाभाव और प्रभु यीशु के स्वभाव में यथासंभव समझौता करना है।

क) दया की आत्मा (14:14–23)

दुर्बल भाई को ग्रहण करना एक नियम नहीं प्रेम का स्वभाव है। "मुझे करना होगा" नहीं "मैं चाहता हूं।" प्रेम सहायता की प्रेरणा देता है जिससे दया का कार्य उत्पन्न होता है।

पौलुस हमें तीन बातें बताता है। (1) मसीह में हमारी स्वतंत्रता अर्थात मुक्तिप्राप्त विवेक के अधिकार। पद 14, "मैं जानता हूं और प्रभु यीशु में मुझे निश्चय हुआ है कि कोई वस्तु अपने आप से अशुद्ध नहीं, परन्तु जो उसको अशुद्ध समझता है उसके लिये अशुद्ध है।"

विवेक को हम अचूक न माने परन्तु विवेक के विरुद्ध भी न चलें। अतः दुर्बल भाई को विवेकहीन बनाने की अपेक्षा उसके विवेक को वचन से साधें। अनैतिकता के संबन्ध में नहीं, केवल प्रथाओं के संबन्ध में। हमारा मन परमेश्वर के सत्य को समझे और हमारा हृदय उस सत्य से कायल हो। धर्म के ऊपरी बन्धनों से मुक्त होना कैसे आनन्द की बात है यह परमेश्वर की सन्तान का अधिकार है परन्तु वयस्क पुत्र ही इसका आनन्द ले सकते हैं।

पौलुस स्वतंत्र विवेक के उत्तरदायित्व का भी उल्लेख करता है– पद 15, "यदि तेरा भाई तेरे भोजन के कारण उदास होता है, तो फिर तू प्रेम की रीति से नहीं चलता; जिसके लिये मसीह मरा, उसको तू अपने भोजन के द्वारा नष्ट न कर।"

"क्या मैं अपने भाई का रखवाला हूं?" यह एक हत्यारे के वचन हैं। "नष्ट" से पौलुस का अभिप्राय है निरर्थक बनाना। प्रत्येक विश्वासी अपने भाई का रखवाला है। उसे भटकने से उसे बचाना है। स्वतंत्र विवेक का अर्थ यह नहीं कि किसी की आत्मा को नष्ट करें। उत्तरदायित्व के बिना अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग न करें। यहां मुख्य बात है, "तो फिर तू प्रेम की रीति से नहीं चलता जिसके लिये मसीह मरा।"

(2) मसीह में हमारी स्वतंत्रता की प्राथमिकताएं। किसी पर मसीह आचरण का गलत प्रभाव न पड़े– पद 16, "अतः तुम्हारे लिये जो भला है उसकी निन्दा न होने पाए।" दुर्बल भाई के पतन के निमित्त और प्रभु यीशु की योजना की हानि के विरुद्ध विश्वास की दृढ़ता गलत प्रभाव डालती है। अविश्वासियों को इस कारण निन्दा का अवसर मिलता है क्योंकि स्वतंत्रता सांसारिकता में बदलते देर नहीं लगती। अतः अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग नहीं करना है।

चार्ल्स स्पर्जन धूम्रपान को पाप नहीं मानते थे परन्तु जब सिगरेट कंपनी ने विज्ञापन में उनका नाम लिया तो उन्होंने तुरन्त धूम्रपान का त्याग किया कि उनका मसीही जीवन ठोकर का कारण न बने।

हमें मसीही आचरण की गलत छवि प्रस्तुत नहीं करना है। साथ ही साथ हमें भी मसीही आचरण के बारे में भ्रम में नहीं रहना है– पद 17–18, "क्योंकि परमेश्वर का राज्य खाना–पीना नहीं, परन्तु धर्म और मेल–मिलाप और वह आनन्द है जो पवित्र आत्मा से होता है। जो कोई इस रीति से मसीह की सेवा करता है, वह परमेश्वर को भाता है, और मनुष्यों में ग्रहणयोग्य ठहरता है।"

खाना–पीना पौलुस के समय एक विवाद का विषय था। इसका उत्तर "हां" और "नहीं" था। पौलुस कहता है खाना–पीना परमेश्वर के राज्य का विषय नहीं है। परमेश्वर के राज्य के विषय पवित्र आत्मा से संबन्धित है– धार्मिकता, शान्ति, आनन्द। सबसे बड़ी बात है पवित्र आत्मा के संबन्ध जिससे प्रभु यीशु का आचरण प्रकट हो। मसीह में स्वतंत्रता की सच्ची प्राथमिकताएं यही है। खाना पीना नहीं।

(3) मसीह में हमारी स्वतंत्रता के अभ्यास। पवित्र आत्मा हमारी स्वतंत्रता को उचित अभ्यास देगा– पद 19–21, "इसलिये हम उन बातों में लगे रहें जिनसे मेल–मिलाप और एक दूसरे का सुधार हो। भोजन के लिये परमेश्वर का काम न बिगाड़। सब कुछ शुद्ध तो है, परन्तु उस मनुष्य के लिये बुरा है जिसको उसके भोजन से ठोकर लगती है। भला तो यह है कि तू न मांस खाए और न दाखरस पीए, न और कुछ ऐसा करे जिससे तेरा भाई ठोकर खाए।"

पौलुस कहता है कि दृढ़ विश्वासी भाई आगे निकल न जाए। चरवाहा झुण्ड को उसी अनुमान से लेकर चलता है जिसमें उसका दुर्बल मेम्ना भी साथ हो, बिछड़ न जाए। दृढ़ विश्वासी को अपने दुर्बल भाई के विवेक का ध्यान रखना है।

स्वतंत्रता के अभ्यास में स्वतंत्रता ही नहीं विश्वास का नियन्त्रण भी उचित होना है– पद 22–23, "तेरा जो विश्वास हो, उसे परमेश्वर के सामने अपने ही मन में रख। धन्य है वह जो उस बात में, जिसे वह ठीक समझता है, अपने आप को दोषी नहीं ठहराता। परन्तु जो सन्देह कर के खाता है वह दण्ड के योग्य ठहर चुका, क्योंकि वह विश्वास से नहीं खाता; और जो कुछ विश्वास से नहीं, वह पाप है।"

यदि हम विश्वासी शुद्ध विवेक से कुछ करें और दुर्बल भाई को ठोकर न लगे तो यह कैसे होगा? किसी का आनन्द दोगुणा होगा जब वह शुद्ध विवेक के साथ खाते–पीते अपने दुर्बल भाई का रखवाला भी हो।

अतः पौलुस के विवाद में दया भाव का सारांश है। आवश्यक बातों में एकता; आवश्यक बातों में स्वतंत्रता; सब बातों में दयाभाव!

ख) मसीह का स्वभाव (15:1–7)

दुर्बल भाई के साथ दया का व्यवहार करना अच्छा है। उसके साथ मसीह का स्वभाव बरतना और भी अच्छा है। मसीह का स्वभाव चाहता है कि (1) हम कठिन मार्ग पर चलें। इस मार्ग में तीन बातों पर ध्यान देना आवश्यक है। पहली बात, क्रूस के प्रदर्शन का मार्ग है– पद 1–2, "अतः हम बलवानों को चाहिए कि निर्बलों की निर्बलताओं को सहें, न कि अपने आप को प्रसन्न करें। हम में से हर एक अपने पड़ोसी को उसकी भलाई के लिये प्रसन्न करे कि उसकी उन्नति हो।"

मसीही जीवन में स्वार्थ का कोई स्थान नहीं है। पौलुस के कहने का अर्थ यह नहीं है कि हम दुर्बल भाई की हर एक बात को मानें। उसके कहने का अर्थ है कि हमारा आचरण उसके स्थाई लाभ के लिए हो। हम उसकी दुर्बलता के क्रूस को उठाने में उसकी सहायता करते हैं। दूसरी बात, यह मसीह के प्रदर्शन का मार्ग है–पद 3, "मसीह ने अपने आप को प्रसन्न नहीं किया, पर जैसा लिखा है' तेरे निन्दकों की निन्दा मुझ पर आ पड़ी।'" प्रभु यीशु परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए और मनुष्य की सेवा करने के लिए जी रहा था और मरा, तो केवल विश्वास में दृढ़ और विद्वान के लिए ही नहीं परन्तु दुर्बल और विश्वास में डांवाडोल के लिए भी। वह किसी का बोझ उठाने के लिए एक मील और चलता था। अपंग, अंधे, लकवे के मारे, बहरे आदि उसके अनुग्रह पात्र थे। वह पतरस के साथ धीरजवन्त था जब उसने उसका इन्कार किया और सामरिया पर आग बरसाने के सुझाव में याकूब और यूहन्ना को सहन किया। थोमा के सन्देह में उसने

शान्ति रखी और यहूदा के खूनी षडयन्त्र पर आपत्ति नहीं की। तो फिर, यीशु की तुलना में हमें अपने दुर्बल भाइयों के साथ कैसा धीरज धरना चाहिए जो कुछ भी नहीं हैं। मसीह का स्वभाव इस बोझ को हलका कर देता है।

यह मार्ग चरित्र निर्माण का मार्ग भी है। पौलुस ने भजन 69 से प्रभु यीशु का संदर्भ दिया है। वह कहता है कि पुराना नियम स्थाई मूल्य का है और उसका अध्ययन करना आवश्यक है। वह हमें मार्ग दिखाएगा चाहे वह मार्ग कठिन ही क्यों न हो। पद 4, "जितनी बातें पहले से लिखी गईं, वे हमारी ही शिक्षा के लिये लिखी गई हैं कि हम धीरज और पवित्रशास्त्र के प्रोत्साहन द्वारा आशा रखें।"

दुर्बल भाई की सहायता का यह कठिन मार्ग क्या हमारे लिए उबाऊ है? क्या हम अपने दुर्बल भाई और उनकी मान्यताओं के कारण अधीर हो जाते हैं? हमें धर्मशास्त्र में देखना है कि परमेश्वर ने कठिन स्थानों में कैसे किसी की सहायता की और शान्ति पाई। वह बदला नहीं, वह हमारी भी सहायता करेगा।

प्रभु का स्वभाव हमें कठिन मार्ग पर ही नहीं चलाता परन्तु वह (2) ऊंचा मार्ग भी है। इस ऊंचे मार्ग में पौलुस तीन बातें बताता है। इसमें अन्यों के प्रति सम्मान का भाव होता है जिससे कलीसिया में सदूभाव उत्पन्न होता है– पद 5, "धीरज और शान्ति का दाता परमेश्वर तुम्हें यह वरदान दे कि मसीह यीशु के अनुसार आपस में एक मन रहो।" शान्ति का दाता परमेश्वर! पतरस कहता है कि वह हमारे लिए धीरज धरे हुए है– 2 पतरस 3:9। स्थानीय कलीसिया में एकता के गुण परमेश्वर से प्राप्त होते हैं। शान्तिदाता परमेश्वर और उसकी शान्ति को जान लेने से कलीसिया में अनावश्यक बातों के कारण तनाव उत्पन्न नहीं होगा न कलह होगा। मसीह का स्वभाव व्याप्त होगा यह ऊंचा मार्ग अन्य विश्वासियों के साथ आनन्द मनाता है और कलीसिया में हर्ष का वातावरण बन जाता है– पद 6, "ताकि तुम एक मन और एक स्वर में हमारे प्रभु यीशु मसीह के पिता परमेश्वर की स्तुति करो।" यदि विश्वासी परमेश्वर के महिमान्वन पर ध्यान दें तो कलह और आलोचना का स्थान नहीं रहेगा।

ऊंचा मार्ग विश्वासियों को स्वीकार करता है और कलीसिया में आत्मिक अतिथि–सत्कार उत्पन्न होता है– पद 7, "जैसा मसीह ने परमेश्वर की महिमा के लिए तुम्हें ग्रहण किया, वैसे ही तुम भी एक दूसरे को ग्रहण करो।" इस प्रकार चर्चा विषय का चक्र पूरा होता है। पौलुस ने कहना आरंभ किया था कि परमेश्वर ने दुर्बल भाई को ग्रहण किया है (14:3) और अन्त में वह हमें स्मरण करवाता है कि प्रभु यीशु ने हमें ग्रहण किया है। हमारी सब कमी और चूक, हमारी दुर्बलता और दुष्टता, हमारी कुरुपता, चरित्रहीनता,

आत्मिक विकारों के साथ उसने हमें ग्रहण किया है तो हम किसी सच्चे उद्धारकर्ता, भाई जिसमें नाना प्रकार की समस्याएं हैं, के विरुद्ध कैसे द्वार बन्द कर सकते हैं? मसीह का स्वभावे कहता है कि हम सब भाइयों को प्रभु की मेज़ और सहभागिता की गरमाहट पहुंचाएं।

हमें दियुत्रिफेस के स्वभाव से सतर्क रहना है। यूहन्ना कहता है– 3 यूहन्ना 10, "इसलिये जब मैं आऊंगा तो उसके कामों की जो वह कर रहा है, सुधि दिलाऊंगा, कि वह हमारे विषय में बुरी–बुरी बातें बकता है; और इस पर भी सन्तोष न करके आप ही भाइयों को ग्रहण नहीं करता, और उन्हें जो ग्रहण करना चाहते हैं मना करता है और कलीसिया से निकाल देता है।"

चरनी में कुत्ते का स्वभाव। परमेश्वर की पुस्तक में अनन्तकाल के लिए कैसी छवि है यह! वह तो प्रेरित यूहन्ना को भी नहीं मानता था।

प्रेम का परिपक्व अंगीकार

15:8–13

I. प्रभु यीशु की सेवा हमें कैसे दर्शाई गई (15:8–9)

क) विशिष्ट यहूदी पक्ष (15:8)
ख) निश्चित अन्यजाति पक्ष (15:9)

II. प्रभु यीशु की भविष्यद्वाणी (15:9–12)

क) उसके द्वारा अन्यजातियों को आनन्द मिलेगा (15:9–11)
ख) अन्यजातियों पर शासन करेगा। (15:12)

III. हम में प्रभु यीशु की सेवा का संरक्षण (15:13)

क) मसीही जीवन में निराशा नहीं– हमें धन्य आशा प्राप्त है (15:13)
ख) मसीह जीवन में कुछ भी असहाय नहीं है– हमें असीम सहयोग प्राप्त है (15:13)

अनावश्यक बातों में दुर्बल भाई की बात रखना एक बात है परन्तु जब विश्वास और नैतिकता के महत्वपूर्ण विषय उठते हैं तब किसी के विचार स्वीकार करना एक और बात है। प्रभु यीशु के प्रचार के निमित्त पौलुस सब के लिए सब कुछ हो सकता है (1 कुरिन्थियों 9:20–23) परन्तु मूल सत्य के विषय वह बहुत हठी था। गलातियों 2:4–5, "यह उन झूठे भाइयों के कारण हुआ जो चोरी से घुस आए थे, कि उस स्वतंत्रता का जो मसीह यीशु में हमें मिली है, भेद लेकर हमें दास बनाएं। एक घड़ी भर उनके अधीन होना हम ने न माना, इसलिये कि सुसमाचार की सच्चाई तुम में बनी रहे।"

गलातियों 2:11–14 में वह पतरस का सामना करने में भी नहीं चूका जब पतरस दल बदल रहा था। प्रेम दया दिखाए परन्तु उसके परिपक्व अंगीकार अचूक रहें। मूल सत्य के साथ समझौता करना प्रेम का काम नहीं है।

सत्य को किसी भी कीमत पर थामे रहना है। अतः वह कलीसिया में अन्यजातियों के स्थान को मुख्य विषय बनाता है।

आरंभ में कलीसिया केवल यहूदी थी परन्तु कुरनेलियुस के मन फिराव के बाद (प्रेरितों के काम 10) शीघ्र ही अनेक अन्यजाति विश्वास में आए और केन्द्र यरूशलेम से अन्ताकिया, इफिसुस, कुरिन्थ और रोम हो गया। अब प्रश्न यह था कि अन्यजातियों को कलीसिया में ग्रहण कैसे करें कुछ का कहना था कि उन्हें पहले यहूदी बनना है तब कलीसिया में आना है। वे उन पर मूसा की व्यवस्था का बोझ लादना चाहते थे– खतना, सब्त का दिन तथा अन्य प्रथाएं। कुछ लोग उदार थे परन्तु उनका भी मानना था कि अन्यजातियों को कुछ तो यहूदी आभार मानना है।

पौलुस का कहना था कि मसीही विश्वास और यहूदी धर्म दो अलग अलग तन्त्र हैं। यही कारण था कि वह मन फिराव से पूर्व कलीसिया को सताता था। निःसन्देह मसीही जन उसी परमेश्वर और उसी धर्मशास्त्र को मानते थे परन्तु समानता यहीं तक थी। प्रभु यीशु का क्रूस उन्हें अलग कर रहा था। मसीही विश्वास यहूदी धर्म के फटे परदे पर पैबन्द नहीं है। मसीही विश्वास एक नया कपड़ा है। उसका विवाद था कि अन्यजाति केवल विश्वास के आधार पर कलीसिया की सहभागिता पाएं जिसमें यहूदी मान्यताओं का कोई हस्तक्षेप न हो।

पौलुस के लिए यह प्रेम का परिपक्व अंगीकार था। यहूदी और अन्यजातियों को जोड़ना प्रभु यीशु की सेवा थी (यूहन्ना 12:20–24)। स्वर्गारोहण से पूर्व उसने अन्यजातियों को जोड़ने का आदेश दिया था (लूका 24:46–47)। उसके अन्तिम वचन थे, "पृथ्वी की छोर तक" (प्रेरितों के काम 1:8)। उसके स्वर्गारोहण के बाद उसके वचन थे, कि अन्यजातियों को सहभागिता में लाया जाए (प्रेरितों के काम 9:6–15)। प्रेरितों के काम 10:13–14 में भी उसने यही कहा था। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रभु यीशु पवित्र आत्मा के द्वारा कह रहा था कि आरंभिक कलीसिया को अन्यजातियों में पहुंचाया जाए। अतः पौलुस अन्यजातियों को कलीसिया में जोड़ने के विषय को अपनी चर्चा का आधार बनाता है प्रेम के परिपक्व अंगीकार को शान्ति के कारण समझौते के अधीन नहीं लाना है।

I. प्रभु यीशु की सेवा हमें कैसे प्रस्तुत की गई है (15:8–9)

संसार में प्रभु यीशु की सेवा दोगुणा थी– "इस्राएली की खोई हुई भेड़ों में" और "अन्य भेड़ों में जो इस झुण्ड की नहीं हैं।" पौलुस इन दोनों सेवाओं को ध्यान में रखता है।

क) मसीही सेवा का विशिष्ट यहूदी पक्ष (15:8)

सबसे पहले प्रभु यीशु "अपनों में आया" और यद्यपि उसके "अपनों ने उसे ग्रहण नहीं किया" तथ्य बदला नहीं (यूहन्ना 1:11)। पद 8, "इसलिए मैं कहता हूं कि जो प्रतिज्ञाएं बापदादों को दी गई थीं उन्हें दृढ़ करने के लिए मसीह, परमेश्वर की सच्चाई का प्रमाण देने के लिए, खतना किए हुए लोगों का सेवक बना।" पौलुस यह भी कहता है कि परमेश्वर का व्यवहार पहले यहूदियों के साथ है (रोमियों 2:9–10)। अल्फोर्ड का कहना है, कि बाइबल में प्रभु यीशु "खतनावालों का सेवक" कहीं नहीं कहलाया है। वह कहते हैं कि पौलुस इस अभिव्यक्ति द्वारा अन्यजाति विश्वासियों के घमण्ड को तोड़कर उन्हें दीन बनाना चाहता है और परमेश्वर की वाचा की प्रजा को उनके प्रतिष्ठित पद पर लाना चाहता है। परन्तु यह तो सच है कि प्रभु यीशु की मुख्य चिन्ता इस्राएल की खोई हुई भेड़ों के लिए थी (मत्ती 15:24)। वह इस्राएल के बापदादों की प्रतिज्ञा पूर्ति के निमित्त आया था। परमेश्वर ने उन्हें मुक्तिदाता देने की अनेक महान प्रतिज्ञाएं की थीं।

ख) मसीह की सेवा का निश्चित अन्यजाति पक्ष (15:9)

यद्यपि यहूदियों का सौभाग्य था कि प्रभु यीशु पहले उनमें आया, उन्हें प्रभु यीशु पर एकल अधिकार नहीं है, उनका यह **वर्चस्व** नहीं है। पौलुस कहता है कि प्रभु यीशु के आने का कारण था कि "अन्यजातीय भी दया के कारण परमेश्वर की स्तुति करें।" यह सच है कि परमेश्वर ने अन्यजातियों से वाचा नहीं बांधी, परन्तु मसीह द्वारा उनके लिए आशीषों की चर्चा पुराने नियम में की गई है। उनके साथ परमेश्वर का व्यवहार विशेष दया के प्रदर्शन हेतु है। आज कलीसिया में अन्यजातियां यहूदियों से कहीं अधिक हैं जो परमेश्वर की दया का प्रमाण हैं, मसीह अन्यजाति सेवा की महिमा है। मसीही की सेवा अन्यजाति और यहूदी का परमेश्वर द्वारा निष्पक्ष ग्रहण किया जाना है।

II. प्रभु यीशु की भविष्यद्वाणी (15:9–12)

अन्यजातियों का आशीषों में जोड़ा जाना पुराने नियम की भविष्यद्वाणी का एक बड़ा विषय है। पौलुस संदर्भ के साथ अपना विवाद स्पष्ट करता है।

क) अन्यजाति मसीह द्वारा आनन्द पाएंगी (15:9–11)

भजन संहिता 18:49; व्यवस्थाविवरण 32:43; भजन संहिता 117:1। वह यशायाह का भी संदर्भ देता है अर्थात इब्रानी धर्मशास्त्र के तीनों भाग इसकी पुष्टि करते हैं– व्यवस्थाविवरण, भविष्यद्वक्ता और भजन संहिता। पद 9–11, "और अन्यजातीय भी दया के कारण परमेश्वर की स्तुति करें; जैसा लिखा है, 'इसलिये मैं जाति–जाति में तेरा धन्यवाद करूंगा, और तेरे नाम के भजन गाऊंगा।' फिर कहा है, 'हे जाति–जाति के सब लोगो, उसकी प्रजा के साथ आनन्द करो।' और फिर, 'हे जाति–जाति के सब लोगो, प्रभु की स्तुति करो; और हे राज्य राज्य के सब लोगो, उसे सराहो।'"

पहले संदर्भ में प्रभु स्वयं अन्यजातियों में परमेश्वर की स्तुति करता है। दूसरे में अन्यजातियां यहूदियों के साथ परमेश्वर की स्तुति करती हैं। तीसरे में अन्यजातियां अकेले ही उसकी स्तुति करती हैं।

ख) मसीह अन्यजातियों का शासक होगा (15:12)

अनुग्रह के इस युग के बाद पौलुस दूर भविष्य, प्रभु राज की ओर देखता है– पद 12, "और फिर यशायाह कहता है, 'यिशै की एक जड़ प्रगट होगी, और अन्यजातियों का हाकिम होने के लिये एक उठेगा, उस पर अन्यजातियां आशा रखेंगी।"

आज ही नहीं प्रभु राज में भी अन्यजाति परमेश्वर की स्तुति करेंगी। यह प्रेम का परिपक्व अंगीकार है। अन्यजातियों का तिरस्कार दुर्बल या दृढ़ भाई के व्यक्तिगत निर्णय पर नहीं है।

III. हमारे लिये प्रभु यीशु की सेवा का संरक्षण (15:13)

मसीही प्रेम का नियम दुर्बल की ओर दयाभाव की मांग करता है। दूसरी ओर परिपक्व अंगीकार थामना आवश्यक है।

पौलुस की प्रार्थना है कि मतभेद के उपरान्त भी अन्यजाति और यहूदी विश्वासी एकता में बने रहें। पवित्र आत्मा विश्वासियों के मन में प्रभु यीशु की सेवा को सक्रिय बनाता है– पद 13, "परमेश्वर जो आशा का दाता है तुम्हें विश्वास करने में सब प्रकार के आनन्द और शान्ति से परिपूर्ण करे, कि पवित्र आत्मा की सामर्थ्य से तुम्हारी आशा बढ़ती जाए।"

मसीही जीवन में निराशा नहीं धन्य आशा निहित है– आनन्द, शान्ति, आशा! आपसी प्रेम, निर्वाह और मान सम्मान में बांधने का कैसा सामर्थीवर्धन है– पद 13, "पवित्र आत्मा की सामर्थ्य से" दूसरे शब्दों में (2) विश्वासी असहाय नहीं है। हमारे पास असीमित सहायता है।

कलीसिया में अलग अलग पृष्ठिभूमि के लोग हैं इसलिए एकता बनाए रखना आसान नहीं है– विभिन्न जातियां, धर्म, समाज, शिक्षा वर्ग, आयु, मानसिकता, योग्यताएं, मनोवेग, विचार, स्वभाव आदि को परस्पर निर्वाह करना कठिन होता है। परन्तु हमें विजातिय करनेवाली बातों से जोड़नेवाली बातें कहीं अधिक शक्तिशाली हैं– मसीह का लहू, विश्वास, एक बपतिस्मा, एक प्रभु, एक पिता परमेश्वर, एक आशा। प्रभु सर्वोपरि, सबमें और सबके द्वारा है। इफिसियों 4:4–7, "एक ही देह है, और एक ही आत्मा; जैसे तुम्हें जो बुलाए गए थे अपने बुलाए जाने से एक ही आशा है। एक ही प्रभु है, एक ही विश्वास, एक ही बपतिस्मा, और सब का एक ही परमेश्वर और पिता है, जो सब के ऊपर और सब के मध्य में और सब में है। पर हम में से हर एक को मसीह के दान के परिमाण के अनुसार अनुग्रह मिला है।"

अब्राहम ने लूत से कहा, "अन्ततः हम भाई हैं" (उत्पत्ति 13:8)। जब उसके और लूत के चरवाहों में मुठभेड़ होने लगा। छोटी– छोटी बातों पर उसने ध्यान नहीं दिया। उसने अपने विश्वास को निःस्वार्थ एवं पूर्णरूपेण थाम रखा था।

एक जहाज़ पर दो यात्री थे। एक दिन वे आमने सामने आए। दोनों के हाथों में बाइबलें थीं परन्तु वे केवल मुस्कुरा सकते थे। क्योंकि वे एक दूसरे की भाषा नहीं जानते थे। तभी एक ने कहा हल्लिलूयाह! दूसरे ने कहा आमीन!

प्रेम की मिशनरी चिन्ता

15:14–33

I. भाई के लिए पौलुस की प्रशंसा (15:14)

क) उनके जीवन की भलाई
ख) उनकी सत्य की पकड़
ग) उनमें उपदेश का वरदान

II. पौलुस भाइयों से क्या कहता है? (15:15–29)

क) उसकी सेवा का दृष्टिकोण (15:15–21)
1. उसे सौंपी गई धरोहर का उत्तरदायित्व (15:15–21)
2. उसकी उपलब्धियों का सत्य (15:17–21)
(अ) वह अपनी सेवा की निर्विवाद सीमा पहचानता है (15:17–18)
(ब) वह अपनी सेवा तर्क समझाता है (15:19–21)
i. परमेश्वर पर पूर्ण निर्भरता (15:19)
ii. लक्ष्य की स्पष्ट परिभाषा (15:20–21)

ख) मिशन की अविनाशी संकल्पना (15:22–29)

1. रोम देखने की इच्छा (15:22–23)
2. रोम देखने का उसका संकल्प (15:24–29)
   (अ) उसकी योजना में यात्रा (15:24)
   (ब) जब यह यात्रा उसकी योजना में आई (15:25–28)
      i. पहले पूर्व की यात्रा (15:25–27)
      ii. पश्चिम की यात्रा का विचार (15:28)

स) यह यात्रा उसकी योजना के अनुसार क्यों (15:29)

III. पौलुस भाइयों को क्या सौंपता है (15:30–33)

क) युद्ध में भागीदारी (15:30–32)
   1. जानबूझकर प्रार्थना करें (15:30)
   2. बुद्धिमानी की प्रार्थना करें (15:31–32)

ख) आशीषों में भागीदारी (15:33)

रोमियों की पत्री के अन्तिम दो पत्र वैयक्तिक हैं परन्तु निर्देशों से पूर्ण हैं। अध्याय 15 बाइबल का एक महान मिशनरी गद्यांश है। इसमें पौलुस कुछ मुख्य युक्तियां बताता है जिनके कारण वह सबसे महान मिशनरी/प्रचारक बना।

I. भाई के लिए पौलुस की प्रशंसा (15:14)

पौलुस को स्मरण था कि रोम की कलीसिया उसने स्थापित नहीं की थी। अतः अपने प्रचार की तत्वविद्या में जाने से पूर्व वह रोम के विश्वासियों को उनकी उपलब्धियों के लिए बधाई देता है।

क) उनके जीवन की भलाई (15:14)

भला मनुष्य होने का अर्थ है, सबसे अच्छा मनुष्य होना। पौलुस रोम के विश्वासियों से कह चुका है कि किसी भले मनुष्य के लिए कोई मरने का साहस कर सकता है (5:7)। अब वह कहता है –पद 14, "मैं स्वयं तुम्हारे विषय में निश्चित जानता हूं कि तुम भी आप ही भलाई से भरे और ईश्वरीय ज्ञान से भरपूर हो।" कैसी प्रशंसा! यह बातों की भलाई नहीं थी। बुराई से बचने की भलाई नहीं थी। यह दूसरों की सहायता की व्यवहारिक भलाई थी– दुर्बल भाइयों का बोझ उठाने की भलाई।

ख) उनकी सत्य की पकड़

रोम के विश्वासी यत्नशील विद्यार्थी थे। पौलुस कहता है कि वे ईश्वरीय ज्ञान से भरे हुए थे। अनुभव एवं अध्ययन से प्राप्त ज्ञान। उन्हें यह ज्ञान कहां से प्राप्त हुआ? संभव है कि प्रिस्किल्ला और अक्विला ने उन्हें शिक्षा दी जैसे अपुल्लोस को (प्रेरितों के काम 18:26; रोमियों 16:23)। रोम एक मुख्य स्थान था। अतः उन्हें प्रेरितों की शिक्षा का ज्ञान होना आवश्यक था जैसे यरूशलेम (प्रेरितों के काम 2:10, 42) और विजातिय नगरों में मुख्य मसीही केन्द्रों में सिखाया जाता था। सब विश्वासियों को प्रेरितों की शिक्षा को ज्ञान होना आवश्यक है।

ग) उनके उपदेश के वरदान (15:14)

रोम में ज्ञानवान विश्वासी थे। अतः पौलुस कहता है, पद 14, "तुम भी आप ही भलाई से भरे और ईश्वरीय ज्ञान से भरपूर हो, और एक दूसरे को चिता सकते हो।" शिथिलता आना स्वाभाविक है इसलिए उपदेश और प्रबोधन की आवश्यकता होती है। मसीही जीवन एक दौड़ है। एक युद्ध है। इसमें विश्राम का स्थान नहीं है। इसमें अनुशासन, आगे बढ़ना और संकल्प आवश्यक है जिसके लिए उपदेश चाहिए।

II. पौलुस भाइयों से क्या कहता है (15:15–29)

अब पौलुस उन्हें अपने प्रचार का तत्वज्ञान देता है। पौलुस के समान यदि कोई वैश्विक प्रचार पर विचार प्रकट कर पाए तो बिरला ही होगा। निम्न पद वैश्विक प्रचार का हृदय है।

क) पौलुस का प्रचार का दृष्टिकोण (15:15–21)

परमेश्वर के समक्ष वह अपने दो उत्तरदायित्वों का उल्लेख करता है। (1) उसे सौंपे गए काम का उत्तरदायित्व। यह किसी भी प्रचार कार्य का पहला पहलू है– प्रचारक के वरदान, प्रभाव क्षेत्र और अवसरों का लेखा देना। पद 15–16, "तौभी मैं ने कहीं कहीं याद दिलाने के लिये तुम्हें जो बहुत साहस करके लिखा। यह उस अनुग्रह के कारण हुआ जो परमेश्वर ने मुझे दिया है, कि मैं अन्यजातियों के लिये मसीह यीशु का सेवक होकर परमेश्वर के सुसमाचार की सेवा याजक के समान करूं, जिससे अन्यजातियों का मानो चढ़ाया जाना, पवित्र आत्मा से पवित्र बनकर ग्रहण किया जाए।"

पौलुस अन्यजातियों के लिए वैसे ही था जैसे मूसा इस्राएल के लिए परन्तु उसे उनके लिए बलिदान चढ़ाने की आवश्यकता नहीं थी। उसके बलिदान तो स्वयं अन्यजाति थे जिन्हें पवित्र आत्मा ने पवित्र और शुद्ध कर दिया था। वह परमेश्वर की बुलाहट के लिए पूरे मन से समर्पित था। उसका आनन्द अन्यजातियों का उद्धार था। वह उन्हें परमेश्वर के लिए जीवित बलिदान देखना चाहता था।

(2) उसकी उपलब्धियों की सत्यता। वह घमण्ड नहीं कर रहा था। गलातियों 6:14 में वह कहता है कि प्रभु यीशु के क्रूस को छोड़ मैं किसी और बात की बड़ाई न करूं। अतः वह अपने प्रचार के फलों की चर्चा करता है।

वह स्वीकार करता है कि उसकी सेवा की कुछ निर्विवाद सीमाएं भी थीं– पद 17–18, "इसलिये उन बातों के विषय में जो परमेश्वर से सम्बन्ध रखती हैं, मैं मसीह यीशु मं बड़ाई कर सकता हूं। क्योंकि उन बातों को छोड़ मुझे और किसी बात के विषय में कहने का साहस नहीं, जो मसीह ने अन्यजातियों की अधीनता के लिये वचन, और कर्म..."

आज के प्रचारक पौलुस से सीखें। वह जानता था कि अन्य प्रचारक भी सेवा में हैं, वह किसी के काम को अपनी सेवा से नहीं जोड़ता है। उसकी गवाही में उसकी कलीसियाओं की सूची है।

वह अपनी सेवा का आधार तर्क भी प्रस्तुत करता है – परमेश्वर पर पूर्ण निर्भरता और स्पष्ट लक्ष्य– पद 19, "और चिन्हों, और अद्‌भुत कामों की सामर्थ्य से, और पवित्र आत्मा की सामर्थ्य से मेरे ही द्वारा किए; यहां तक कि मैं ने यरूशलेम से लेकर चारों ओर इल्लुरिकुम तक मसीह के सुसमाचार का पूरा पूरा प्रचार किया।"

परमेश्वर पर निर्भर रहने के कारण उसमें सामर्थ्य था। यहां तक कि एथेंस में जहां लोग उसका ठट्ठा करते थे कुछ ने प्रभु यीशु को ग्रहण किया। उसे निराशा भी हुई, बैरियों ने कष्ट भी दिया परन्तु वह विजयी रहा और आत्माएं बचाई गई।

परमेश्वर पर निर्भर होने पर भी वह अपने प्रचारक उद्देश्यों को स्पष्ट समझाता था– पद 20–21, "पर मेरे मन की उमंग यह है कि जहां जहां मसीह का नाम नहीं लिया गया, वहीं सुसमाचार सुनाऊं ऐसा न हो कि दूसरे की नींव पर घर बनाऊं। परन्तु जैसा लिखा है वैसा ही हो, 'जिन्हें उसका सुसमाचार नहीं पहुंचा, वे ही देखेंगे और जिन्होंने नहीं सुना वे ही समझेंगे।"

लक्ष्य साधने पर उसने स्पष्ट योजना तैयार की। उसका उद्देश्य था जहां सुसमाचार नहीं पहुंचा है वहां प्रचार करे। किसी और के प्रचार में क्यों हस्तक्षेप करे। उसका प्रचार और प्रेख्य का स्रोत यही था जिसका संदर्भ उसने यशायाह 52:15 से दिया है।

ख) मिशन की अविनाशी संकल्पना (15:22–29)

पौलुस विश्राम नहीं करता था क्योंकि समय कम था और काम बहुत अधिक, सेवक बहुत कम, विषय अति गंभीर। अपने दृष्टिकोण में उसने संकल्पना जोड़ दी। उसकी योजना में रोम में रहना नहीं केवल वहां पहुंचना था।

(1) रोम जाने की उसकी मनोकामना। पत्री की प्रस्तावना में वह कह चुका है परन्तु यहां फिर कहता है– पद 22, "इसीलिये मैं तुम्हारे पास आने से बार बार रुका रहा।" पवित्र आत्मा ने उसे बार–बार रोका परन्तु अन्त में उसे जाने दिया कि उसकी बेड़ियां प्रभु की गवाही दें कि वह उद्धार प्राप्त और उद्धार से रहित सबके लिए चुनौती ठहरे– पद 23, "परन्तु अब उन देशों में मेरे कार्य के लिये और जगह नहीं रही, और बहुत वर्षों से मुझे तुम्हारे पास आने की लालसा है।"

(2) रोम देखने का उसका संकल्प। इस संबन्ध में वह तीन बातें कहता हैः पहली पद 24, "इसलिये जब मैं स्पेन को जाऊंगा तो तुम्हारे पास होता हुआ जाऊंगा, क्योंकि मुझे आशा है कि उस यात्रा में तुम से भेंट होगी, और जब तुम्हारी संगति से मेरा जी कुछ भर जाए तो तुम मुझे कुछ दूर आगे पहुंचा देना।"

वह वास्तव में स्पेन जाना चाहता था जिसके लिए रोम एक अति उत्तम आधार था। यूरोप का पश्चिमी क्षेत्र वहां से निकट था। निःसन्देह वह विश्वासियों के साथ सहभागिता करना चाहता था।

पौलुस अपनी योजना में इसका उपयुक्त समय भी बताता है। वह पहले पूर्व में गया तदोपरान्त पश्चिम में। पद 25–28, "परन्तु अभी तो मैं पवित्र लोगों की सेवा करने के लिये यरूशलेम को जाता हूं। क्योंकि मकिदुनिया और अखया के लोगों को यह अच्छा लगा कि यरूशलेम के पवित्र लोगों में निर्धनों के लिये कुछ चन्दा करें। उन्हें तो अच्छा लगा, परन्तु वे उनके कर्ज़दार भी हैं, क्योंकि यदि अन्यजातीय उनकी आत्मिक बातों में भागी हुए, तो उन्हें भी उचित है कि शारीरिक बातों में उनकी सेवा करें। इसलिये मैं यह काम पूरा करके और उनको यह चन्दा सौंपकर तुम्हारे पास होता हुआ स्पेन को जाऊंगा।"

पौलुस का विचार दान देने में आज के विचार से विपरीत है। वह कहता है कि नई कलीसियाएं अपनी माता कलीसिया की सुधि ले और दान दे।

रोमियों की पत्री लिखने के बाद पौलुस कुरिन्थ से रवाना हुआ उसके साथ अन्य विश्वासी थे जो यरूशलेम की कलीसिया के लिए दान ले जा रहे थे। वहां फसह मनाने के बाद वह रोम होकर स्पेन जाना चाहता था।

अब वह बताता है कि उसकी रोम यात्रा उसकी योजना के अनुकूल क्यों है– पद 29, "और मैं जानता हूं कि जब मैं तुम्हारे पास आऊंगा, तो मसीह की पूरी आशीष के साथ आऊंगा।"

वह रोम की कलीसिया के जीवन, संगति और गवाही में घुल मिल जाना चाहता था। परमेश्वर की इच्छा पूर्ति और विजय का कैसा विश्वास।

पौलुस का दृष्टिकोण एवं संकल्पना थी खोए हुओं में प्रचार, नये क्षेत्रों की खोज, मुक्तियुक्त योजना बनाना, आत्मा की अगुआई खोजना, माता कलीसिया के वित्तिय सहयोग से दूर रहना, देने का आनन्द प्राप्त करना सिखाना और सबसे बड़ी बात आशीष का स्रोत बने रहना। यह पौलुस की प्रचार नीति थी। इस कारण वह संपूर्ण संसार में उथल पुथल मचा पाया था।

III. पौलुस अपने भाइयों को क्या सौंपता है (15:30–33)

अन्त करने से पूर्व पौलुस रोम के विश्वासियों को बताना चाहता था कि वे उसके साथ संसार में प्रचार के निमित्त उसके साथ सहभागी कैसे हो सकते हैं। वे सेवा में दुगनी सहभागिता कर सकते हैं।

क) युद्ध में भागीदारी (15:30–32)

मसीही विश्वास की बुद्धिमानी का एक भाग है कि कोई भी विश्वासी प्रार्थना द्वारा युद्ध में कहीं भी भागीदारी कर सकता है और पृथ्वी की छोर वरन् स्वर्ग में प्रभाव उत्पन्न कर सकता है। प्रार्थना हर जगह पहुंच जाती है। वह जंगल के संकट, झुग्गियों की महामारी, गहरे जल के खतरे आदि सब रोक सकता है। वह प्रचारक को अलौकिक शक्ति प्रदान कर सकता है, निराशा से उठा सकता है, आत्मिक संसार के बैरी से बचा सकता है और परमेश्वर में उसकी भुजा को बल प्रदान कर सकता है। आत्मा में प्रार्थना करने के द्वारा अभ्यासी विश्वासी समय और स्थान को पार करके युद्ध में भाग ले सकता है।

पौलुस रोम के विश्वासियों से कहता है कि वे उसके लिए प्रार्थना में लौलीन रहें– पद 30, "हे भाइयो, हमारे प्रभु यीशु मसीह के और पवित्र आत्मा का स्मरण दिला कर मैं तुम से विनती करता हूं, कि मेरे लिये परमेश्वर से प्रार्थना करने में मेरे साथ मिलकर लौलीन रहो।"

प्रार्थना हमारा स्वेच्छिक व्यायाम होना है। प्रार्थना का उत्तर गुरुत्वकर्षण बल के समान एक सर्वव्यापी तथ्य है।

(2) वे बुद्धिमानी से उसके लिए प्रार्थना करें– पद 31–32, "कि मैं यहूदिया के अविश्वासियों से बचा रहूं, और मेरी वह सेवा जो यरूशलेम के लिये है, पवित्र लोगों को भाए; और मैं परमेश्वर की इच्छा से तुम्हारे साथ विश्राम पाऊं।"

उसके तीन निवेदन थे– उसकी सुरक्षा, उसकी सेवा, उसके कदम।

पौलुस यरूशलेम के भावी संकट को जानता था। वह जानता था कि यरूशलेम के यहूदी उसके खून के प्यासे हैं। उसे मसीही यहूदियों पर भी विश्वास नहीं था। परन्तु परमेश्वर उसे बन्दी बनवाकर रोम लाया। रोम के विश्वासी पौलुस को वहां देखकर आनन्द से भर गए (प्रेरितों के काम 28:14–15)।

ख) आशीषों में भागीदारी (15:33)

युद्ध के साथ आशीषों के वारिस होंगे। पौलुस ने पत्री के अन्त में लिखा। पद 33, "शान्ति का परमेश्वर तुम सबके साथ रहे। आमीन।" उसने कलीसिया पर आशीष फूंकी। वह यरूशलेम जा रहा था जहां खतरे, लड़ाई, घृणा और बन्दी बनाया जाना होगा। उसकी यात्रा उसके लिए शान्ति पूर्ण थी क्योंकि वह शान्तिदाता परमेश्वर को जानता था। यह सबसे बड़ी आशीष है आंधी में शान्ति का बोध जिसकी प्रतिज्ञा पौलुस ने रोम के विश्वासियों से की थी।

शान्ति सिद्ध शान्ति अज्ञात भविष्य?
यीशु को हम जानते हैं, वह सिंहासन पर बैठा है।

प्रेम के अनेक संपर्क

I. पौलुस अपने भाइयों के लिए कैसे याचना करता है (16:1–2)

क) फीबे को स्वीकार करें (16:1–2)
ख) फीबे की सहायता करें (16:2)

II. पौलुस रोम के भाइयों को नमस्कार कहता है (16:3–16)

क) प्रेम की विशिष्टता के कारण (16:3–15)

1. प्रिस्किल्ला और अक्विला
2. इपैनितुस
3. मरियम
4. अन्द्रुनीकुस और युनीयास
5. अम्पलियातुस
6. उरबानुस
7. इस्तखुस

8. अपिल्लेस
9. अरिस्तुबुलुस
10. हेरोदियोन
11. नरकिस्सुस के घराने
12. त्रूफेना और त्रूफोसा
13. पिरसिस
14. रूफुस और उसकी माता
15. असुंक्रितुस
16. फिलगोन
17. हिर्मेस
18. पत्रुबास
19. हिर्मास और साथ के भाई
20. फिलुलुगुस
21. यूलिया
22. नेर्युस और उसकी बहिन
23. उलुम्पास और उसके साथ के सब पवित्र लोग

ख) प्रेम प्रदर्शन के साथ (16:16)

पौलुस के बहुत मित्र थे। उसका प्रेम उनमें गहरी रूचि लेने को उसे विवश करता था। उसका हर एक संपर्क एक अच्छा मित्र था। बिना संचार माध्यमों के पौलुस संपूर्ण विश्वव्यापी कलीसिया से संपर्क करता था। शायद कुरिन्थ के बन्दरगाह पर आनेवालें लोगों से पूछा करे। रोम से आनेवाले से कि वह पाल बनाने वाले अक्विला को जानता है। पूर्व के व्यापारियों से कि क्या वे इफिसुस से हैं। क्या वे सीरिया के अन्ताकिया गए थे? त्रोआस? पिसिदिया? यदि कोई विश्वासी आता तो पौलुस तुरन्त फिलिप्पी, बिरीया, थिस्सलुनीके के कलीसियाओं का समाचार पूछता। यरूशलेम, सिंकदरिया, सामरिया आदि।

I. पौलुस की रोम के भाइयों से याचना (16:1–2)

कुरिन्थ के बन्दरगाह की कलीसिया की फीबे जो रोम जा रही थी।

क) वे फीबे को स्वीकार करें

यह एक अच्छा अभ्यास है। आज भी बाहर जानेवाले विश्वासियों को कलीसिया का पास्टर पत्र लिखकर देता है कि जहां वे जा रहे हैं वहां की कलीसिया से संपर्क करें (2 कुरिन्थियों 3:1)। और वहां की कलीसिया उनका स्वागत करे।

पद 1–2, "मैं तुम से फीबे के लिये जो हमारी बहिन और किंखिया की कलीसिया की सेविका है, विनती करता हूं, कि तुम जैसा कि पवित्र लोगों को चाहिए, उसे प्रभु में ग्रहण करो; और जिस किसी बात में उसको तुम्हारी आवश्यकता हो, उसकी सहायता करो, क्योंकि वह भी बहुतों की वरन् मेरी भी उपकार करनेवाली रही है।"

पद 2 से ऐसा प्रतीत होता है कि वह किंखिया में परदेशियों की सेवा करती थी। इसका नाम चिरस्मरणीय रहेगा कि वह पौलुस का पत्र लेकर रोम गई थी।

ख) फीबे की सहायता करें (16:2)

संसार के विभिन्न भागों से आनेवाले विश्वासियों की सेवा करना स्थानीय विश्वासियों के लिए एक महान सेवा है। इसका महत्व यात्रा करनेवाले जानते हैं– पद 2, "उसे प्रभु में ग्रहण करो; और जिस किसी बात में उसको तुम्हारी आवश्यकता हो, उसकी सहायता करो।" यहां "सहायता" शब्द का अर्थ वही है जो पौलुस 2 तीमुथियुस 4:17 में कहता है कि प्रभु मेरा "सहायक" रहा है। विश्वासियों से बढ़कर सहभागिता, मित्रता और सहायता अन्य कोई नहीं जानता है।

II. रोम के भाइयों को नमस्कार (16:3–16)

इस भाग में 35 लोगों के नाम हैं। लिखते समय 8 पुरुष और एक स्त्री पौलुस के साथ थे। ये लोग पौलुस के अतिप्रिय जन थे जिन्हें पौलुस की कलम ने चिरस्मरणीय बना दिया। वे विश्व की राजधानी में सुसमाचार का झंडा उठाए हुए थे। पौलुस उन्हें हार्दिक नमस्कार कहता है।

क) प्रेम की विशिष्टता के कारण नमस्कार (16:3–15)

पौलुस सब को एक साथ नमस्कार नहीं कहता है। प्रभु यीशु की भेड़ को उसके नाम से पुकारता है (यूहन्ना 10:3)। एक पास्टर का सच्चा मन उसमें है।

प्रिस्किल्ला और अक्विला (प्रेरितों के काम 18:18; 2 तीमुथियुस 4:19)। उनके घर में आराधना होती थी। प्रिस्किल्ला शायद आत्मिक बातों में आगे थी। अक्विला भी पौलुस के समान तम्बू बनाता था। पौलुस उनके साथ कुरिन्थ में रहा था। पौलुस की अनुपस्थिति में उन्होंने लोगों को तैयार किया और प्रचारकों को भी परमेश्वर का मार्ग उत्तम रीति से सुझाया जैसे अपुल्लोस को। इस समय वे रोम में हैं और शायद कुछ समय बाद इफिसुस चले गए थे क्योंकि दूसरी बार बन्दी बनाए जाने पर वह उन्हें नमस्कार कहता है (प्रेरितों के काम 18; 1 कुरिन्थियों 16:19; 2 तीमुथियुस 4:19)। पद 3–5, "प्रिस्का और अक्विला को जो मसीह यीशु में मेरे सहकर्मी हैं, नमस्कार। उन्होंने मेरे प्राण के लिये अपना ही जीवन जोखिम में डाल दिया था; और केवल मैं ही नहीं, वरन् अन्यजातियों की सारी कलीसियाएं भी उनका धन्यवाद करती हैं। उस कलीसिया को भी नमस्कार जो उनके घर में है। मेरे प्रिय इपैनितुस को, जो मसीह के लिये आसिया का पहला फल है, नमस्कार।" उन्होंने पौलुस के कारण अपनी जान की जोखिम कब उठाई इसका निश्चित ज्ञान नहीं है परन्तु सब कलीसियाओं में समाचार पहुंचाने तक बहुत समय हो गया होगा। इपैनितुस– पद 5, "मेरे प्रिय इपैनितुस को जो मसीह के लिये आसिया का पहला फल है।" वह पौलुस द्वारा एशिया का प्रथम विश्वासी था। अतः पौलुस का अतिप्रिय था। इफिसुस में पौलुस ने महान जागृति देखी जो स्मुरना, पिरगमुन, थूआतीरा, सरदीस, फिलदिलफिया, लौदीकिया, कुलुस्से, हीरापुलिस, तथा अन्य नगरों में पहंची। परन्तु वह अपने प्रथम विश्वासी को नहीं भूला। इनमें से कोई नाम धर्मशास्त्र में नहीं आया है, रूफुस को छोड़कर। मरियम जो भी थी, वह सेवा करने में परिश्रमी थी और थकती नहीं थी। उसकी बहनें आज भी हैं।

पद 7, "अन्द्रुनीकुस और यूनियास... मेरे साथ कैद हुए थे... मुझ से पहले मसीह हुए थे।" यह एक महान बात है कि वे पौलुस से पहले मसीह को ग्रहण कर चुके थे और पौलुस के लिए परमेश्वर के अनुग्रह की याचना करते थे कि उसकी प्रतिभाएं प्रभु को समर्पित हों। आप उनके आनन्द और परमेश्वर के प्रति आभारव्यक्ति की कल्पना भी कर सकते हैं जब वे पौलुस का प्रचार, कार्य और पत्रलेखन देख रहे थे। अति संभव है कि पौलुस को उसके कुटुम्ब ने त्याग दिया था। ऐसे में दो कुटुम्बियों का साथ वास्तव में महान शान्ति का कारण रहा होगा। उन्हें प्रेरितों से बहुत सम्मान प्राप्त था।

एक दिन वे प्रभु से पुरुस्कार पाएंगे। तब तक हम केवल उन्हें केवल पौलुस के साथ कैद किए गए ही मानेंगे। "अम्पलियातुस... प्रभु में मेरा प्रिय... उरबानुस... हमारा सहकर्मी, और मेरे प्रिय इस्तखुस को नमस्कार।" इनका नाम केवल पौलुस की कलम से ही प्रकट होता है। परन्तु प्रभु के ये प्रिय एक दिन प्रभु की महिमा अनन्तकाल के लिए सब पर प्रकट करते देखे जाएंगे।

"अपिल्लेस... मसीह में खरा।" वह खरा शब्द याकूब 1:12 में परीक्षा में जय पाने के लिए है, "धन्य है वह मनुष्य जो परीक्षा में स्थिर रहता है, क्योंकि वह खरा निकलकर जीवन का वह मुकुट पाएगा जिसकी प्रतिज्ञा प्रभु ने अपने प्रेम करनेवालों से की है।" रोमियों 14:17–18 में पौलुस इसी शब्द को "ग्रहणयोग्य" के अभिप्राय में काम में लेता है।

1 कुरिन्थियों 11:19 में "जो लोग तुम में खरे हैं" अर्थात गुटबन्दी से निर्दोष। रोमियों 16:17–18 भी झूठे शिक्षकों का उल्लेख करता है। 2 कुरिन्थियों 10:18 में "ग्रहण" का यही अभिप्राय है। 2 तीमुथियुस 2:15 में "ग्रहणयोग्य" का यही अर्थ है।

इसी प्रकार अपिल्लेस शायद विश्वासियों में ग्रहणयोग्य था।

पद 10–11, "अपिल्लेस को जो मसीह में खरा निकला, नमस्कार। अरिस्तुबुलुस के घराने को नमस्कार। मेरे कुटुम्बी हेरोदियोन को नमस्कार। नरकिस्सुस के घराने को जो लोग प्रभु में हैं, उनको नमस्कार।" "घराना" शब्द मूल लेखों में नहीं है अर्थात ये लोग अरिस्तुबुलुस और नरकिस्सुस के दास थे और आवश्यक नहीं कि ये दो पुरुष विश्वासी थे।

"त्रूफेना और त्रूफोसा... प्रिय पिरसिस।" त्रूफेना और त्रूफोसा बहने थीं और पिरसिस मसीह में अधिक आयु की बहन। पौलुस किसी भी प्रकार की बुराई नहीं चाहता था, अतः पिरसिस को वह मेरी प्रिय नहीं कहता है।

"रूफुस... और उसकी माता।" यह रूफुस शायद शमौन कुरेनी का पुत्र था। शमौन कुरेनी ने प्रभु यीशु का क्रूस उठाया था (मरकुस 15:21; प्रेरितों के काम 13:1)। पौलुस उसकी माता को "मेरी माता" कहता है। इससे संकेत मिलता है कि पौलुस अन्ताकिया में उनके घर ठहरा था। प्रभु ने प्रतिज्ञा की थी– मरकुस

10:29–30, "यीशु ने कहा, 'मैं तुम से सच कहता हूं कि ऐसा कोई नहीं, जिसने मेरे और सुसमाचार के लिये घर या भाइयों या बहिनों या माता या पिता या बाल–बच्चों या खेतों को छोड़ दिया हो, और अब इस समय सौ गुणा न पाए, घरों और भाइयों और बहिनों और माताओं और बाल–बच्चों और खेतों को, पर सताव के साथ और परलोक में अनन्त जीवन।"

"असुंक्रितुस और फिलगोन और हिर्मेस और पत्रुबास और हिर्मास और उनके साथ के भाइयों को नमस्कार।" एक समूह प्रिस्किल्ला और अक्विला के घर में आराधना करता था और एक और समूह है जो इसी प्रकार एक और जगह आराधना करता था।

"फिलुलुगुस और यूलिया और नेर्युस और उसकी बहिन, और उलुम्पास और उनके साथ के सब पवित्र लोगों को नमस्कार।" कुछ लोगों के विचार में फिलुलुगुस और यूलिया पति–पत्नी थे और नेर्युस और उसकी बहिन उनके बच्चे थे। और उलुम्पास उसी परिवार का सदस्य था। यह रोम में विश्वासियों की तीसरी सभा थी। इसके साथ ही पौलुस रोम के विश्वासियों को नमस्कार कहना समाप्त करता है। वह एक और बात कहता है जिसके द्वारा प्रेम का व्यावहारिक प्रदर्शन होता है।

ख) वह प्रेम का प्रदर्शन द्वारा उन्हें नमस्कार कहता है (16:16)

प्रेम ठंडा नहीं सरगर्म और अनुरागी होता है। "आपस में पवित्र चुम्बन से नमस्कार करो, तुम को मसीह की सारी कलीसियाओं की ओर से नमस्कार।" नये नियम में पांच बार कहा गया है– 1 कुरिन्थियों 16:20; 2 कुरिन्थियों 13:12; 1 थिस्सलुनीकियों 5:26; 1 पतरस 5:14। पूर्वी देशों में चुम्बन सम्मान और लगाव का प्रतीक है। पौलुस का अर्थ था प्रेम, सम्मान, सहभागिता और सरगर्मी।

बिशप मूल लिखते हैं, "यह भावी समय की होनेवाली मित्रता है जिस सदाकाल के लिए रखा जाएगा जब मनुष्य अनन्त होगा परन्तु उस समय मसीह में मनुष्यों की एकता हमारे वर्तमान विचारों के पार होगी।"

प्रेम की महान विजय

16:17–20

I. बहकावे से बचना (16:17–19)

क) बाहरी बहकावा (16:17–18)

1. झूठे शिक्षकों स्वयं के विश्वासघाती (16:17)
   i. उन्हें पहचानें (16:17)
   ii. उनका त्याग करें (16:17)

2. झूठे शिक्षकों का व्यवहार (16:18)

   (1) उनका ईश्वर (16:18)
   (2) उनका लक्ष्य (16:18)

ख) भीतरी बहकावा (16:19)

1. कलीसिया की सामर्थी गवाही (16:19)
2. कलीसिया की भयानक दुर्बलता (16:19)

II. शैतान से विजय युद्ध करें (16:20)

क) शैतान को मारें

ख) पवित्र जनों को आशीष दें।

झूठी शिक्षाओं से विश्वास की नींव ढानेवालों को पहचाने और उनसे बचें। आरंभ से ही कलीसिया में झूठी शिक्षा का संकट रहा है। गलातिया की कलीसियाओं में विधिपालन की शिक्षा थी। कुलुस्से की कलीसिया में ज्ञानवाद, थिस्सलुनीके की कलीसिया में अन्तिम समय की झूठी शिक्षा। पतरस, यूहन्ना और यहूदा; पौलुस के साथ कलीसियाओं में सत्य को गिराने की शिक्षाओं का विरोध करते हैं। अतः रोम जैसे

विश्व आकर्षण में झूठे शिक्षकों की आंखें लगी थीं। विश्वासी की शिक्षा पर शैतानी प्रहार के संबन्ध में पौलुस दो बातें कहता है।

I. हमें बहकावे के प्रति सतर्क रहना है (16:17–19)

झूठी शिक्षा दबे पांव आती है। वह दुर्बल स्थान से पहले बूंद बूंद टपकती है फिर बाढ़ का रूप धारण करती है।

क) बाहरी बहकावा (16:17–18)

झूठे शिक्षक (1) स्वयं से विश्वासघात करते हैं। उन्हें पहचान कर उनका त्याग करें। बहकाना सहन करना प्रेम की सीमा में नहीं आता है। पद 17, "अब हे भाइयो, मैं तुम से विनती करता हूं, कि जो लोग उस शिक्षा के विपरीत, जो तुम ने पाई है, फूट डालने और ठोकर खिलाने का कारण होते हैं, उन्हें ताड़ लिया करो और उनसे दूर रहो।"

"फूट" गलातियों 5:20 में भी यही शब्द आया है और यह शरीर का काम है। इसका निकट संबन्ध झूठी शिक्षा से है। रोमियों 11:9 में इसे "फंदा" कहा गया है। यह सही शब्द है क्योंकि फंदा धोखे से लगाया जाता है और जानवर को अनजाने में फंसा लेता है। यही ठोकर का कारण है।

झूठे को पकड़ने के लिए किसी भी शिक्षा को परमेश्वर के सत्य के साथ रखें अर्थात प्रेरितों की शिक्षा के साथ (प्रेरितों के काम 2:42)। ऐसे में झूठी शिक्षा उन्नति नहीं कर पाएगी।

कलीसिया का काम उससे विवाद करना और उसका परदाफ़ाश करना नहीं है। "उनसे दूर रहो।" उनसे विवाद करने में विश्वासी स्वयं भटक सकता है क्योंकि वे अत्यधिक धूर्त होते हैं।

"उन्हें ताड़ लिया करो और उन से दूर रहो।" सामान्य विश्वासी के लिए यह एक व्यावहारिक और बुद्धिमानी का नियम है। आज भी अनेक जन फंदे में फंसते हैं। एक परिवार ऐसे ही "वाचटावर" के फंदे में फंसे गया था। अब वे उनके दास हैं।

(2) झूठे शिक्षकों का व्यवहार कैसा होता है। पौलुस उनके ईश्वर और लक्ष्य को प्रकट करता है। पद 18, "क्योंकि ऐसे लोग हमारे प्रभु मसीह को नहीं, परन्तु अपने पेट की सेवा करते हैं; और चिकनी चुपड़ी बातों से सीधे–सादे मन के लोगों को बहका देते हैं।"

झूठे शिक्षकों की प्रेरणा उनकी भ्रष्ट रूचि है। पौलुस कहता है वे अपने पेट के पुजारी हैं। फिलिप्पियों 3:18–19 में वह लिखता है, "क्योंकि बहुत से ऐसी चाल चलते हैं, जिनकी चर्चा मैं न तुम से बार बार की है, और अब भी रो रोकर कहता हूं कि वे अपनी चाल चलन से मसीह के क्रूस के बैरी हैं। उनका अन्त विनाश है, उनका ईश्वर पेट है, वे अपनी लज्जा की बातों पर घमण्ड करते हैं और पृथ्वी की वस्तुओं पर मन लगाए रहते हैं।"

वे मीठी–मीठी बातें करते हैं और भोले लोगों को धोखा देते हैं। वे चाटुकारी करते हैं। उनकी भाषा उत्तम शैली की होती है। परन्तु वे प्रभु यीशु के सेवक नहीं हैं। उनका प्रभु हमारा प्रभु यीशु नहीं है।

ख) भीतरी बहकावा (16:19)

अभी तक तो रोम की कलीसिया में यह समस्या नहीं उत्पन्न हुई थी क्यांकि पौलुस (1) उनकी सामर्थी गवाही का उल्लेख करता है– पद 19, "तुम्हारे आज्ञा मानने की चर्चा सब लोगों में फैल गई है।" पौलुस उनकी आज्ञाकारिता के विषय तीन बार कह चुका हैः 1:5, 5:19 और 6:16। आज्ञापालन हमारी सेवा, हमारे उद्धार, और हमारी पवित्रता का केन्द्र है।

आज्ञापालन रोमी संस्कृति का एक भाग था जो कलीसिया में भी आ गया था। इस कारण पौलुस प्रसन्न था। परन्तु वह उन्हें चिताता है। (2) उनकी एक भयानक दुर्बलता थी। वे विश्व की सांसारिकता और आधुनिकता के केन्द्र में थे और कलीसिया में इसका प्रवेश कर जाना अति सुलभ था। अन्यजातियों में कुकर्म आराधना का भाग था और विश्वासी ऐसी ही पृष्ठभूमि से आए थे। अतः पौलुस कहता है– पद 19, "तुम्हारे आज्ञा मानने की चर्चा सब लोगों में फैल गई है, इसलिये मैं तुम्हारे विषय में आनन्द करता हूं, परन्तु मैं यह चाहता हूं कि तुम भलाई के लिये बुद्धिमान परन्तु बुराई के लिये भोले बने रहो।"

केवल परमेश्वर का अनुग्रह उनके पिछले जीवन को धोकर दूर कर सकता था। मूसा का उदाहरण सबसे अच्छा है। परमेश्वर ने उसे मिस्र से निकालने में एक पल लगाया परन्तु उसमें से मिस्र अर्थात मिस्र

का प्रभाव निकालने में 40 वर्ष लगे। वह हठीले घमण्डी मिस्री से एक आत्मविश्वासी, दीन एवं विनम्र मनुष्य बना।

परमेश्वर अपने भक्तों के साथ ऐसा ही करना चाहता है। इतिहास से सिद्ध होता है कि पौलुस रोम के विश्वासियों के चेतावनी देने में कि वे भीतरी बहकावे से सावधान रहें सर्वथा सही था।

II. शैतान से विजय युद्ध करें (16:20)

"झूठ का पिता" शैतान मनुष्यों में व्याप्त छल के तन्त्र के पीछे है। मानवजाति के विरुद्ध शैतान के षडयंत्र में पूर्णव्यापी छल है। वह धार्मिक भ्रम का रचयिता है। जिनके द्वारा पतित मनुष्य अपनी नंगी आत्मा को ढांकता है। अतः पौलुस झूठे शिक्षकों से सीधा शैतान पर आता है जो उनकी शिक्षाओं का स्रोत है। वह सर्प का सिर लोहे की एड़ी से कुचलता है।

क) शैतान को मारो (16:20)

परमेश्वर शैतान को अनुमति देता है कि वह मानवजाति पर अपनी बुरी चाल चले। यह अपराध का भेद है। परन्तु परमेश्वर चूकता नहीं है। वह अपनी योजना के अनुसार चलता है। वह सर्वज्ञानी है। शैतान कलह और विभाजन करवाए परन्तु परमेश्वर शान्तिदाता है और पौलुस कहता है, पद 20, "शान्ति का परमेश्वर शैतान को तुम्हारे पांवों से शीघ्र कुचलवा देगा।" पवित्र जन शैतान पर प्रभु यीशु की अन्तिम विजय (उत्पत्ति 3:15) के सहभागी होंगे।

ख) पवित्र जनों को आशीष दें (16:20)

आशीष और अनुग्रह के आशीर्वाद पाने के लिए हमें शैतान के कुचले जाने की प्रतीक्षा नहीं करना है। हम आज भी उनका आनन्द ले सकते हैं। पौलुस कहता है, "हमारे प्रभु यीशु का अनुग्रह तुम पर होता रहे। आमीन!" वह उसका दूसरा "आमीन" है। पत्र समापन से पहले वह दो बार और "आमीन" कहेगा। ऐसा लगता है कि वह रोम के विश्वासियों से जुदा नहीं हो पा रहा है।

झूठे शिक्षक और शैतान कलीसिया को नष्ट करना चाहेंगे परन्तु परमेश्वर का अनुग्रह पर्याप्त है। हम इस अनुग्रह में जय पाते हैं और जय पाते रहेंगे।

प्रेम का अद्‌भुत साथी

16:21–24

I. परमेश्वर के भक्तों द्वारा भेजा गया नमस्कार (16:21–23)

1. तीमुथियुस
2. लूकियुस
3. यासोन
4. सेसिपत्रुस
5. तिरतियुस
6. गयुस
7. इरास्तुस
8. क्वारतुस

II. परमेश्वर के पुत्र का अनुग्रह (16:24)

इस पत्र को लिखते समय पौलुस कुरिन्थ में था। तीसरी प्रचार यात्रा अन्त में वह शीतऋतु के तीन महीने यूनान में था, अधिकतर कुरिन्थ में अपने मित्र गयुस के घर ठहरा था। वह अपनी यरूशलेम यात्रा की तैयारी में था कि प्रतिनिधियों के साथ एकत्र किया हुआ दान लेकर आए। मकिदुनिया की कलीसियाएं और गलातिया की कलीसियाएं तथा एशिया की कलीसियाएं सब के प्रतिनिधि उसके साथ थे। जिस समय वह इस पत्र का अन्त कर रहा था अनेक प्रतिनिधि उसके साथ थे। कुरिन्थ की कलीसिया ने पौलुस को अत्यधिक कष्ट दिया और अति योग्य भाई वहां थे। कुछ का नाम पौलुस यहां लिखता है।

I. परमेश्वर के भक्तों द्वारा नमस्कार भेजा जाना (16:21–23)

नमस्कार भेजने में सबसे पहला है पौलुस का युवा साथी तीमुथियुस जिसे सब जानते थे और जानते हैं। उसकी माता और नानी धर्मी थे और तीमुथियुस को परमेश्वर के ज्ञान और भय में बड़ा किया था। उसका पिता अन्यजाति का था।

तीमुथियुस लुस्त्रा में था जब पौलुस अपनी पहली प्रचार यात्रा में वहां गया और उसी समय उसका मन फिराव हुआ था (प्रेरितों के काम 14:6, 16:1; 2 तीमुथियुस 1:5)। जब पौलुस वहां अपनी दूसरी प्रचार यात्रा पर आया तब वहां के विश्वासियों ने तीमुथियुस के बारे में पौलुस को बताया कि वह एक होनहार युवक है। पौलुस मरकुस से तो निराश था ही, अतः उसने तीमुथियुस में रूचि ली। यहूदियों के विरोध के कारण और वैसे भी तीमुथियुस आधा यहूदी था, पौलुस ने उसका खतना करवाया और प्रचारक दल में जोड़ा (प्रेरितों के काम 16:3)। उसे कलीसिया ने हाथ रखकर प्रचारक के लिए अलग किया (1 तीमुथियुस 4:14; 2 तीमुथियुस 4:5)। तब से तीमुथियुस पौलुस का निकटतम् एवं सदाकालीन साथी बन गया।

फिलिप्पी की कलीसिया में तीमुथियुस की विश्वासयोग्यता और उत्साह प्रकट हुआ (फिलिप्पियों 2:22)। पौलुस को वहां से जाने के लिए बाध्य किया गया था। अतः पौलुस वहां की नई स्थापित कलीसिया में सेवा के लिए तीमुथियुस को छोड़ गया था। वह पौलुस के साथ बिरिया गया परन्तु पौलुस उसे सीलास के साथ छोड़कर चला गया।

वह पौलुस के पास एथेंस पहुंचा जहां उसे पौलुस ने उसे उत्तर में थिस्सलुनीके की कलीसिया की अगुआई के लिए भेज दिया (प्रेरितों के काम 17:14; 1 थिस्सलुनीकियों 3:2)। इस सेवा के पूरा होते होते पौलुस एथेंस से कुरिन्थ आ गया था। तीमुथियुस अब कुरिन्थ आ गया था इसलिए हम थिस्सलुनीके की कलीसिया को लिखे पौलुस के दोनों पत्रों में तीमुथियुस का नाम देखते हैं।

तीमुथियुस के अगले पांच वर्ष अज्ञात हैं। वह इफिसुस में कुछ समय पौलुस के साथ रहा होगा–तीसरी प्रचार यात्रा में। उस समय पौलुस ने तीमुथियुस को कुरिन्थ भेजा और उसके इफिसुस लौटने की प्रतीक्षा की (1 कुरिन्थियों 4:17, 16:10)। जब पौलुस इफिसुस में सेवा करके कुरिन्थ आया उस समय तीमुथियुस उसके साथ था जैसा हम यहां देखते हैं। वह रोम को नमस्कार भेजने में सहभागी है। मकिदुनिया और यूनान में सेवा के बाद पौलुस जब यरूशलेम लौट रहा था तब तीमुथियुस पौलुस के लिए त्राओस में प्रतीक्षारत दल में था (प्रेरितों के काम 20:3–6)।

तीमुथियुस एक बार फिर विलोप हो जाता है और पौलुस के पहले बन्दीकरण में पौलुस के साथ रोम में दिखाई देता है। इसी समय पौलुस ने फिलिप्पी, कुलुस्से की कलीसियाओं और फिलेमोन को पत्र लिखे थे। रिहाई के बाद पौलुस और तीमुथियुस ऐशिया में गए। पौलुस तीमुथियुस को इफिसुस में छोड़कर मकिदुनिया चला गया कि वह इफिसुस की अव्यवस्था को संभाले (2 तीमुथियुस 1:4)। उसके उत्तरदायित्व बहुत गंभीर थे कि पौलुस उसकी स्थिरता के प्रति चिन्तित हो, अपने प्रिय मित्र से मिलना चाहता था (2 तीमुथियुस 4:9, 21)। यह बड़ी रोचक बात है कि पौलुस के अन्तिम लिखित वचन तीमुथियुस के ही लिए हैं। अतः इसमें आश्चर्य की बात नहीं कि रोम की कलीसिया को नमस्कार कहने में पौलुस सबसे पहले इस शिष्य का नाम लेता है।

"मेरे सहकर्मी तीमुथियुस का, और मेरे कुटुम्बी लूकियुस और यासोन और सोसिपत्रुस का तुम को नमस्कार।" ये तीनों पौलुस के गांव वाले थे। लूकियुस प्रेरितों के काम 13:1 का लूकियुस कुरेनी हो सकता है। वह भविष्यद्वक्ता और शिक्षकों में से एक था जिसने पौलुस और बरनबास को सेवा क्षेत्र में भेजा था। यासोन ने पौलुस और सीलास को अपने घर ठहराया था जब वे पहली बार सुसमाचार लेकर थिस्सलुनीके गए थे। विरोधियों ने उसके घर में घुसकर उसे भी घसीटकर बाहर निकाला तथा न्यायाधीश के पास ले गए थे परन्तु वह ज़मानत पर छूट गया था (प्रेरितों के काम 17:5–9)। सोसिपत्रुस और प्रेरितों के काम 20:4 का सोपत्रुस एक ही व्यक्ति है। यदि ऐसा ही है तो वह बिरीया का विश्वासी है जिसे पौलुस यरूशलेम ले जा रहा था।

"पत्री के लिखनेवाले तिरतियुस का... नमस्कार।" ऐसा प्रतीत होता है कि पौलुस प्रथम प्रचार यात्रा में पंफूलिया में आंखों के रोग से पीड़ित हुआ था जिसके कारण वह अंधा हो गया था (गलातियों 4:13–15)। यही कारण था कि वह पत्र लिखने के लिए किसी की सहायता लेता था और पौलुस का शिष्टाचार था कि वह लेखक को अपना नमस्कार भेजने की अनुमति देता था क्योंकि यदि पौलुस उसका नमस्कार लिखता तो वह मशीन के समान ही होता।

"गयुस जो मेरी और कलीसिया की पहुनाई करनेवाला है, उसका तुम्हें नमस्कार। इरास्तुस जो नगर का भण्डारी है, और भाई क्वारतुस का तुम को नमस्कार।" प्राचीन रोमवासियों के तीन नाम होते थे। उसका अपना नाम तब दूसरा नाम तब परिवार का नाम। कभी कभी किसी उपलब्धि के कारण एक और नाम दे दिया जाता था। वह 1 कुरिन्थियों 1:14 का गयुस हो सकता है जिसे पौलुस ने अपने हाथों से बपतिस्मा दिया था।

इरास्तुस नगर का भण्डारी था। वह एक महत्वपूर्ण व्यक्ति था। यह वही इरास्तुस है जिसे पौलुस ने इफिसुस से तीमुथियुस के साथ मकिदुनिया भेजा था (प्रेरितों के काम 19:22)। इस समय वह कुरिन्थ में था (2 तीमुथियुस 4:20)। यही उसका निवास स्थान था। क्वारतुस के बारे में हम इतना ही जानते हैं कि वह एक विश्वासी भाई था परन्तु इसमें सरगर्मी का कैसा भण्डार था। अनुग्रह के बन्धन में बंधने के कारण वे हमारे कैसे प्रिय हो जाते हैं। यह हमारे सगे संबन्धियों से अधिक अर्थ रखते हैं।

पौलुस नमस्कार भेजकर विश्वासी परिवार को मसीह प्रेम के बन्धन में बांधता है।

II. परमेश्वर के पुत्र का अनुग्रह (16:24)

पौलुस पद 20 का आशीर्वाद दोहराता है, "हमारे प्रभु यीशु मसीह का अनुग्रह तुम पर होता रहे।" प्रभु यीशु का अनुग्रह 2 कुरिन्थियों 8:9 में प्रकट है, "तुम हमारे प्रभु यीशु मसीह का अनुग्रह जानते हो कि वह धनी होकर भी तुम्हारे लिये कंगाल बन गया, ताकि उसके कंगाल हो जाने से तुम धनी हो जाओ।"

वह स्वर्ग से अपना अनन्त अनुग्रह बरसाना नहीं छोड़ता है। प्रेम के अद्‌भुत साथियों में वह सबसे अधिक महान है।

उपसंहार

16:25–27

I. परमेश्वर के काम की घोषणा (16:25–26)

क) इस काम को करने की क्षमता उसमें है (16:25)

ख) इस काम का करना उसका उद्‌देश्य है (16:25–26)

1. नये नियम के भक्तों पर अलौकिक प्रकाशन (16:25)
2. पुराने नियम के भक्तों से छिपा था (16:27)

पौलुस अपने पत्र के अन्त में है। वह आशीर्वाद देता है और भक्तों को परमेश्वर और उसके मार्गों पर विचार करने का प्रोत्साहन देता है। शायद वह ये शब्द स्वयं लिख रहा था। एक अति उत्तम स्तुतिगान जो रोमियों का ध्यान परमेश्वर के कार्यों और बुद्धि की ओर आकर्षित करता है।

I. परमेश्वर के काम की घोषणा (16:25–26)

उद्धार आरंभ से अन्त तक परमेश्वर का काम है। यह काम प्रभु यीशु ने कलवरी पर पूरा कर दिया था इसमें मनुष्य और कुछ नहीं जोड़ सकता है।

क) परमेश्वर में अपने काम को करने की क्षमता है (16:25)

पौलुस सीधा मुख्य विषय पर आता है, "अब जो तुम को ... स्थिर कर सकता है।" पत्र के आरंभ में पौलुस कहता है– 1:11, "मैं तुम से मिलने की लालसा करता हूं कि तुम्हें कोई आत्मिक वरदान दूं जिससे तुम स्थिर हो जाओ..." पौलुस मानता है कि केवल परमेश्वर ही कर सकता है। जिस प्रकार पापी जन प्रभु यीशु के उद्धारक ज्ञान में अनुग्रह के द्वारा प्रवेश करते हैं उसी प्रकार परमेश्वर की बातों में उन्हें स्थिर एवं स्थापित करनेवाला केवल परमेश्वर का अनुग्रह ही है।

आत्माएं बचना एक महान कार्य है परन्तु उन्हें फिर आकर देखना कि वे स्थिर हैं तो वह और भी अधिक महान बात है। यह केवल परमेश्वर का काम है। इसका सामर्थ्य परमेश्वर में निहित है। और इसे रोकने के लिए शैतान के पास सामर्थ्य नहीं, संसार में सामर्थ्य नहीं, न ही शरीर की दुर्बलताओं से उसमें अवरोध उत्पन्न होता है। फिलिप्पियों 1:6 में पौलुस कहता है, "मुझे इस बात का भरोसा है कि जिसने तुम में अच्छा काम आरम्भ किया है, वही उसे यीशु मसीह के दिन तक पूरा करेगा।"

ख) यह परमेश्वर का उद्देश्य है कि अपने काम को स्थिर करे (16:25–26)

यह सुसमाचार और पत्रियों में परमेश्वर ने प्रकट किया है वरन् पुराने नियम में भी निहित है और शुभ संदेश है। परमेश्वर की उद्देश्य पूर्ति रोकी नहीं जा सकती क्योंकि (1) यह नये नियम में परमेश्वर स्वयं कहता है। पौलुस कहता है मेरा सुसमाचार अर्थात पत्रियां और प्रभु यीशु का प्रचार अर्थात सुसमाचार।

पौलुस का सुसमाचार मनुष्यों की शिक्षा से नहीं था (गलातियों 1:11)। उसका सुसमाचार सीधा ईश्वरीय प्रकाशन से था। इस कारण परिपूर्ण था। अतः वह कहता है कि यह प्रभु यीशु के प्रचार के अनुसार है।

पौलुस की शिक्षाएं भी आरंभिक कलीसिया की शिक्षाओं के अनुसार थीं कि प्रभु यीशु परमेश्वर का पुत्र है और एकमात्र उद्धारकर्ता है। सत्य परमेश्वर की शिक्षाओं में ही था– यूहन्ना 15। अतः पौलुस के सुसमाचार की जड़ें प्रभु यीशु में ही थीं। इसी कारण वह कहता है, "मसीह में।"

परमेश्वर की उद्देश्य पूर्ति रोकी नहीं जा सकती क्योंकि (2) यह पुराने नियम में निहित है। अतः यह कहना सर्वोचित है कि पुरानी बात नये में प्रकट की गई हैं और नई बात पुराने में ही थी। जिन बातों को पौलुस भेद की बात कहता है वे नये नियम में प्रकट हुई थीं परन्तु पुराने नियम में अव्यवस्थित थीं।

पद 25–26, "अब जो तुम को मेरे सुसमाचार अर्थात यीशु मसीह के संदेश के प्रचार के अनुसार स्थिर कर सकता है, उस भेद के प्रकाश के अनुसार जो सनातन से छिपा रहा, परन्तु अब प्रगट होकर सनातन परमेश्वर की आज्ञा से भविष्यद्वक्ताओं की पुस्तकों के द्वारा सब जातियों को बताया गया है कि वे विश्वास से आज्ञा माननेवाले हो जाएं।"

नये नियम का सबसे महत्वपूर्ण और महान भेद यह था– यहूदी और अन्यजातियों का विश्वासियों की देह में जोड़ा जाना अर्थात कलीसिया की स्थापना। परन्तु स्थिर न किए जाने तक कोई उसे स्थिर नहीं कर सकता। पौलुस अवरोधों को देख सकता था जो कलीसिया के चारों ओर उपस्थित थे। रोम के विश्वासियों को स्थिर करने के लिए परमेश्वर के सामर्थ्य के अतिरिक्त और कुछ नहीं था। अतः इस भेद से संबन्धित प्रचार की गहन आवश्यकता थी जिसके विरोध में जोशिले अविश्वासी यहूदी प्रयासरत थे क्योंकि वे केवल मूसा का मान रखते थे ओर पतरस के शब्दों में वर्तमान सत्य (2 पतरस 1:12) से घृणा करते थे।

परमेश्वर का उद्देश्य था, भक्तों को इस भेद में स्थिर करें। यह भेद भविष्यद्वक्ताओं के धर्मशास्त्र में प्रकट हुआ था। ये भविष्यद्वक्ता नये नियम के थे जिनके द्वारा यह सत्य प्रकाशित किया गया था और लिखा गया था। बाइबल, विशेष करके नये नियम के द्वारा परमेश्वर भक्तों को सिद्ध करने और अपनी कलीसिया को स्थिर करने की अपनी योजना को पूरा करता है।

परमेश्वर अनन्त है और युगानुयुग अपने लक्ष्यों को सिद्ध करता है। विश्वासी निर्बल और भंगूर हो सकता है परन्तु परमेश्वर सामर्थी है। कलीसिया दुर्बल और विभाजित दिखाई देती है परन्तु वह सर्वशक्त परमेश्वर से जुड़ी है। सब कुछ रह जाएगा। परन्तु परमेश्वर के कार्य सिद्ध होकर रहेंगे। अब पौलुस एक ही बात से अन्त करता है– अनन्त परमेश्वर की बुद्धि।

II. परमेश्वर की बुद्धि की घोषणा (16:27)

"उसी एकमात्र बुद्धिमान परमेश्वर की यीशु मसीह के द्वारा युगानुयुग महिमा होती रहे। आमीन।"

इससे हमारे विचार परमेश्वर की ओर आकर्षित होते हैं जिससे मनुष्य के पतन को पहले से देखा और उसके लिए जगत की नींव पड़ने से पहले प्रबन्ध भी किया। हमें पहले से जाना और अपने राज्य में हमसे प्रेम किया और ऐसा प्रबन्ध किया कि हर बात हमारे लिए भलाई और उसकी अनन्त महिमा को उत्पन्न करे। इससे हमारे विचार उसके प्रेमी पुत्र, हमारे धन्य महिमामय उद्धारकर्ता, प्रभु यीशु मसीह की ओर आकर्षित होते हैं। हमारे विचार, हमारे मन और हमारी इच्छा को प्रभु में केन्द्रित करते हुए पौलुस अपनी कलम रख देता है।